ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क ३७

अतीत के कंपन

[ऐतिहासिक कहानियाँ]

श्री आनन्दप्रकाश जैन

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन, एम० ए०

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मंत्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

द्वितीय संस्करण
१९५६ ई०
मूल्य तीन रुपया
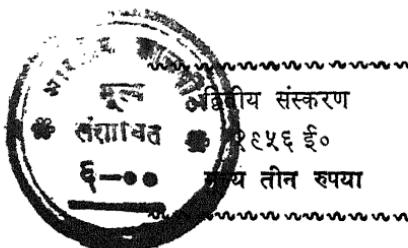
मुद्रक
विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि०,
मानमन्दिर, बनारस

• सुमनोंकी सुगंधसे लोग पौधेके महत्त्वका अनुमान लगाते हैं, किन्तु मालीके परिश्रम व स्नेह-को पौधा ही जानता है •

• मैं अपने इन कागज़के फूलोंको 'सरिता-संपादक' श्री विश्वनाथको भेंट करता हूँ, जिन्होंने इनके पौधेको सदा अपने स्नेह-का पोषण दिया है •

—आनन्दप्रकाश जैन

विषय-सूची

लेखककी ओरसे

अनेक मित्र तथा पाठक समय-समय पर मुझसे यह प्रश्न पूछते रहे हैं कि मैंने कहानियाँ लिखना कैसे सीखा और मेरा कहानियाँ लिखनेका ढंग क्या है ? मौखिक रूपसे उन सबको एक सुगठित उत्तर देना मेरे लिए संभव नहीं हो सका; कारण यह है कि वे पूछते हैं 'ढंग', न कि कहानी-कलाके तत्त्व । वे अपनी जगह सही हैं । कहानी-कलाके बारेमें तो जितना एक हिंदीके प्रोफेसर महोदय बता सकते हैं, मैं नहीं बता सकता । वास्तवमें कहानी-कलाका अध्ययन मैंने विधिपूर्वक किया भी नहीं है ।

ढंग बतानेके लिए बात आरंभसे पकड़नी पड़ेगी । बचपनमें विगत श्री देवकीनंदन खत्रीकी चंद्रकान्ता, चंद्रकान्ता संतति, भूतनाथ आदिका शास्त्रोंकी तरह घोट-घोटकर अध्ययन किया, मिस्टर ब्लेकके जासूसी उपन्यास पढ़े और उर्दूमें नदीम सहबाई साहब और तीरथराम फ़िरोज़-पुरी साहबकी लेखनीके चमत्कार भी पर्याप्त संख्यामें चखनेको मिले । मैं—जो यह नहीं मानता कि प्रतिभा जन्मजात होती है—समझता हूँ कि कल्पनाकी सीमाके विस्तृत होनेका श्रेय बहुत कुछ उन पुस्तकोंको जाता है । इनके साथ-साथ जब 'माया'में प्रकाशित बंगाली लेखकोंके हृदय-स्पर्शी चरित्र सामने आते थे, तो मनमें एक स्पष्ट और तीव्र कामना प्राय: हो उठा करती थी—क्या 'माया'में 'आनन्दप्रकाश जैन'के नामके साथ भी कोई रचना कभी आ सकेगी ? लेकिन ये अंगूर बहुत दूरके मालूम होते थे । मेरा ख़्याल है कि आजकी स्थितिका कुछ श्रेय इस तीव्र कामनाको भी जाता है ।

परिवारमें सबसे छोटा होनेके नाते समझिए या बचपनमें माँ तथा बहनका देहान्त हो जानेके बाद पिताजीकी ओरसे निरपेक्ष स्वतन्त्रताका भाव, खुदपसंदी और ज़िदकी आदतोंके रूपमें सदा मन चाहा काम करनेका

स्वभाव मेरे भीतर पनपा मालूम होता है । बड़े भाईके स्नेहने इन दोनोंकी कमीको आन्तरिक रूपसे तो कभी अनुभव नहीं होने दिया, लेकिन बाहरी आदतोंको, संभवतः बराबरीका दरजा समझनेके कारण, ढीली करनेमें वह सफल नहीं हो सके ।

सन्' ४१ के आसपासके समयमें कुछ कविता और अधिक कहानियाँ लिखनेका शौक़ चर्राया शरत् साहित्य और यशपालजीकी प्रगतिशील लेखनीके चमत्कारको निरखने-परखनेसे । शरत्को पढ़ता था, तो शरत् जैसा लिखनेको जी चाहता था और यशपालको पढ़ता था, तो वही लिये वैठा रह जाता था । इसी उधेड़बुनमें उस समय जो लिखा वह न शरत् जैसा बन पाया और न यशपाल जैसा । इसी बीच सन् बयालीसके आन्दोलन का सूत्रपात हुआ और शरत्के 'सव्यसाची' तथा यशपालके 'दादा कामरेड' का अव्यवस्थित अनुकरण करते हुए, मात्र एक बारह बोरका देशी पिस्तौल अपने ट्रंकमें रखनेके 'अपराध'में, नकद दो सालके लिए नप गया और ठाटके साथ मुज़फ्फ़रनगर, मेरठ तथा बरेलीकी ज़िला ज़ेलों तथा लखनऊकी कैम्प जेलका दौरा किया । 'ठाट' मैंने हँसीमें नहीं कहा क्योंकि वास्तवमें यह काल मेरे लिए यूनिवर्सिटी-काल सिद्ध हुआ । राजनीतिकी विविध विचारधाराओंका अध्ययन करनेका जितना 'अवकाश' वहाँ मिला उतना शायद विश्वविद्यालयोंमें नहीं मिलता होगा—कम-से-कम यह तो सही है ही कि वह वातावरण वहाँ नहीं मिलता ।

धर्मशास्त्रोंका असर मेरे दिमाग़पर बुरी तरह छाया हुआ था । यहाँ तक कि जेल जानेसे पहले यह मेरा संकल्प था कि बिना घंटे भर शास्त्रों का स्वाध्याय किये अन्न मुँहमें नहीं डालूँगा ! लिहाज़ा टोडरमलजीका 'मोक्ष-मार्ग प्रकाश' लगभग ज़बानी रट गया था । यहाँ जेलमें राजनीतिके अध्ययनने उस सारे प्रभावको तितर-बितर कर दिया । मानव-समाज तथा व्यक्तिके जीवनमें समाजकी अर्थ-व्यवस्था और राजनीति कितना भारी असर डालती हैं, धर्मकी उत्पत्ति तथा विकास आदिसे इन मूल आधारोंका कितना मौलिक संबंध है, यह सब कुछ जानबूझकर, फिर

आँख मूँदकर हर बात पर विश्वास कर लेनेको तबीयत नहीं चाही। हर बातको बुद्धिके द्वारा परखनेकी एक सीख, कहना चाहिए आधार, वहाँ मिला।

बाहर आकर दसवींका इम्तहान दिया और बावजूद सारे साल, 'आउट आफ़ कोर्स' अध्ययन करते रहनेके भी, परीक्षकोंने ग़लतीसे दूसरी श्रेणीमें पास कर दिया! समझा कि यह सब सामान्य ज्ञानकी करामात है और आगे जीवनभर यही काम देगा, इसलिए उसीको सार्थक करनेवाली पुस्तकों-का पल्ला और कसकर थाम लिया। निश्चय ही इन पुस्तकोंमें समाजवाद और साम्यवादके मूल सिद्धान्तोंका गूढ़ विवेचन था और मैं अपनी समस्त बुद्धिसे संसारके गोरखधंधोंकी बारीकियोंको समझनेका यत्न कर रहा था।

कवि अथवा कहानीकार बननेका विचारतक उस समय दिमाग़में नहीं था। अन्य सारा घरबार लूट ले जानेमें भारतीय पुलिसने उन 'महान्' कृतियों को भी नहीं छोड़ा, जो शरत्की याद दिलाया करती थीं—शरत्के शिष्य उन्हें चाहे होंठोंपर विकृत मुसकानके साथ ही पढ़ते, यह दूसरी बात है! लेकिन यह बात तो स्वयंसिद्ध थी ही कि पुलिसवालोंके हृदयपर उन रच-नाओंका कोई लाभकारी प्रभाव नहीं पड़ा होगा, इसलिए उस समयके भरपूर सरकारी माल-गोदामके अंबारके नीचे वे इस तरह दब गईं कि फिर उनका उद्धार नहीं हुआ।

सन् ४७ तक ऊपर आकाश और नीचे धरती, साथमें दो-चार पुस्तकें तथा ढेर सारी पुस्तकें पढ़नेकी चाह, यही अपना ठिकाना रहा। जहाँ-तहाँ थोड़े-थोड़े दिन रहकर जमनेकी कोशिश की, लेकिन 'आवारा' लोगों की सूचीमें अपना नाम टँक चुका था। पिताजी चाँदी-सोनेके सट्टेमें सब कुछ गँवाकर परिवारजनोंकी ओरसे पहले ही उदासीन वृत्ति अपना चुके थे और भाई साहब व्यावसायिक चित्रकारीसे ज्यों-त्यों जीवनकी गाड़ीको खींचनेका प्रयत्न कर रहे थे।

सन् '४७ में शादी हो गई, या कहना चाहिए कि संबंधित परिवार-जनोंपर ज़बरदस्ती ज़ोर डालकर कराई गई, क्योंकि पहली बात तो यह है कि एक लड़की 'पसंद' आ गई थी और उससे भी पहली बात दिमाग़में जमा हुआ यह विश्वास कि जब तक शादी नहीं होगी, ठिकानेदार नहीं बना जा सकेगा और आवारगीकी तोहमत सिरपरसे नहीं हटेगी। बहूके लिए सुरक्षित दादीके गहनोंपर नज़र थी, क्योंकि ठिकाना उन्हींसे बन सकता था। ससुराल 'ग़लतीसे' ऐसी ढूँढ़ निकाली थी कि वहाँसे दहेज़के नामपर कुछ लेनेकी बात तो अलग रही, लेनेका विचारतक करना परले सिरेकी हिमाक़त थी।

अब साइनबोर्ड लिखकर जीविका चलानेका प्रयत्न किया। उसमें कुछ कमाया भी, और कमानेसे ज़्यादा खाया। आखिर डेढ़ साल बाद यह स्पष्ट हो गया कि हाथसे जो साइनबोर्ड लिखे जाते हैं, उनसे आकर्षित होकर संबंधित दूकानदारोंके पास ग्राहकोंका खिचकर आना लगभग असंभव है। उसी कालमें, शायद मजबूरीसे, दबी हुई प्रवृत्तियाँ उभरीं, और एक कहानी लिखी 'पिटते कुत्ते'।

हाथसे निकली हुई यह—कहना चाहिए पहली—कहानी 'सरिता'को भेज दी गई। विश्वनाथजीने लेखन-शैलीकी थोड़ी-सी प्रशंसा की, और कहानीको इस आधार पर लौटा दिया कि इसका अंत निराशावादी था—[illegible] था कि यदि अंत बदला जा सके, तो कहानी दोबारा उनके पास भेजी जा सकती है। लेकिन अधिकांश नये-नये सूरमाओंकी तरह यह बात मुझे नहीं रुची और कहानी 'माया'के संपादक महोदयके पास' ४७ के दिसंबर मासकी कहानी प्रतियोगितामें भेज दी गई। कोई सूचना नहीं आई और यह बात लगभग दिमाग़से निकल गई। लेकिन दिसंबर अंक देखना नहीं भूला।

ओह! बचपनसे संजोई तीव्र कामना फलीफूत हो गई थी। 'माया' में 'आनंदप्रकाश जैन'की कहानी छप गई थी! लेकिन...लेकिन उसपर

लेखकका नाम नहीं था ! ! मुझे आश्चर्य है कि उस समय मैं सीधा डाक्टरके पास क्यों नहीं गया, क्योंकि ब्लड प्रेशर संभवतः सबसे ऊँचे दरजेपर था। एक करारी चिट्ठी 'माया'के संपादक महोदयको लिखी। कुछ दिनों बाद बड़ा शान्तिपूर्ण उत्तर आया: "पिटते कुत्ते'के लेखक आप ही हैं इसमें हमें संदेह है। इसी कारण आपका नाम उस कहानीपर न छपा। आप फिर लिखें कि क्या वह कहानी सचमुच आपही की है ? आपका पत्र आनेपर हम आपको समुचित उत्तर देगें।"

हिंदीके लेखकोंके साथ ये बातें अवश्यंभावी रूपसे बीतती हैं यह बात कुछ-कुछ सुन रखी थी, लेकिन उस कामनाको क्या कहिए, जो दिलमें छिपी पड़ी थी। बहुत कुछ तर्क-वितर्कोंके साथ संपादक मायाको लिखा कि उन्हें चोरीकी कहानीको साहित्यके ठेकेदारकी तरह नहीं छापनी चाहिए थी, लौटा देनी चाहिए थी, या छापनेसे पहले यह बात पूछनी चाहिए थी। लेकिन उनका उत्तर निष्काम भावके साथ चुप्पीमें मिला।

प्रकाशकोंकी ओरसे संभव इस व्यवहारसे क्षुब्ध होकर स्वयं एक पत्रिका 'कल्पना' मेरठसे निकाली। जो दिमाग़में आया लिखा। शैली अधिकतर व्यंग्यात्मक थी। अधिकांश बड़े लेखकोंके पास कुछ रचनाएँ भेजनेका अनुरोध भेजा। लेकिन कुछ दूर चलकर ही मालूम हुआ कि रचनाओंकी कुछ क़ीमत नक़द दामोंमें होती है और बिना इसके अच्छे लेखकोंकी रचनाओं का मिलना कठिन है। 'कल्पना' की योजना बनाते समय न यह व्यय ही जोड़ा गया था और न उसके प्रचारका व्यय ही जोड़ा गया था। फलतः छः महीने बाद वह ठप हो गई।

अब लिखनेकी ओरसे, [illegible] ओरसे, और प्रकाशकोंकी ओरसे मैं बिल्कुल निराश था। लिखनेका ख़्याल तक भी छोड़ देनेका विचार था। लेकिन 'कल्पना'के कुछ प्रशंसक मित्रोंने क़लमकी तारीफ़ कर करके लिखने तथा लेख भेजनेको प्रोत्साहित किया। इन मित्रोंमें श्री काशीराम 'विप्र'—जो अब एक सफल चिकित्सक बन गये हैं—का नाम उल्लेखनीय है।

पहली कहानी 'सांग' लिखी और इस बार फिर 'सरिता' को भेज दी गई। एक मासतक प्रतीक्षा करनेके बाद लिखा कि क्या रहा, तो उत्तर आया : 'विचार हो रहा है।' सोचा कि उसके लिए रद्दीकी टोकरी बन रही होगी। लेकिन कुछ ही दिनों बाद एक वाउचर मिला। उस वाउचर पर पचास रुपयोंके पारिश्रमिककी राशि अंकित थी और टिकट लगाकर मेरे हस्ताक्षर कर देनेकी अपेक्षा की गई थी।

जीविकाके लिए एक सहायक आधार और लिखनेके लिए एक सक्रिय प्रोत्साहन मिलनेपर लिखनेका क्रम चल निकला। पढ़नेके ज़मानेमें इतिहासमें कमज़ोर रहते हुए भी वही एक सबसे हल्का विषय मालूम होता था। लेकिन बादमें राजनीति अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोणने इतिहासकी गतिको समझनेमें भारी मदद दी। अब इस धारामें दूसरी कहानी 'महावतखाँ' जब सरितामें बहुत पसंद की गई, तो यह धारा भी साथमें लग गई। इसके बादकी इस धारा-संबंधी कुछ कहानियाँ इस पुस्तकमें आपके सामने हैं ही। प्रस्तुत संग्रहकी अनेक कहानियाँ अपने मूल रूपमें 'सरिता'में ही छपी थीं। मैं 'सरिता'के संचालकोंका कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे अनुमति प्रदान की कि मैं इन्हें भारतीय ज्ञानपीठको प्रकाशनार्थ उपलब्ध कर दूँ।

हो सकता है कि मेरे अब तकके जीवनके इस विहंगावलोकनमें आपको कोई रस न आया हो। लेकिन 'ढंग' इसके बिना बताया नहीं जा सकता। आज भी हिंदीमें लिखना प्रारंभ करनेवाले लेखकके लिए परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं हैं। अधिकांश बड़े-बड़े पत्र प्रारंभिक लेखकोंको घास नहीं डालते, और यदि कभी-कभी डालते भी हैं तो बहुत एहसान और नखरेके साथ, और दाना तो उस घासमें प्रायः होता ही नहीं! यह बात नहीं कि उनका ही सारा क़सूर है। कई बातें इसमें बाधक हैं: हिंदीमें पाठकोंकी संख्या तो बहुत है, लेकिन खरीदकर पढ़नेवालोंकी संख्या बहुत कम है! माँगकर पढ़नेकी आदत यहाँ बहुत अधिक प्रचलित है। दूसरी बात है हिंदीके अधिकांश लेखकोंमें जीवनके प्रति प्रगतिशील और वैज्ञानिक दृष्टिकोणका अभाव। आज भी अनेक चोटीके लेखक 'नील गगन'में उड़नेवाले साहित्य-

का सृजन करते हैं, जिनका मनुष्यकी मूल समस्याओं और पाठकके तात्कालिक मनोरंजनसे कोई विशेष संबंध नहीं होता। हो सकता है कि इसी कारण साहित्यकी अपेक्षा सिनेमाके टिकट अधिक खरीदे जाते हों। एक छोटे-से लेखककी हैसियतसे, साहित्यके न खरीदे जानेमें, मैं हिंदीके सामयिक साहित्यमें स्वस्थ किंतु तीव्र मनोरंजनके साथ-साथ मानव जीवनको प्रगतिकी दिशा दिखानेवाले वैज्ञानिक दृष्टिकोणका अभाव समझता हूँ। आध्यात्मिकता—इस जीवनसे परे किसी कल्पित जीवनमें सुख पाने और देने—का प्रलोभन ही उनका पीछा नहीं छोड़ पाता।

इस सब कथनावलीके साथ, बहुत थोड़ेमें ही अपने लिखनेका ढंग मैं आसानीके साथ बता सकता हूँ। मैं बहुत इतमीनानसे, पात्रों तथा वातावरणकी स्वाभाविकताका विचार रखते हुए, एक विचारोत्तेजक कथानककी खिचड़ी अपने दिमाग़में पकाता हूँ। इस कथानकके मूल पात्रोंके सिर मैं उन सिद्धांतों और विज्ञानसम्मत दृष्टिकोणोंका प्रतिपादन करनेका काम मढ़ता हूँ, जो न केवल कहानीमें ही उन पात्रोंके चरित्रको उठा देते हैं, बल्कि पाठकोंको जीवनके बारेमें तर्कसम्मत विचार भी देनेका काम करते हैं। अब चीज़ यही रह जाती है कि ये सिद्धान्त, विज्ञानसम्मत दृष्टिकोण और तर्कसम्मत विचार मैं कहाँसे लाता हूँ? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिए ही मैंने अपने जीवन-क्रमका एक हल्का-सा आभास आपको दिया है। अपनी आँखें खुली रखिए, जीवनमें चारों ओर, काममें व्यस्त रहते हुए भी, आपको यथार्थ जीवनके ऐसे चरित्र मिलेंगे, जिनका जीवन विरोधाभासोंसे भरा हुआ है। जब ऐतिहासिक पात्र आजके सामाजिक जीवनके इन विरोधाभासोंका निरूपण अपने समयकी परिस्थितियोंमें सफलताके साथ कर जाते हैं, तो न केवल पाठकोंको वह अधिक आकर्षक प्रतीत होता है, बल्कि वे जीवनकी गहराईमें कुछ अधिक उतरकर सोचनेके लिए मजबूर हो जाते हैं।

मैं पाठकोंको इस उलझनमें नहीं डालना चाहता कि प्लाट अकस्मात् मेरे दिमाग़में ईश्वरीय प्रकाशकी तरह फूट पड़े। ऐसा अनेक बार हुआ है कि केवल शीर्षकोंके आधारपर भी प्लाट बन गये हैं और खूब इतिहास

उलटने-पुलटनेपर भी बने हैं, लेकिन इन सबके पीछे एक निश्चित व बौद्धिक दृष्टिकोण था, जिसके सहारे मैं स्वयं सुखसे जी रहा हूँ और दूसरोंको सुखसे जीते देखना चाहता हूँ। कहानीका काम केवल मनोरंजन करना नहीं है, कुछ असाधारण तथ्योंका निवेदन करना है, कुछ देना है। कहानी, उसके पात्र, उसका कथानक, उसकी रोचकता, ये सब माध्यम हैं।

फिर भी यह बात निर्विवाद है कि कहानीका प्रधान गुण मनोरंजन ही है। यदि किसी कहानीमें केवल मनोरंजन ही मनोरंजन है, और कुछ भी नहीं है, तो भी वह कहानी है। मनोरंजन भी पाठकका होना चाहिए स्वयं लेखकका नहीं। अतः बहुत गंभीरतासे लेखकको यह समझनेकी आवश्यकता है कि उसका संभावित पाठक-वर्ग किस प्रकार अधिकसे अधिक मनोरंजन प्राप्त करेगा। मनोरंजन नवीनतासे होता है। पुरानी बातोंको सर्वथा नये रूपमें रखनेसे भी नवीनता उत्पन्न होती है और संभवतः असाधारणतासे भी—यदि उस असाधारणताको स्वाभाविक रूप देनेकी क्षमता लेखकमें है। कहानीमें स्थापित घटनाचक्र तथा पात्रोंकी मानसिक क्रिया-प्रतिक्रियामें जितनी भी वास्तविकता लाई जा सके उतनी ही स्वाभाविकताकी रक्षा होगी। मेरे विचारमें, स्वयं लेखकके वर्णनकी अपेक्षा यह वास्तविकता संबंधित पात्रोंके वार्तालापों और उनके मानसिक घात-प्रतिघातके फलस्वरूप उनके द्वारा कहानीकी सीमाके भीतर किये गये हलन-चलन और कार्योंसे अधिक आती है। इन्हींके माध्यमसे पाठक कथानकके सबसे अधिक निकट रहकर पूर्ण मनोरंजन प्राप्त कर सकता है।

मेरी चुनी हुई कहानियोंका यह पहला संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ, काशी से प्रकाशित हो रहा है। इसका मुझे गर्व है। ज्ञानपीठके संचालकोंके प्रति मैं आभारी हूँ।

८५ भाटवाड़ा,
मेरठ शहर

—आनन्दप्रकाश जैन

अतीत के कंपन

पत्थरकी आँखें

जिन अफ़गानोंने सदियोंसे किसी बाहरी ताक़तके सामने सिर नहीं झुकाया था, उन्हें भी पैरों तलें रौंदती हुई सिकंदरकी सेनाएँ सन् ३२७ ईसवी पूर्वके वसंतमें खैबरके दर्रेसे भारतमें भूचालकी तरह आ गईं। तक्षशिलाके बूढ़े शासककी इच्छाके विपरीत उसके बेटे आंभीने नजराना लेकर अपने दूत सिकंदरकी सेवामें भेज दिये। सिंधुके तटपर अनेक स्वतंत्र कबीलोंने उसके सामने घुटने टेक दिये। अश्वाक लोगोंने पहले-पहल विदेशी आक्रमणकी आगको झेला। एक बड़ा भारी हत्याकाण्ड मचा। लगभग चालीस हज़ार अश्वाक वीर बंदी बनाकर सिकंदरकी सेनाओंका साजसामान ढोनेपर लगा दिये गये। उनकी सहायताके लिए आये हुए सहस्रों पंजाबी भट एक घेरेमें घेरकर भालोंकी नोकोंपर उछाल दिये गये। रास्तेमें किसीको स्वतंत्र वायुकी साँस लेते हुए छोड़ देना सिकंदरके अदम्य स्वभावके विरुद्ध था।

ऐसी स्थितिमें उस पहाड़ी सिलसिलेके पूर्वतम भागमें स्थित असकान जातिका सरदार मृत्युको चनौती देनके लिए छाती तानकर खड़ा हो गया जीतनेका सवाल नहीं था। खुली आँखों हार जानेका प्रश्न था या आँखें बंद करके। वीर असकानी सरदारने दूसरा मार्ग चुना।

यूनानी भाषामें मस्सगके स्थानपर खला हुआ विनाशका यह नाटक भी बहुत संक्षिप्त रहा। थोड़े ही समयमें असकानोंने अपनी स्वतन्त्रताका मूल्य चुका दिया।

जिस समय यूनानी सैनिक असकानोंकी झोपड़ियोंमें आग लगा रहे थे, लूटपाट कर रहे थे और उनकी स्त्रियोंका सतीत्व नष्ट कर रहे थे, उस समय सिकंदरके शिविरमें आनेवाले मोरचोंका लेखा-जोखा बन रहा

था। परडीकस, सैल्यूकस, फिलिप जैसे सेनापति, और प्रसिद्ध यूनानी नक़्शानवीस नियारकस वहाँ मौजूद थे। सबके सब छातीसे हाथ बाँधे सीधे खड़े थे। सिकंदरके हाथोंमें मोरपंखी क़लम थी। कलमकी नोक झेलमके एक स्थानपर लगी हुई थी। यूनानी विजेता अपना सारा ध्यान नक़्शेपर केंद्रित करके खड़ा था। झेलमका वह स्थान इतना अधिक महत्त्व-पूर्ण था कि जब सिकंदरने अपना हाथ वहाँसे हटाया, तो क़लम जहाँ-की-तहाँ गड़ी रह गई।

सिकंदरके मुँहसे निकला : "पोरस...और उसके बाद ?"

नियारकसने सिर झुकाया। "उत्तरी भारतके आरंभमें पोरसकी शक्ति अभी तक अजेय समझी जाती रही है..."।

सिकंदर क्रुद्ध हो गया। "नियारकस, तुम्हारा ध्यान हमारी तरफ़ नहीं है! हम पूछते हैं : उसके बाद ?"

नियारकसने सिर झुकाया। छातीतक हाथ ले जाकर उसने कहा, "ग़लतीकी माफ़ी चाहता हूँ। उसके बाद चनाब नदी आती है, जिसका पार करना कहीं आसान है। वह पार कर लेनेपर गोसाईं लोगोंके तैंतीस गाँव हैं। इन लोगोंने कभी पोरसकी सत्ता नहीं मानी। ये क़रीब पाँच हज़ार हैं...."।

"वे आत्मसमर्पण कर देंगे। उसके बाद ?" सिकंदरने पूछा।

"उसके बाद कुछ जंगली जातियाँ बसती हैं। फिर रावी नदी आ जाती है और उसे पार कर लेनेपर दूसरा पोरस सामने पड़ता है। लेकिन इसकी ताक़त पहले पोरसके समान नहीं है...."

"उसके बाद ?" सिकंदरने नक़्शेपर अटकी हुई मोरपंखीको देखते हुए पूछा।

"उसके बाद क्षत्रियोंका गढ़ सांगल आता है, जो अधिष्ठात्रोंकी मामली-सी ताक़तके बाद पहली शक्ति है। ये लोग क्षत्रिय हैं। इनकी

संख्या पोरससे तो कम है, लेकिन पिछले इतिहासके अनुसार इनके सिरों-की क़ीमत बहुत सस्ती है। एक छोटी-सी भावना पर पूरी-की-पूरी जाति प्राणोंका मोह छोड़ देती है ...!"

"ठहरो" सिकंदरने हाथसे इशारा किया और नियारकसके बोल जहाँके-तहाँ रुक गये। "तो पहले पोरस...." उसने उँगलियोंके हलकेसे झटकेसे नक़्शेपर गड़ी हुई मोरपंखीको खींच लिया। "...और पोरससे पहले झेलम..." फिर वह कुछ देर विचार करनेके बाद सीधा हो गया। 'सैल्यूकस, झेलमपर तीन पुल बनेंगे। एक ठीक पोरसकी सेनाओंके सामने। परडीकस, तुम बराबर पुल बनाते रहोगे और हर वक़्त रवाना होनेकी तैयारीमें रहोगे। दूसरा पुल उससे पाँच मीलके फासलेपर बनता रहेगा। फिलिप़, तुम वहाँ रहोगे। और तीसरा पुल हम बनाएँगे। नियारकस, यह पहले पुलकी जगहसे बीस मील दूर तुमने एक घने पेड़ों वाला टापू झेलमके बीचमें बताया है। ठीक है, जब तक हम वह टापू पार करके तीन-चौथाई झेलम पार नहीं कर जाते, दुश्मन हमें नहीं देख सकता, और...."

तभी शिविरके बाहर किसी प्रकारका तीव्र वाद-विवाद सब लोगोंके कानोंमें पड़ा। कुपित स्वरमें सिकंदरने परडीकसको इशारा किया। "देखो, कौन हैं। ये लोग तभी शोर मचाते हैं, जब हम इतिहास बनाते हैं!"

परडीकस दो क्षण बाद ही शिविरमें वापस लौट आया। उसके साथ यूनानी लेखक और मूर्त्तिकार एरिस्टोबुलस था। उसने आते ही सिरसे ऊपर हाथ उठाकर सैनिक अभिवादन किया।

"हम देखते हैं तुम अक़्ल खो बैठे हो, एरिस्टोबुलस!"

एरिस्टोबुलसने सिर ऊपर उठाया। "निकाटोरपर देवताओंकी छाया रहे। सैनिक एक देशी स्त्रीको पकड़ लाये हैं। वह असकानी जातिका एक नमूना है। मैं उसकी मूर्त्ति बनाना चाहता हूँ, लेकिन वे..."

"हम तुम्हारी इस भावनाका सम्मान करते हैं, एरिस्टोबुलस । तुम मूर्त्ति बना सकते हो । परडीकस, सैनिकोंसे कह दो कि उस स्त्रीको एरिस्टोबुलसको सौंप दें ।"

× × ×

वसंतके दिन धीरे-धीरे बीतते रहे और यूनानी कलाकार एरिस्टोबुलस पत्थरकी प्रतिमा गढ़नेमें तल्लीन रहा । यूरोपियन सेनाओंके डेरे उखड़ते रहे और लगते रहे । आस-पासके इलाकोंको सर करती हुई विश्वविजेता सिकंदरकी उद्दाम सेनाएँ झेलमके निकट आती गईं । इन व्याघातोंकी चिन्ता न करता हुआ एरिस्टोबुलस अपनी मूर्त्ति बनाता रहा ।

तब एक दिन सिकंदरके शिविरमें प्रश्न उठा : एथेंससे तीन हज़ार मील दूर, प्राचीन भारतके अंतरमें, यूनानियोंके निकाटोरने अपने बाहुबलसे जो उथल-पुथल मचा दी है उसका इतिहास कौन लिखेगा ?

सैल्यूकसने कहा, "नियारकस इस इतिहासको लिख रहा है ।"

सिकंदरने कहा, "नियारकस जिस तरह नक़्शोंकी शुष्क रेखाएँ खींचता है, उसी तरह वह घटनाओंकी नक़्शा-नवीसी करता है । उसके लिखे इतिहासको पढ़कर यूनानी अपने निकाटोरकी महानताको सही-सही नहीं समझेंगे । हम चाहते हैं आनेवाली घटनाओंका वर्णन एरिस्टोबुलस लिखे ।"

तदनुसार एरिस्टोबुलसको सिकंदरके सामने पेश किया गया । उसे देखते ही सिकंदरको याद आया कि वह कोई मूर्त्ति बना रहा था । उसे दूसरी आज्ञा देनेसे पहले सिकंदरने कहा, "एरिस्टोबुलस, बहुत दिनोंसे हम तुम्हारी कलाकृतियोंको नहीं देख सके । हम देखना चाहते हैं कि इस बीच तुमने क्या-क्या बनाया है ?"

एरिस्टोबुलसने हिचकिचाते हुए उत्तर दिया, "इस बीच मैंने केवल एक मूर्ति बनाई है, श्रीमान् ।"

"सिर्फ़ एक !" सिकंदरको आश्चर्य हुआ । "तुमने आजतक किसी

कृतिमें इतने दिन नहीं लगाये। तब वह मूर्त्ति अपूर्व होगी। हम उसे देखेंगे।"

एरिस्टोबुलसकी कलाकृतियोंको देखनेके लिए सिकंदरके शिविरमें ही यूनानके प्रमुख-प्रमुख सामंतोंका एक दरबार लगा। जब सिकंदरने इशारेसे सामने रखे हुए काठके संदूकका पल्ला खोलनेके लिए एरिस्टोबुलसको आज्ञा दी, तो वह बोला, "दासकी प्रार्थना है कि यह मूर्त्ति स्वयं निकाटोरके हाथों अनावृत्त हो।"

"हम इस प्रार्थनाको स्वीकार करते हैं", कहते हुए सिकंदर स्वयं उठा और संदूकके पास जाकर उसने अपने हाथोंसे संदूकका पल्ला खोल दिया। किन्तु जब उसने मूर्त्तिको देखा तो अभी तक पल्लेको थामे हुए उसके हाथ जहाँ-के-तहाँ जड़ हो गये। वह निर्निमेष दृष्टिसे एरिस्टोबुलसके कमालको देख रहा था।

जब सिकंदर पीछे हटा तो सभी यूनानी सामंतोंने देखा कि उनके कलाकारने इस बार जो मूर्त्ति बनाई थी वह यूनानी कलाके इतिहासमें बेजोड़ थी। उसने पत्थर क्या तराशा था मानो उसका दिल निकाल लिया था। उसने पाषाणमें संगीतका आकार बनाया था। प्रस्तरके अंगप्रत्यंगमें उसने पर्वतके सौन्दर्यकी अपूर्व स्थापना की थी।

वह किसी अल्हड़ पहाड़ी नवयौवनका साकार रूप था। उसके मुखपर जो भोलापन और शांति दिखाई दे रही थी वह सिकंदरके युद्धोन्मुख अंतरके साथ विरोध उत्पन्न कर रही थी। ऐसा लग रहा था मानो वह प्रस्तर-प्रतिमा अब बोली, अब बोली! लेकिन वह बिना बोले ही जीवनको मुसकानका दान दे रही थी। वह ऐसा सौन्दर्य था जिसे सब देख रहे थे और वातावरणमें परिवर्तन अनुभव कर रहे थे, किन्तु स्वयं वह अपने को देखनेकी क्षमता नहीं रखता था। उसकी आँखें नहीं थीं।

अपनी समस्त प्रसन्नताओंको केंद्रित करके सिकंदरने कहा, "एरिस्टो-बुलस, हम देख रहे हैं कि देवताओंने सौन्दर्यके देवता अपोलोको इसलिए

संसारमें भेजा है कि दुनिया उसे देखे। लेकिन अफ़सोस! उन्होंने उसे नेत्र-हीन करके भेजा है। अगर वह आँखें लेकर आता तो सिकंदरको देखता, उसकी विजय-यात्राओंको देखता और उसके यूनानको देखता।"

एरिस्टोबुलसने गद्गद होकर अदबसे सिर झुकाया। "वह ज़रूर हमारे निकाटोरको देखेगा, उसकी विजयोंको और यूनानको देखेगा। वह आँखें लेकर आया है। लेकिन वह उन आँखोंमें जो गहराई लेकर आया है यह तुच्छ कलाकार उन्हें पत्थरमें अंकित नहीं कर सका।"

यह बात सुनकर सिकंदर उछल पड़ा। "जुपिटरकी क़सम, एरिस्टो-बुलस, तुमने हमें खुशीकी ख़बर सुनाई है। हम तुम्हें यूनानका बहतरीन तोहफ़ा इनाममें देंगे। हमारे सामने उस प्रतिमाको प्रस्तुत किया जाय जिसकी आँखें मौजूद हैं।"

एरिस्टोबुलस सिर झुकाकर अदबके साथ शिविरके बाहर चला गया। सिकंदरके साथ-साथ उसके सेनापति और सामंत साक्षात् उत्सुकताकी प्रति-मूर्त्ति बन गये। जिस निर्जीव, नेत्रहीन पत्थरमें किसी सजीव प्रतिमाका आकार है, जब इसीका इतना प्रभाव है, तो स्वयं वह नेत्रयुक्त सजीव आकार कैसा होगा!

यह लंबी प्रतीक्षा कुछ ही देर रही। एरिस्टोबुलस आया और उसके साथ दो परिचारिकाओंका सहारा लिये हुए, मुखावरणसे आच्छादित उस प्रस्तर-प्रतिमाका मूल आकार दृष्टिगोचर हुआ। सामंतोंके कलेजे धड़कने लगे। सेनापति अपनी मर्यादाको सँजोकर तनकर खड़े हो गये। एरिस्टो-बुलसने सिकंदरकी ओर आज्ञाके लिए देखा। सिकंदरने संकेत किया और एरिस्टोबुलसने आवरण हटा दिया।

श्वेत वस्त्रोंसे अलंकृत वह उस प्रस्तर-प्रतिमाका सजीव रूप था। उसकी आँखोंमें जादू था। जब उसकी विस्मयपूर्ण दृष्टि सिकंदरकी उत्सुकता पूर्ण दृष्टिसे मिली तो सिकंदरकी मुट्ठियाँ भिंच गईं। एक-एक शब्दको

तौलकर बोलनेवाले यूनानी विजेताके मुँहसे बअख़्तियार निकला : 'अपोलो ज़िन्दाबाद !"

इसके साथ ही सभी उपस्थित सामंतोंने अपोलोके चिरजीवी होनेकी कामना प्रकट की ।

सिकंदरने आजतक कमनीय वस्तुओंको केवल देख लेनेसे ही संतुष्ट होना नहीं सीखा था । बचपनमें जो वस्तु उसे अच्छी लगती थी वह उसे छूना चाहता था और प्राप्त कर लेना चाहता था । उसके सामने इस समय जो सजीव दुर्लभ प्रतिमा खड़ी थी उसे अपने हाथोंसे स्पर्श करके उसकी वास्तविकताको जान लेनेके लिए वह उठा । उसके पास पहुँचकर उसने एक क्षण ठिठककर उसे जी भरकर देखा और सहसा ही उसका एक हाथ आगे बढ़ गया । पहाड़ी नवयौवनाका एक हाथ अपने हाथोंमें लेकर वह उसकी कोमलताका अनुभव करने लगा, जैसे कोई पारखी किसी अनमोल हीरेको परख रहा हो ।

नियारकस उसी समय अपने स्थानसे एक क़दम आगे बढ़ा । "निकाटोर एलग्ज़ेंडर ज़िंदाबाद ! भारतीय रसमके अनुसार अब यह युवती सम्राट्की अर्द्धांगिनी है ।"

सिकंदर चौंक पड़ा । युवतीका हाथ उसके हाथसे छूट गया और उसने घूमकर नियारकसकी ओर देखा । "नियारकस, तुम अपनी सीमासे आगे बढ़ गये हो !"

"नहीं, निकाटोर," नियारकसने कहा । "इस रसमको हिन्दुस्तानमें पाणिग्रहणका नाम दिया जाता है । जब कोई युवक मुग्ध भावसे किसी युवतीका हाथ अपने हाथोंमें थाम लेता है तो वह उसकी हो जाती है । यह भारतीय युवती अब तक अपने मनमें निकाटोरको अपना पति समझ चुकी होगी ।"

"हम सिवा यूनानके किसी देशके क़ायदे-क़ानूनोंसे नहीं बँधे हैं", सिकंदरने कहा । फिर उसने एक क्षण उस युवतीकी ओर निहारा । "फिर भी,

नियारकस, हम तुम्हारी खोजकी कद्र करते हैं। यह लड़की यूनानकी सम्राज्ञी बनेगी।"

साथ ही "निकाटोर ज़िंदाबाद ! यूनान ज़िंदाबाद !" के नारोंसे सिकंदरका शिविर गूँज उठा। सिकंदरने देखा उनकी भाषाको न समझ सकनेवाली वह लड़की, जो शायद यूनानकी सम्राज्ञी बनने जा रही थी, धीमे-धीमे मुसकरा रही थी मानो बिना जाने ही उसने इस निर्णयपर अपनी स्वीकृतिकी छाप लगा दी हो।

किन्तु एरिस्टोबुलस सहसा ही निर्णीत हो गये इस निर्णयसे बड़े असमंजसमें दिखाई पड़ा। उसकी मुद्रा देखकर सिकंदरने पूछा, "एरिस्टोबुलस, तुम कुछ कहना चाहते हो ?"

एरिस्टोबुलसने कहा, "इस स्त्रीके साथ एक बूढ़ी स्त्री भी सैनिकोंके साथ लगी थी। वह युद्धमें काम आये हुए असकानी सरदारोंकी माँ है। उसीसे यह भी मालूम हुआ है कि जिस स्त्रीको निकाटोर यूनानकी सम्राज्ञी बनानेके लिए तैयार हो गये हैं वह उसी असकानी सरदारकी विधवा पत्नी है। उस्ताद अरस्तूका कहना है कि शत्रुकी मुसकराहटसे भी हमें सावधान रहना चाहिए। यह स्त्री किसी भी दिन यूनानके लिए घातक सिद्ध हो सकती है।"

एरिस्टोबुलसने जिस रहस्यका उद्घाटन किया था उसे सुन-समझ कर सारी उपस्थित सभामें सन्नाटा छा गया। तनिक विचारके बाद ही सिकंदरने कहा, "तुम ठीक कहते हो, एरिस्टोबुलस ! हम तुम्हारी बातोंपर ग़ौर करेंगे।"

इसके बाद वह संक्षिप्त सभा विसर्जित हो गई। शिविरमें रह गये केवल सिकंदर और वह सदा मुसकराहटका दान देनेवाली असकानी युवती। अब न जाने क्या सोचकर वह आप ही आप हँस पड़ी।

सिकंदरने विस्मयसे उस हँसीको देखा,उसके बाद फिर छा जानेवाली पूर्ववत् मुसकराहट देखा, उसकी मर्मभेदी दृष्टिको देखा, और वह सौन्दर्यके देवताके सामने नतमस्तक हो गया।

धीरे-धीरे संध्या निकट आ रही थी और आसमानमें बादलोंका जमघट जुटना आरंभ हो गया था। सिकंदरके शिविरमें एक पुरुषके दिलकी धड़कनें निरंतर तीव्रतर होती जा रही थीं। थोड़ी ही देरमें अंधकारने आलोकको ढाँक लिया, बादलोंने क्रुद्ध होकर बार-बार दाँत चमकाये और फिर विवश होकर रो पड़े।

सुबह हो गई और शिविरसे रुक-रुककर मर्मभेदी हास्यकी ध्वनि आने लगी। भीतरसे घड़ियालकी आवाज़ सुनकर दो संतरी शिविरके भीतर गये और तुरन्त ही बाहर आकर एक ओरको दौड़ पड़े।

कुछ देर बाद एरिस्टोबुलस और प्रसिद्ध यूनानी हकीम एमिरकस निकाटोरके शिविरमें दाखिल हुए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने एक अद्भुत दृश्य देखा। वह असकानी युवती बाल बिखराये सिकंदरके सिंहासन पर विराजमान थी और उनका निकाटोर जीवनमें शायद पहली बार असहायकी भाँति अपने अनुचरोंको देख रहा था।

एरिस्टोबुलसको देखते ही सिकंदर कुपित होकर बोल उठा, "तुम्हारा सिर कलम किया जाना चाहिए, एरिस्टोबुलस!"

आसमानसे गिरते हुए यूनानी कलाकारने सिर झुका दिया। "निकाटोरकी खुशियोंपर यह सिर कुरबान है।"

सिकंदरने मुट्ठियाँ भींचीं और खोल दीं। "तुम नहीं जानते, एरिस्टोबुलस, तुमने कितना बड़ा अपराध किया है! तुमने हमें सब कुछ बताया, पर यह नहीं बताया कि यह स्त्री पागल हो चुकी थी।"

एरिस्टोबुलस और यूनानी हकीम दोनोंके मुँह आश्चर्यके अतिरेकसे फटे रह गये। तभी सिकंदरके सिंहासनपर बैठी सौन्दर्यकी वह प्रतिमा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

एरिस्टोबुलस काँप उठा। "जान-बूझकर इतना बड़ा अपराध वही कर सकता है, मेरे देवता, जिसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई हो और जो अपने

आपेमें न हो। इस स्त्रीसे दुभाषियोंके द्वारा जब कोई भी सवाल पूछा गया यह चुप रहीं और मुसकराती रहीं। हमें अपने सवालोंके जवाब उस बूढ़ी स्त्रीसे मिले। यह स्वप्नमें भी गुमान न था कि पागलपन भी इसकी वजह हो सकती है।"

सिकंदरने एक हाथकी हथेलीपर दूसरे हाथकी बँधी मुट्ठी दे मारी। बूढ़ा एमिरकस आगे बढ़ा और उसने असकानी वधूकी आँखोंमें घूर-घूरकर कुछ देखा। फिर उसने धीरेसे उनका हाथ उठाया और तन्मय होकर उसकी नब्जको पहचाननेमें लग गया।

कुछ देर बाद निश्चित होकर हकीमने कहा, "देवता निकाटोरकी रक्षा करें। ऐसा मालूम होता है कि विगत युद्धकी विभीषिकाओंको देखकर ही यह स्त्री आधी पागल हो गई है। इसने अपने गर्भमें निकाटोरकी रूह बंद कर ली है। अब इसका पागलपन दोमें से किसी एक ही घटनासे दूर हो सकता है—या तो इसके जीवनमें किसी भारी खुशीका प्रवेश हो या भारी प्रसन्नताकी कोई घटना इसके मानस-तंतुओंको झटकेके साथ खोल दे। हमें पहले निकाटोरकी रूहके रोशनीमें आनेका इंतजार करना चाहिए।" इसके बाद बूढ़ा हकीम अदब और क़ायदेके साथ पीछे हटकर एरिस्टोबुलस के बराबरमें आ गया।

असकानी नवयौवना अब तक गंभीर हो चुकी थी और तीनों यूनानी मानो कीलित होकर संसारकी सम्राज्ञीके सम्मुख खड़े थे।

× × ×

बदलती हुई गतिशील ऋतुओंके साथ-साथ सिकंदरकी सेनाएँ झेलमके निकटतर आती चली गईं। बरसात बीती, जाड़े आये, यूनानियोंने हिन्दुस्तानका शीत अपने सिरोंपरसे गुजार दिया। फिर ३२६ ई० पूर्वका वसंत भी आया और सिकंदरकी सेनाओंको अबाध गति मिली। बरसातके आरंभमें यूनानी विजेता झेलमके किनारेपर पहुँच गया। इन्हीं दिनों असकानी विधवाके गर्भसे छोटे निकाटोरने जन्म लिया।

हकीम एमिरकसको पूरी आशा थी कि नारीके जीवनमें होनेवाले इस अपूर्व परिवर्तनसे उसकी मानसिक विक्षिप्तता भी दूर हो जायगी। वह तो दूर नहीं हुई, किन्तु वृद्धा असकानी माँ एक विदेशी विजेताके रक्त से उत्पन्न अपने पोतेका मुँह देखकर इस संसारसे चल बसी।

पूर्व योजनाके अनुसार झेलमपर तीन पुलोंका निर्माण हुआ। फिर एक बरसाती रातको, जब दूसरे किनारेपर तैयार खड़ी और वीर पोरसकी सेना-ओंकी आँखें दूरतक फैले हुए मूसलाधार पानीके आवरणको भेदनेमें असमर्थ थीं और केवल झेलमके पानीका उच्छृंखल स्वर कानोंमें पड़ रहा था, तीसरे पुल परसे टापूकी आड़ लेकर सिकंदर स्वयं झेलममें कूद पड़ा। सुबह तक वर्षा बंद हो गई और आकाश स्वच्छ हो गया। सहस्रों यूनानियोंकी भेंट चढ़ा कर झेलमके किनारेपर बन गये बरसाती दलदलको सिकंदरने पार किया। सहायताके लिए राजा अभिसारको आया जानकर पोरसके दोनों बेटे उसका स्वागत करने के लिए आगे बढ़े। किन्तु उनका सामना हुआ मध्य एशियाके उन विकट धनुर्धरोंसे, जो दौड़ते हुए घोड़ोंपर से अपनी छोटी-छोटी कमानोंके द्वारा अचक निशाना लगाते थे। भारतीय योद्धाओंने भी अपने कंधोंसे उन बड़ी-बड़ी कमानोंको उतारा, जिनकी लंबाई आदमीके सिरसे ऊँची पहुँचती थी और जिन्हें धरतीपर टिकाकर, मारक बाणोंकी बौछार करके उन्होंने पोरसको उत्तर भारतकी अजेय शक्ति बना दिया था। लेकिन भाग्य सिकंदरके पक्षमें था। भारतीय योद्धाओंके विशालाकार धनुष दलदलमें धँसते चले जाते थे और उनके बाण थोड़ी-थोड़ी दूरपर जाकर गिर पड़ते थे।

तब पहले पुलको अधूरा छोड़कर परडीकसने नावोंका बेड़ा झेलममें डाल दिया और एक नावमें आनेवाले इतिहासके बड़े-बड़े प्रमुख व्यक्तियोंको एकत्रित करके वह झेलम पार करने लगा। उसके बराबरमें छोटे निकाटोरके लिए एक यूनानी परिचारिका बैठी थी और पास ही अर्द्धविक्षिप्त कल्याणी बार-बार चौंककर युद्धघोषको सुन लेती थी।

परडीकस हाथोंकी ओट करके दूरवीक्षण कर रहा था। नावोंपरसे तीर फेंकनेवाली मशीनोंकी बौछारके बीच देखता हुआ वह ज्यों-ज्यों बहावके साथ युद्धस्थलके निकट आता था, त्यों-त्यों उसके मुँहसे निकलनेवाला युद्धका वर्णन सजीव और उत्साहवर्द्धक होता चलता था :

"हाथियोंकी दीवारें खड़ी करके पोरस उनके पीछे-पीछे हमारी सेनाओंकी ओर बढ़ रहा है...उनके पीछे पैदल सेनाओंके छोटे-छोटे जत्थे हैं। दोनों तरफ़ भारतीय हलके-फुलके रथोंकी कतारें हैं, जिनके आस-पास और पीछे घुड़सवारोंके दल हैं...इस समूहके बीचमें एक बड़े विशाल-काय हाथीके ऊपर शायद पोरस बैठा है। लेकिन उसके हौदेपरसे केवल उसका दायाँ कंधा दिखाई पड़ रहा है...हमारे तीरंदाजोंने हाथियोंकी दीवारोंपर तीर बरसाने शुरू कर दिये हैं और वे ऊपरको सूंड़ें उठा उठाकर चिंघाड़ रहे हैं...लो, अब वे झपटकर आगे बढ़ रहे हैं और पीले आदमी उनके पैरोंके नीचे आ-आकर पिस रहे हैं।

कल्याणीकी स्मृति उसके साथ आँख-मिचौनी खेलने लगी। भारतीय हाथी यूनानियोंको पीस रहे हैं। उसके अर्द्धचेतन मस्तिष्ककी ओरसे एक लहर चली और उसके लाल-लाल होंठोंपर एक ऐसी मुसकराहट आई, जो उसके मुखपर सदा छाई रहनेवाली मुसकराहटसे भिन्न थी—प्रसन्नताकी मुसकराहट और हर्षका एक हलका-सा झटका।

परडीकस बोल रहा था, "वह चमके हमारे निकाटोर...यूनानी घुड़सवार अपनी पंक्तियाँ तोड़कर दो दिशाओंसे हाथियोंपर झपटे हैं... असंख्य भालोंने हाथियोंके मस्तकोंको छेद दिया है...अब हाथी ज़ोर-ज़ोरसे चिंघाड़ रहे हैं...वाह, अब तो वे दीवारें लौट पड़ी हैं और उन्होंने अपनी सेनाओंको पैरों तले रौंदना शुरू कर दिया है...बाईं ओरसे हिन्दुस्तानी व्यूह बनाकर हमारी सेनाको घेर लेना चाहते हैं...उधरसे हमारे निकाटोर घुड़सवारोंको लेकर चले....और हिन्दुस्तानी अब तितर-बितर हो रहे हैं...."

कल्याणीके मस्तिष्कको कोई जैसे एक साथ हजारों हथौड़ोंसे पीट रहा था। कोई पत्थर जैसे उभर-उभरकर उसके मस्तिष्ककी ऊपरी सतह पर आना चाह रहा था और बार-बार दब जाता था। परडीकस बराबर युद्धका वर्णन करता जा रहा था। नगाड़ोंकी ध्वनि नजदीक आती जा रही थी और पासकी नावोंसे यूनानी सैनिकोंके विजय-घोष सुनाई पड़ रहे थे।

कुछ ही देर बाद परडीकसने वर्णन किया कि भारतीय सेनाके पैर उखड़ गये और अब युद्ध युद्ध न रहकर सामूहिक हत्याकाण्ड मात्र रह गया है।

"वह पोरस अपने हाथी पर वापस भागा जा रहा है और महाराज आमफिस (आँभी) उसका पीछा कर रहे हैं...पोरसका हाथी घूमकर खड़ा हो गया है और स्वयं पोरस निढाल होकर हौदेमें ढुलका जा रहा है...लो, अचानक अब वह चेतन हो गया है और उसने एक भाला निशाना ताककर महाराज आमफिस पर फेंका है...महाराज आमफिस वार बचाकर अब हमारी सेनाओंकी ओर लौट चले हैं...अब हमारे घुड़सवार पोरसकी ओर दौड़ रहे हैं। उन्होंने पोरसके हाथीको बैठ जानेके लिए मजबूर कर दिया है। अब बेहोश पोरसको हौदेसे उतारा जा रहा है...वाह रे पोरस...! अब...."

अब कल्याणीके मस्तिष्कमें पत्थरने हिलना-डुलना बन्द कर दिया। दिमाग़में जैसे रोशनी भर गई और नई-पुरानी कितनी ही स्मृतियाँ उसके मस्तिष्कमें लौट-लौटकर आ गईं...असकानोंके युद्धमें उसके पतिकी निर्मम हत्या...गाँवकी महिलाओंको पकड़-पकड़कर ले जाया जा रहा है और दूरसे नारी कंठोंकी चीत्कारें आ रही हैं...और...कुछ याद नहीं आता....! कोई यूनानी उसे अपने अंकमें समेटे ले रहा है...लोग उसे निकाटोर कहते हैं...उससे उसे एक संतान मिली है...क्या यह सब सच है?

कल्याणीने एक नजर यूनानी परिचारिकाके हाथोंमें खेलते हुए लड़केको देखा और क्षणमात्रमें उसके निकट सब कुछ साफ़ हो गया। उसने उसे परिचारिकाके हाथोंसे छीन लिया, एक बार चूमा, और नावमें कालीनपर

बैठा दिया। फिर उसने झेलमके पानीमें अपनी परछाईं देखी, एक बार हाथ जोड़कर आकाशकी ओर देखा और उसके मुँहसे निकला, "माँ, शरण दो।"

परिचारिका चिल्लाई और परडीकसने घूमकर देखा। तूफान नावको ऊपर-नीचे उठा रहा था और पानीकी उत्ताल तरंगोंमें गोल-गोल लहरोंका बंधन किसीको अपने अंकमें समाकर धीरे-धीरे सिमटता-सा लगता था कि दूसरी जबरदस्त लहरें आईं और उन्होंने उन गोल घेरोंकी सारी कोशिशों को बेकार कर दिया।

परडीकस ज़ोरसे चिल्लाया और उसका इशारा पाते ही सैकड़ों गोताखोर झेलममें कूद पड़े। बेड़ा रोक दिया गया। धड़कते हुए दिलोंसे अधिकारी लोग निकाटोरके क्रोधसे भरे बोल समयसे पहले ही गुनने लगे। उन्होंने यूनानकी भावी सम्राज्ञीको खो दिया।

इस बार झेलमने यूनानियोंकी कोई सहायता नहीं की। अपनी बेटीको अपने अंकमें छिपाकर वह उद्दाम गतिसे दौड़ती, इतराती और बल खाती हुई चली गई। फिर भी जिस धरती पर वह बह रही थी उसके साथ उसने विश्वासघात नहीं किया।

कुछ ही समय बाद उसने सुप्त कल्याणीको किनारेपर फेंक दिया। सूर्यने उसके ऊपर चमकना आरम्भ कर दिया और दूर होते हुए युद्धसे अनजान किसी ग्रामीण बैलगाड़ीवालेने उसे देखा। वह उसे उठाकर उस गाँवमें ले आया, जिसे आजकल सियालकोटका नाम दिया जाता है। अब वह पंजाब का एक बड़ा नगर है।

× × ×

कल्याणी कुछ दिनोंमें स्वस्थ हो गई। किन्तु उसकी स्मृति सिकंदरके द्वारा संचालित दो निर्मम युद्धोंको देख चुकी थी। अब निश्चल बैठना उसके लिए असंभव था। उसने अपना पति खोया था, जातिकी जाति नष्ट होते देखी थी और विदेशी-द्वारा उसका नारीसुलभ आत्मसम्मान विदीर्ण किया जा चुका था।

एक दिन उसी ग्रामीणको साथ लेकर वह दूसरे पौरव सरदारसे भेंट करनेके लिए रावीके पास पहुँची। पौरवके अनुचरोंने सदाकी राजनीतिके अनुसार एक सुन्दर स्त्रीको सरदारसे मिलनेके लिए उत्सुक देखकर उसे पौरवके विश्रामगृहमें पहुँचा दिया।

अकस्मात् अपार सौन्दर्यको अपने सामने देखकर पौरव सरदार ठगा सा देखता रह गया। उसके मुँहसे निकला :

"कौन हो तुम? कहाँसे आई हो? क्या चाहती हो?"

"मैं एक स्त्री हूँ,' उसने उत्तर दिया। "मैं रावी पारसे आई हूँ। मैं तुम लोगोंको चेताने आई हूँ। सिकंदर आ रहा है और उसके पास अपार शक्ति है! अभी समय है। उठो, दस-पाँच जितने भी मिल सको, मिलकर एक हो जाओ। बहते-बहते नदियों तकका पानी सूख जाता है। उसकी ताकत घटती जा रही है! उसका मुकाबला करो, जीत तुम्हारी होगी।"

"ओह!" मुग्ध होता हुआ पौरव सरदार बोला, "सिकन्दर आ रहा है। यह सिकन्दर कौन है? तुम जो कुछ कह रही हो वह पागलपनमें कह रही हो या होशमें?"

"एक विदेशी शक्ति तीन हजार मीलकी यात्रा करके यूनानसे आई है। पौरव महान् उससे लड़कर नष्ट हो चुका है...."

"तुम्हारे मुँहसे क्या निकल रहा है?" पौरवने उत्तर दिया, "पौरव तो हम हैं और किसीने नष्ट नहीं किया है। तुम शायद झेलमवाले उस घमंडी सरदारके बारेमें कह रही हो। अच्छा हुआ, उसका मान भंग करनेवाला कोई तो मिला। हम तो और भी मजेमें हैं। हमारा पैरोंका काँटा निकल गया है।"

कल्याणी चिल्ला उठी : "तुम कायर ही नहीं, मूर्ख भी हो।"

पौरव सरदारका चेहरा आत्महीनताको अनुभव करके तमतमा गया। कुछ देर वह एकटक उस रूपके सागरको निहारता रहा। फिर वह बोला, "तो तुम गालियाँ देने आई हो! यह भी सुन्दर है, तुम भी सुन्दर हो

और विशेषकर तुम्हारी ये आँखें ! वाह, ईश्वरकी क्या लीला है ! हम चाहते हैं अपनी इस खंजन-सी आँखोंसे तुम हमें देखती रहो, और...और हम तुम्हें देखते रहें..."साथही वह मुँह बाकर मुसकरा उठा मानो उसने कोई अपूर्व बात कह दी हो ।

असकानी सरदारके साथ रहकर जिसने सैकड़ों जंगली जानवरोंका शिकार खेल डाला था वह इस अपमानसे तिलमिला गई । उसने आगे बढ़ना आरंभ किया और पौरव सरदारकी हँसी बढ़ती चली गई ।फिर शीघ्र ही वह हँसी लोप हो गई । उसकी कमरमें से उसकी कटार निकलकर उसीके कलेजेमें धँस चुकी थी । न अब कोई हँसी निकल सकती थी, न बोल निकल सकता था, और न कोई चिल्लाहट ।

बाहर पहरेपर खड़े होठों ही होठोंमें मुसकराते हुए चार संतरियोंको दो घड़ी भीतर न जाने का सरदारका आदेश देते हुए कल्याणी निढाल क़दमोंसे लड़खड़ाती हुई अपनी बैलगाड़ीपर आ बैठी । "बाबा, बैलोंको आर लगाओ । हमें जल्दी ही यहाँसे निकल जाना है ।"

लेकिन कुछ ही देरमें पीछेसे पुरु लोगोंका शोर सुनाई दिया । बूढ़े चालकने असहायकी भाँति कल्याणीकी ओर देखा । कल्याणीने कहा, "अब मृत्यु निकट है, बाबा । भगवान्‌का नाम लो ।"

पर बूढ़ा सुलझ चुका था । उसने तुरन्त हाथ पकड़कर कल्याणीको गाड़ी परसे उतार दिया और झाड़ियोंकी आड़में करके कहा, "जा सको तो पैदल सांकल पहुँज जाना । वहाँका राजा सज्जन है । वह तुम्हारी सुनेगा । जाओ ।"

हील-हुज्जत करनेका समय नहीं था । झाड़ियोंमें लहूलुहान होती हुई कल्याणी पूर्वकी ओर भाग चली । उधर बूढ़ेने अपनी बैलगाड़ी पूरी तेजीसे आगेकी ओर दौड़ा दी । लगभग आधी घड़ी बाद कल्याणी एक अस्फुट चीखकी आवाज़ सुनकर ठिठक गई । शायद बूढ़ा यमलोक सिधार चुका था ।

दो दिनोंकी भूखी-प्यासी कल्याणी सांगलके गढ़के नीचे पहुँची। बड़ी ऊँचाई पर सांगलका क़िला आकाशको चूम रहा था। ऊपर जानेके लिए पथरीली पगडंडी थी। क्या कल्याणी उसपर चढ़कर होश रहते ऊपर पहुँच सकती है ? शायद वह नहीं पहुँच सकती थी। किन्तु एक आग थी जो उसे लुढ़काती-पुढ़काती, ठोकरें खिलाती सांगलके द्वारपर ले गई।

जब कल्याणीको चेतना आई तो क्षत्रियोंका राजवैद्य उसकी परिचर्या कर रहा था। उसने आँखें खोलीं और देखा कि उसे चेतन होते देखकर उसके ऊपर झुके अनेक चेहरे खिल उठे। सांगलके राजाने सीधे होकर सेवकोंसे कहा, "देवीके लिए भोजनका प्रबन्ध किया जाय।" और वह स्वयं कक्ष छोड़कर बाहर निकल गया।

दोपहरके समय अकेला सांगल का राजा कल्याणीके कक्षमें आया। एक नीचे आसन पर बैठकर उसने पलंग पर पड़ी, जगह-जगहसे क्षतविक्षत कल्याणीको निरखा-परखा। फिर वह बोला, "क्या देवी इस स्थितिमें हैं कि अपना परिचय दे सकें?"

"समय न गँवाओ, सांगलके अधिपति," कल्याणीने कहा। "विदेशों से एक दुर्दम्य शक्ति उत्तरी पहाड़ोंको भेदकर भारतमें आई है। अब तक लगभग सवा लाख भारतीय उसकी लपलपाती जीभकी भेंट हो चुके हैं। उसने झेलम पार करके महान् पौरवको भूमिपर सुला दिया है। उसने बाँके असकानोंका निशान दुनियासे उठा दिया है। अभी थोड़ा-सा समय है। जागो और दूसरोंको जगाकर एक हो जाओ। मैं सैकड़ों कोसका मार्ग लाँघकर केवल यही संदेश देने के लिए आई हूँ। बताओ, सांगलमें कितनी शक्ति है?"

सांगलका राजा अचानक इतना बड़ा आह्वान सुनकर चौंक पड़ा। उसके मुँहसे केवल इतना निकला, "तीस हजार योद्धा।"

"बहुत कम हैं," कल्याणीने कराहते हुए कहा। "बहुत कम हैं।"

"तुम कौन हो?" सांगलके राजाने फिर पूछा।

"मैं एक असकानी हूँ," कल्याणीने मुँह फेरकर उत्तर दिया। उसकी आँखोंमें आँसुओंकी दो छोटी बूँदें चमक आईं।

"अकसानियोंमें क्या इतना सौन्दर्य होता है?" आश्चर्यके साथ सांगलका अधिपति बोला।

मुँह फिराकर कल्याणीने तीव्र दृष्टिसे सांगलके राजाको देखा। चुभते हुए शब्दोंमें वह बोली, "क्या तुम लोगोंको सब कुछ सुन्दर ही सुन्दर दिखाई देता है? क्या जीवनमें कुछ भी असुन्दर नहीं? क्या उस असुन्दरका सामना करनेका सारा साहस तुममें लोप हो गया है? नहीं, अब मुझमें कुछ सुन्दर नहीं रह गया है। बताओ, सांगलनरेश, तुम सिकंदरसे लड़ोगे?"

"दो बातोंका उत्तर एक साथ देना है," सांगल-नरेशने कहा। "देवीके नेत्रोंमें साक्षात् कामदेवका वास है, अतः देवी सुन्दर हैं। सिकन्दर नाम की कोई विदेशी शक्ति आ रही है, वह असुन्दर है। हममें असुन्दरका सामना करनेका साहस है। हम उससे लड़ेंगे यदि... यदि देवीकी कृपा बनी रही तो।"

इस कृपाका क्या अर्थ था, वह सांगलनरेशके नेत्रोंमें देखकर कल्याणीके सामने स्पष्ट हो गया। वह कराही और उसका सिर चकरा गया। दशा खराब जानकर सांगलनरेश कक्षके बाहर राजवैद्यको बुलवानेके लिए दौड़े। किन्तु बाहर पहुँचते-न-पहुँचते उन्हें एक तीव्र हृदयविदारक चीत्कार कल्याणीके कक्षसे सुनाई पड़ी। वह उलटे पैरों कक्षमें लौटकर आये।

द्वारसे ही सांगलनरेशने देखा कि पलंग पर थोड़ी देर पहले निश्चल पड़ी कल्याणी उलटी हो गई थी और मुँहपर हाथ रखे बार-बार चीख रही थी। आगे बढ़कर उन्होंने उसे ज़ोर लगाकर सीधा किया। देखा, कल्याणीने अपने हाथोंसे अपना मुँह जकड़ रखा है और उसकी उँगलियोंके बीचसे रक्तकी धाराएँ उबल-उबलकर ऊपर आ रही हैं। सांगल-नरेशका

साहसी हृदय भी धड़कने लगा। उसने फिर बलप्रयोग करके कल्याणीके हाथोंको उसके मुँहसे हटाया। हाथ हट गये, उसने फिर एक मर्मभेदी चीत्कार किया और उसका सिर पीछेकी ओर लुढ़क गया। साथ ही सांगल-नरेशके हाथोंने कुछ क्षणोंके लिए अपनी चेतना खो दी।

एरिस्टोबुलसकी कलाने जिनके सामने हार मान ली थी, सिकन्दर जिनके समक्ष बच्चा बन गया था, पौरव द्वितीय जिन्हें देखकर मूर्खों की तरह बातें करने लगा था और जिनपर सांगल-नरेशने अपनी स्वतन्त्रताकी बाजी लगा दी थी, कल्याणीने उन नेत्रोंको अपने ही हाथोंको सोनेकी चूड़ियों से फाड़कर नष्ट कर दिया था!

कल्याणीका उपचार हुआ, किन्तु उसके नेत्रोंके आवरण फट चुके थे। तब सांगलनरेशने अपने तीस हज़ार जवानोंको एकत्र किया। उनके सामने कल्याणीको खड़ा किया और ललकारकर बोले, "इस देवीने समस्त भारत-भूमिके लिए संसारमें सबसे सुन्दर अपने नेत्रोंका दान दिया है। यदि हम मनुष्य हैं तो अपने प्राणोंकी बाजी लगा देनी चाहिए। देवी कल्याणीकी जय!"

देवी कल्याणीकी जयसे ही सिकंदरकी बाढ़की तरह बढ़ती हुई सेनाओंका स्वागत हुआ। पोरससे लड़कर उसकी सेनाओंके क़दम लड़खड़ाने लगे थे, तो सांगलसे लड़कर वे उखड़ गये। विजयश्री सिकंदर-के हाथों रही क्योंकि उसका स्वागत करनेके लिए एक भी सांगल जीवित नहीं रह गया था। एक शमाके तीस हज़ार परवाने कट-कटकर ढेर हो गये थे।

विजयसे उन्मत्त सिकन्दर सांगलके गढ़में घुसा। राजमहलके द्वार पर पहुँचकर उसे राजसी वेशभूषामें सुसज्जित एक दुर्बल, अंधी युवती मिली। वह मुसकरा रही थी। सिकंदर, परडीकस, सैल्यूकस, फिलिप---सब एक साथ उसके सामने पहुँचे। रास्ता रुका जानकर सिकंदरने पूछा: "कौन हो तुम?"

कल्याणी उसका प्रश्न नहीं समझी, किंतु उसकी आवाज़ और भाषाका प्रकार वह समझ गई। उसके मुखपर फिर वही मनोहारिणी मुसकराहट आई और वह एक स्तंभसे लगकर सहारा लेती हुई बोल उठी, "निकाटोर, अब आगे नहीं बढ़ सकोगे।"

जब तक सिकंदर और उसके साथ आये सेनापति उसे पहचानें वह उस भूमि पर प्राण निछावर कर चुकी थी, जो समूची उसने कभी नहीं देखी थी। यूनानी सेनाएँ जब सांगलकी गलियाँ छान रही थीं, तो वहाँ कल्याणीके गीत गाये जा रहे थे और जब तीस हजार शवोंके ऊपर उसकी चिता रखकर जलाई गई, तो सांगलके गढ़का एक-एक कण देवी कल्याणी के जयनादसे मुखरित हो उठा। सिकन्दरका दिल छलनी हो चुका था।

यूनानी सेनाओंने सांगलसे सबक़ लेकर आगे बढ़नेसे इनकार कर दिया। देवताओंको झूठ-मूठकी भेंट चढ़ाकर उनकी मरजी जानी गई और सिकन्दर वापस लौट पड़ा।

अपनी अपूर्ण प्रतिमाके सामने सिर पटक-पटककर यूनानी कलाकार एरिस्टोबुलस न जाने कब तक रोता रहा!

●

परिणाम

महात्मा ईसासे चौथी शताब्दीके लगभग तीसरे पहरमें मगधके गौरवशाली सम्राट् महानन्दका वैभव धराशायी हो गया। जिसके विशाल सैन्य-बलको देखकर संसार-प्रसिद्ध सिकंदर-जैसे विजेताके पाँव भी लौट गये थे, उस महानन्दकी अतुल शक्ति आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यके मस्तिष्ककी ग्रंथियोंसे उलझकर खंड-खंड हो गयी थी। बुद्धि-पराक्रममें अपने समयके श्रेष्ठ धुरंधरोंको पछाड़ देनेवाले चाणक्यके दो विशाल हाथोंने एक नवीन साम्राज्यकी स्थापना करनेके लिए मगधकी राजधानी पाटलि-पुत्रके तोरण-द्वार खोल दिये।

ये दो विशाल हाथ थे चन्द्रगुप्त मौर्य और उत्तर पर्वतीय भागका एक महाबली राजा पर्वतक। चाणक्यने उन दोनों हाथोंमें मगधके विजित राजदंडको दो टुकड़े करके आधा-आधा बाँट देनेका वचन दिया था, किन्तु एक म्यानमें दो तलवारें चाणक्यकी नीतिमें नहीं थीं। सत्ता प्राप्त होते ही आचार्य विष्णुगुप्तके मस्तिष्ककी दुधारी तलवार अपना काम करने लगी।

पर्वतराज अकेले नहीं थे जिन्हें मुट्ठीमें दबाकर भींच दिया जाता। उनके साथ उनके पुत्र मलयकेतु, तीन तीन कुशल मंत्री और सैकड़ों गुप्तचरोंका एक विशाल दल था, जिनकी पीठपर उत्तरीय पर्वतोंके देवकाय मानवोंकी एक सुगठित सेना थी। चन्द्रगुप्तकी सैन्य-शक्ति पर्वतराजकी अपेक्षा बहुत निर्बल थी, और वही आचार्य विष्णुगुप्तका प्रिय पात्र था।

पचास वर्षके निर्बाध राज्यकालमें महानन्दने वैभव और विलासका जो ठाट-बाट पाटलिपुत्रके राजमहलमें जोड़ा था, देशी और विदेशी सुन्द-रियोंका जो जमघट उसने एकत्र कर लिया था, पर्वतोंका निवासी सीधा-

सादा राजा ठीक तरह समझ नहीं पा रहा था कि इस सब सामग्रीका उपयोग किस संयमके साथ करे।

तब एक दिन महानन्दके अन्त:पुर-रक्षक महाप्रतिहार अमितवीरने आचार्य विष्णुगुप्तकी राजसी झोंपड़ीके सम्मुख पहुँचकर द्वारपालोंसे आचार्यसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। चाणक्यकी स्वीकारोक्तिके बाद उसे भीतर पहुँचा दिया गया। महाप्रतिहारने साष्टांग दण्डवत् कर निवेदन किया——

"आचार्यवर, मैं बड़ी भयंकर परिस्थितिमें फँस गया हूँ।"

आचार्य अपने सामने रखी पोथीमें मोरपंखीसे श्लोक लिखते रहे। सेवकने आगे बढ़कर विनयपूर्वक कहा :

"अन्त:पुरमें एक मोहिनी है, जो विगत सम्राट्की सौन्दर्यकी खोजमें अन्तिम और श्रेष्ठ थी। भगवन्, महामना पर्वतराज और नरश्रेष्ठ चन्द्रगुप्त महाराज दोनोंकी आज्ञाएँ एक ही समय मेरे पास आई हैं कि मैं मोहिनीको उनकी सेवामें भेज दूं। एक ही समय दोनों स्वामियोंकी एक ही आज्ञाका यह सेवक किस प्रकार पालन कर सकता है, आचार्यवर...?

आचार्यने मोरपंखी हाथसे रख दी। उनके गम्भीर मुख पर एक हल्की-सी मुसकराहट आई और वह बोले, "इतनी साधारण-सी बात और इतनी बड़ी विपत्तिकी कल्पना! संसार जानता है कि जब दो बराबरकी शक्तियोंमें किसी वस्तु पर विवाद होता है, तो उसे तीसरे व्यक्तिको सौंप देना चाहिए।"

बिना पलकें झपकाये महाप्रतिहार आचार्यके मुँहकी ओर देखता रहा। "तीसरा व्यक्ति!" उसके मुँहसे निकला।

"हाँ", आचार्य बोले। "उस कन्याको हमारे पास भेज दो और दोनों सम्राटोंके पास सूचना भिजवा दो कि उनकी इच्छित वस्तु हमारे पाससे मिल सकती है।"

महाप्रतिहारने छुटकारेकी लम्बी साँस छोड़ी और सिर झुका कर आचार्यके कक्षसे निकल गया।

कुछ समय बाद चाणक्यके कक्षके द्वारपालोंने तथाकथित मोहिनीको कक्षके भीतर कर दिया। आचार्य पुस्तक-रचनामें तल्लीन थे। बहुत देर तक उनकी मोरपंखी चलती रही। फिर सहसा ही रुक गयी। उन्होंने दृष्टि ऊपर उठाई...और उनकी भौहें फैल गयीं।

आचार्य विष्णुगुप्तके सामने सौन्दर्यकी सर्वोत्तम कल्पनाका साकार रूप प्रस्तुत था। मोरके पंखोंकी कोमलताको मात करनेवाली लम्बी-लम्बी पलकोंके पारसे दो नील वर्ण गोल और सजीव मणियाँ उनके ऊपर टिकी हुई थीं। आचार्यकी दृष्टि एक क्षणके लिए मणियोंसे टकराकर कलाकी उस अनिंद्य प्रतिमाके बाहरी आकार-प्रकार पर पड़ी। महानन्दके वैभवके चिह्नस्वरूप मूल्यवान् रत्नजटित परिधानोंसे वह प्रतिमा अलंकृत थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उर्वशी और मेनका इस लोककी देवी हैं।

एक क्षण विचारकर आचार्यने फिर अपनी मोरपंखी उठाई और सामने खुली पुस्तक पर एक श्लोक लिखा। फिर मोरपंखीको रखकर उनकी दृष्टि ऊपर पड़ी। इस बार इस दृष्टिमें दर्शनका अपूर्व भाव था।

मोहिनी आचार्यको अपनी ओर संबोधित देखकर विनयपूर्वक प्रणाम कर रही थी। चाणक्यका दायाँ हाथ ऊपर उठा और उन्होंने मन ही मन कोई श्लोक पढ़कर आशीर्वाद दिया। फिर बोले :

"हम समझते थे कि हमने महानन्दका विनाश किया, किन्तु हमारी भूल थी। महानन्दका विनाश करनेवाली और भी वस्तुएँ इस संसारमें वर्त्तमान थीं।"

रूपकी प्रशंसाका यह अनोखा ढंग देखकर सुन्दरी चौंकी। उसकी पलकें तीन-चार बार जल्दी-जल्दी झपकीं और उसने कहा, "सृजन-शक्ति का मर्यादाहीन उपभोग सदा ही विनाशका कारण हुआ है, देव! इसमें उस शक्तिका दोष कुछ भी नहीं है।"

आचार्यकी मुद्रासे प्रकट हुआ कि इस उत्तरको सुनकर वह प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, "तुमने ठीक कहा देवी! किन्तु सृजन-शक्ति जब आवश्यकतासे अधिक मोहक होती है, तो उसका प्रयोग करनेके स्थानपर उपभोग करनेमें लीन हो जानेमें मनुष्यका कोई भी दोष नहीं। कालकी गतिकी प्रगतिको रूप देनेके लिए किसी भी शक्तिका प्रयोग उस शक्तिके लिए सबसे बड़ा गौरव होता है।"

"निःसंदेह, आचार्यवर", मोहिनीने कहा। आचार्यका कथन अकाट्य था।

अब आचार्य गम्भीर हो गये। "महानन्दकी एक शेष शक्ति हमारे कालकी गतिको भी मोह रही है। हम प्रगतिके लिए उस शक्तिका प्रयोग करना चाहते हैं। क्या देवी इसे अपने लिए गौरवकी बात समझेंगी?"

सुन्दरी चौंकी, "दासी आचार्यका मतलब नहीं समझी।"

"मतलब बहुत सीधा-सच्चा है," आचार्यने कहा। "देवीकी सृजन-शक्ति हमारे और मगधके कालकी प्रगतिमें सहायक दो भुजदण्डोंको अनावश्यक रूपसे अपनी ओर आकर्षित कर रही है। हम देवीको उसी स्थिति में रखकर केवल शक्तिका मुख विनाशकी ओरसे निर्माणकी ओर मोड़ देना चाहते हैं।"

सुन्दरी सहमी-सी खड़ी रही। वह अब तक भी विकट चाणक्यका अर्थ नहीं समझ पायी थी। इसी आशयसे उसके मुखपर मूक प्रश्न झाँक उठा। फिर मुखर होकर उसने कहा, "महाराजाधिराज पर्वतराज और चन्द्रगुप्त मौर्य...."

"देवीने ठीक समझा," आचार्य बोले। "ये ही मगधराज्यके वे भुजदण्ड ह, जिनपर मगधका भविष्य टिका हुआ है। किंतु अखण्ड मगधका राजदण्ड एक है और उसे एक ही हाथ संभाल सकता है। कालकी प्रगतिमें संघर्ष न हो, इसलिए हमें आँख मींचकर दोनों भुजदंडोंमेंसे एकको काट देना होगा। देवीकी शक्तिका प्रयोग इस कार्यमें होना निःसंदेह देवीके लिए गौरवकी बात होगी।"

भयसे आतंकित मोहिनी लड़खड़ा गयी। उसके सामने कौटिल्यका सच्चा स्वरूप खड़ा था। आज तक उसने केवल ऐसे पुरुषोंके दर्शन किये थे, जो उसे उपभोग करना चाहते थे। आज वह एक ऐसे पुरुषके दर्शन कर रही थी, जो उसका प्रयोग करना चाहता था। उसके त्रस्त नेत्र इस विचित्र परिस्थितिसे टकराकर विस्फारित हो गये। कुछ देर मौन रहनेसे ही उस शान्तिका कुछ अंश लौटकर आ पाया, जो थोड़ी देर पहले मौजूद थी। फिर वह शीश झुकाकर क्षुब्ध स्वरमें बोली, "हत्याके रूपमें सृजन-शक्तिका प्रयोग उसके लिए गौरव नहीं, एक ऐसा कलंक है, जो किसी भी काल और देशमें क्षमा नहीं किया जा सकता, देव!"

"देवी भूलती हैं", आचार्यने अविचलित स्वरमें कहा। "गौरव और कलंककी दो विपरीत राहोंके संगमपर ठहरकर प्रत्येक मनुष्य यही सोचता रह जाता है कि वह किधर जाय? किन्तु देवी, इन दो राहोंको जमकर आज तक कोई भी नहीं पहचान पाया। देवीको उसका कारण मालूम है?"

"नहीं," सुन्दर नारी-मूर्त्ति तनिक हिलकर बोली।

"तो सुनो, देवी," आचार्य बोले। "गौरव और कलंककी दो राहें सदा अपना क्षेत्र बदलती रहती हैं। यही कारण है कि कहीं एक स्थान पर टिककर कोई उन्हें आजतक नहीं पहचान पाया।"

मोहिनी नतमस्तक हो गयी। "आचार्य आज्ञा दें। किस भुजदण्ड पर कालका कोप है?"

"पर्वतराज पर," आचार्यने शान्त वाणीमें उत्तर दिया।

"पर्वतराज!" मोहिनी जैसे चौंक पड़ी।

"हाँ!" इस विस्मयसे विस्मित होकर आचार्य मोहिनीका मुख ताकते हुए बोले।

"ओह!" मोहिनी मखमलसे ढके हुए फर्शपर सिर रखकर पसर गयी। "नहीं, नहीं, देव! ऐसी आज्ञा न दीजिए।"

"क्यों ?" आचार्य एक क्षण अवाक् रह कर बोले, "हम देवीका आशय नहीं समझे...."

मोहिनी रोकर बोल उठी, "आज तक किसी पुरुषको देखकर यह अधम नारी विचलित नहीं हुई। पर्वतराज पहले पुरुष थे, जिन्हें...जिन्हें मन-ही-मन यह अपना मन सौंप चुकी है।"

आचार्य खड़े-खड़े हाथ मलने लगे। कुछ समय तक कक्षमें एक अरुचिकर-सा मौन छाया रहा। सहसा भूमिपर पसरी पड़ी नारीमूर्त्ति वेगके साथ उठकर सीधी खड़ी हो गयी। लाल आभासे आलोकित मुखपर किसी दृढ़ निश्चयकी छाप प्रतीत हो रही थी। आचार्यके नेत्रोंमें नेत्र गड़ाकर उसने कहा, "आचार्यवर, प्रगति चाहे इतिहासमें कुछ भी लिखे; गौरव और कलंकका दोराहा चाहे जितनी तीव्रतासे परिवर्तित होता रहे, किन्तु नारीका प्रेम अडिग है और प्रेम किस प्रकार कलंकित होता है यह वह सदासे जानती आयी है और सदा जानती रहेगी...मैं...मैं..."

चाणक्य एक फीकी हँसी हँसे। इस हँसीमें उन मान्यताओंकी उपेक्षा थी, जिन्होंने धोखेसे शाश्वत होनेकी घोषणा कर रखी थी। वह बोले, "सदा एक-सा रहा है, सदा एक-सा है, सदा एक रहेगा, इन उक्तियोंका उच्चारण करनेवाले संसारके सबसे बड़े धूर्त्त और पाखंडी हैं। हम आज जो श्लोक लिख जायेंगे, आनेवाला समय उनमेंसे अनेकोंको असत्य और पुरातन कहकर हमें पीछे छोड़ देगा। आज जो हम लिख रहे हैं वह सत्यके आधारपर है।" और सहसा ही उस अतीव आकर्षक रमणीके मुखपर जमे हुए आचार्यके नेत्र फैल गये। उनमें आश्चर्य था, क्रोध था और साथ ही साथ एक भयानक उपहास भी था। उनका स्वर तीव्र हो गया और उन्होंने भौंहें टेढ़ी करते हुए कहा, "और अब हमारे सामने एक नवीन रहस्यका भेद प्रकट हुआ है। पाखंडी महानन्दके महलोंमें रूपके बलपर निवास करने वाली नारी...तुझे और केवल..." उनकी आँखोंकी ज्योतिमें घृणाके चिह्न उभर आये, "तुझे जीवित पुरुषसे प्रेम करनेका अधिकार नहीं है।"

"ओह !" रमणीका सिर घूम गया। उसके नेत्रोंकी पुतलियाँ फिरने लगीं और अचेतन होते हुए उसके मस्तिष्कमें आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यके अन्तिम शब्द गूँज उठे... "तेरे हाथों पर्वतराजका अन्त, यहीं चाणक्यकी अन्तिम व्यवस्था है !"

सौन्दर्यकी वह कलामूर्त्ति अपने उस रहस्यको अपने भीतर ही घोटे भूमि-पर अचेतन होकर गिर पड़ी, उसने आचार्यप्रवर चाणक्यके क्रोधको भड़का दिया था। आचार्यने दण्ड-घोष किया और प्रहरियोंके आ जानेपर रमणीको उसके कक्षमें भेज देनेका आदेश दिया। निर्देश था कि हर घड़ी उसके द्वार पर आचार्यके विशेष अंगरक्षकोंका पहरा रहे और उसके जागरण पर उसे पर्वतराजके पास सोलहों शृंगारसे विभूषित करके भेजा जाये।

× × ×

आचार्यके मस्तकपर उभरी हुई धमनी अभी दब भी नहीं पायी थी कि प्रहरीने उद्घोष किया : "मगध छत्रपति, महाराजाधिराज, सम्राट्—चन्द्र-गुप्त मौर्य उपस्थित होना चाहते हैं, आचार्यवर !"

"अनुमति है", आचार्यने कहा।

चन्द्रगुप्तने कक्षमें प्रवेश करते ही देखा कि चौकीके सामने आचार्य विष्णुगुप्त छातीपर हाथ बाँधे खड़े हैं। दोनोंकी अवस्था एक ही थी। अन्तर था तो यह कि आचार्यके नेत्रोंसे क्रोधकी सर्वभक्षी किरणें बिदा ले रही थीं और उनके प्रबल शिष्यके नेत्रोंमें उनका प्रवेश हो रहा था।

कामना और वासनासे दग्ध हृदयकी ओरसे सिर हटाकर चन्द्रगुप्तने कहा, "आचार्यवर, आपने...!"

अबतक आचार्यने गुरुके प्रति शिष्यके अभिवादनकी प्रतीक्षा की थी। जब वह नहीं मिला, तो बात आरम्भ करनेसे पूर्व ही उन्होंने अपना कर्त्तव्य निभाया। आशीषका हाथ ऊँचा उठाते हुए वह बोले, "महाराजाधिराज, सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यकी जय !"

चन्द्रगुप्त अप्रतिभ हो गया। अपनी भूलके पश्चात्तापमें वह एक क्षण तक अवाक् खड़ा रहा, किन्तु हृदयमें धधकती हुई ज्वाला फिर भड़की।

वह बोला, "नहीं, कहिए कि आचार्यप्रवर, ब्राह्मणकुलशिरोमणि, महर्षि विष्णुगुप्त चाणक्यकी जय। चन्द्रगुप्तका नाम न लीजिए। खिलौनोंको इतना बढ़ावा नहीं दिया जाता, आचार्यवर !"

"ओह !" चाणक्यने भौंह ऊँचे उठायी। "आचार्यका शिष्य विद्रोही बनकर आया है, और वह विद्रोह भी केवल एक साधारण नारीके लिए !"

चन्द्रगुप्तके माथेपर बल पड़ गये, "नहीं, एक सम्राट्की साधारण-सी आज्ञाका उल्लंघन किये जानके लिए।"

चाणक्य उपेक्षासे हँसे। "साधारण आज्ञाएँ सम्राट् नहीं, सम्राटोंके अनुचर देते हैं। हम मगधके सम्राट्की हर इच्छाको जानते हैं। हम जानते हैं कि मगधके अथाह और विस्तीर्ण समुद्रमें शासन करनेवाले जलयानपर अभी हमारे खिलौनेका एक ही पैर रखा गया है। जब यानमें उनके दोनों पैर आ जायँगे, तव हम उसे अपनी समस्त शक्तिसे किनारेपर खड़े होकर बीच समुद्रमें धकेल देंगे और उसे उसके भाग्यपर छोड़ देंगे। उससे पहले सम्राट्के लिए अपने मनमें विद्रोहको स्थान देना उचित नहीं है। आचार्य विष्णुगुप्तन एक दिन कुमार चन्द्रगुप्तके सामने जो प्रतिज्ञा की थी उसके पूर्ण होनेसे पहले..."

लेकिन चन्द्रगुप्तके पास अपने बोल थे। वह बीचमें ही बोल उठा, "उसके पूर्ण होनेसे पहले सम्राट्को एक पलके लिए भी यह नहीं समझने दिया जायेगा कि मगध उसका है, यही न ? जब चन्द्रगुप्तके हाथ मगधकी विद्रोही शक्तियोंको जड़से उखाड़ फेंकेंगे, तब उसे दूधमें पड़ी हुई मक्खीकी तरह चुटकीसे उठाकर फेंक दिया जायेगा।"

"कुमार !" आचार्यके मस्तिष्ककी धमनी फिर उभर आयी। यह अविश्वासकी सीमा थी। उन्होंने कहा, "सम्राट् होनेका यह अर्थ नहीं है कि मर्यादा न रहे। चन्द्रगुप्तने मगधका साम्राज्य जय कर लिया है। प्यासेके सम्मुख दूधका स्वच्छ पात्र आ गया है। हमें डर है कि तीखे डंकवाली यह वीर मक्खी उतावलीमें दूधमें न गिर पड़े। स्मरण रखना, यदि ऐसा

हो गया, तो उसे दूधसे बाहर निकालकर फेंक देनेवाली चुटकी आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यकी नहीं होगी, पर्वतराजकी होगी। सम्राट् चन्द्रगुप्त, राजनीतिक सूध-बूझसे हीन राजा देर-सबेर निश्चय ही विनाशको प्राप्त होता है। गुरुके प्रति शिष्यके अविश्वासकी यह चरम सीमा है।"

चन्द्रगुप्त चाणक्यके एक ही प्रहारसे तड़प गया। कामनाओंकी आग इतनी जल्दी नहीं बुझा करती। वह चाहता था कि मगध विजय कर लेनेके बाद उसके लिए एक निर्बाध क्षेत्र हो। उसने कहा, "आचार्यने ही शिष्यको राजनीतिमें अविश्वासकी यह सीख दी है। क्या आज वही शिक्षा ग़लत होने जा रही है ?" साथ ही उसका एक हाथ अपनी कमरसे लटकी तलवारकी मू पर अनजानमें ही फिरने लगा।

चन्द्रगुप्तके हाथकी स्थिति चाणक्यके तीव्र नेत्रोंसे छिपी नहीं रही। उनके मस्तिष्ककी धमनी और भी तीव्र गतिसे धमकने लगी। नेत्र आश्चर्यसे विस्फारित हो गये। यही वह व्यक्ति था, जिसके लिए उन्होंने मगधका साम्राज्य जय किया था! यह तीव्र स्वरमें बोले, "हमें प्रसन्नता है कि राजनीतिका मूलमंत्र मगधराजकी समझमें आ गया है। अविश्वास ही वह मूलमंत्र है, जिसके आधारपर राजनीतिका पोषण होता है। हमने आजतक सम्राट्से यह प्रार्थना नहीं की कि हमपर अविश्वास न किया जाय। इस संसारमें प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी है। न जाने हम भी सम्राट्के उत्कर्षमें अपना कोई स्वार्थ साध रहे हों। चन्द्रगुप्त, ध्यान रखना कोई शासक चाहे कितना ही राजनीतिमें निपुण हो, किन्तु समस्त विश्वासों और अविश्वासोंके बीचसे निकलकर जो परिणाम सामने आता है, उसके अनुरूप ही राजनीतिमें विश्वासके पात्र निश्चित करने होते हैं। अपने स्वार्थकी दिशामें स्वार्थ रखनेवाले व्यक्तिपर जो भी व्यक्ति विश्वास नहीं करता, उसे अपने नाशपर अवश्य विश्वास करना पड़ता है। अब आगे बढ़ो, यदि इस खड्गमें धार हो, तो इसका उपयोग करो।"

चन्द्रगुप्तका मस्तक जिस मुद्रामें नीचे द्वारसे होकर आया था, फिर उसी स्थितिमें जड़ हो गया। सहसा वह पृथ्वीपर गिरकर आचार्यके हाथों-

को चूमता हुआ बोला, "क्षमा, आचार्यवर, क्षमा कीजिए ! मैं वासनासे अन्धा हो गया था ।"

चन्द्रगुप्तके शीश पर आशीषका हाथ रखते हुए आचार्यने कहा, "कल सुबह तक सम्राट्के शेष संशयका भी निवारण हो जायगा । चन्द्रगुप्त, जब तक सूर्य और चन्द्रमा आकाशमें जगमगाते रहेंगे, तेरी कीर्त्ति-पताका फहराती रहेगी ।"

अपनी आँखोंकी नमी पोंछता हुआ यह शिष्य सम्राट् गुरुके कक्षसे चुपचाप बाहर आ गया ।

× × ×

उसी रातको उर्वशीकी कल्पनाका रूप देकर राज-परिचारिकाओंने मोहिनीको मानव पर्वतराजके महलमें भेज दिया ।

धड़कता हुआ हृदय अपने एक हाथसे आँचलमें छिपाकर थामे हुए प्रेमकी वह अनधिकारिन् पर्वतराजके कक्षमें पहुँची । यह व्यक्ति प्रौढ़ताकी सीमाको छू रहा था, किन्तु प्रेमसे वंचिता एक नारीके लिए उसमें न जाने ऐसा क्या था, जिसकी उपेक्षा करना मोहिनी-जैसी नारीके लिए भी सम्भव न हो सका । क्या वह विलासकी आकांक्षा थी ?

"स्वागत है", पर्वतराजने उठकर कहा, "प्रतीक्षा और मिलनके संगमपर पुरुष नारीका अभिनन्दन करता है ।"

आकांक्षा कितनी स्पष्ट बोल रही है ! किन्तु कितनी निर्मल वाणी है ! मोहिनी ठिठककर द्वारपर खड़ी हो गई ।

"न, न" उँगलीसे वर्जना करके पर्वतकने बचपनका हास्य उँडेलते हुए कहा, "संकोच मिलनके आनन्दका नाश कर देता है । हमने सैकड़ों अनुपम सुन्दरियोंको देखा और उन सबकी स्मृतियाँ हमारे मन पर चित्रकार की कलाकी तरह अंकित हैं । वैराग्यसे नहीं, किन्तु उन स्मृतियोंकी उपेक्षा न कर पानेके कारण हम संसारकी विलासक्रीड़ासे मुँह मोड़ चुके हैं । इस सोई हुई कामनाकी अग्निको आज एक ऐसी मागधीने फिर प्रज्वलित किया है, जिसके कारण हमें भय है कि कहीं वे समस्त स्मृतियाँ धुल-पुँछ न जायें ।"

पर्वतककी वाणीमें कामना, सरलता, निर्लज्जता और मोहका समान संमिश्रण था, फिर भी न जाने क्यों वह इतना मोहक था ! महानन्दकी विलास-भूमिमें पली हुई राजरमणीका हृदय न जानें क्यों बिंधा जा रहा था। उसने कातर नेत्रोंसे पर्वतकके रूपमें कामदेवके दर्शन किये। पुरुषकी स छविने किस बुरी तरह नारीको मोहा था।

द्वारपर खड़ी मोहिनीके अधर कुछ हिले, किन्तु अधरोंकी उस गतिमें कोई मानवी स्वर नहीं था। वह कुछ कहना चाह रही थी, पर उसकी वाणी जड़ थी।

पर्वतक खिलखिल कर हँस पड़ा, "मगध आश्चर्यका भंडार है और उनमें एक आश्चर्य तुम हो। क्या तुम हमसे यह कहलाना चाहती हो कि हम तुमसे प्रेम करते हैं ?" वह फिर बड़े ज़ोरसे हँसा। उस हास्यमें चपलता थी। "कितनी भोली हो ! अपने राज्यको क्षणभरमें उलट-पलट करनेकी शक्ति रखनेवाला राजा जब आज्ञा देकर किसी रमणीको अपने कक्षमें बुला भेजता है, तो उसे प्रेमका नाम कोई नहीं देता। राजा यदि प्रेमका दम्भ करे, तो भी कोई विश्वास नहीं करता। मालूम होता है कि तुम हमारी आज्ञासे बाध्य होकर यहाँ आयी हो। हम मुँहसे नहीं कहते, किन्तु प्रेमका परिचय परिणामसे अवश्य दे सकते हैं। ऐसा परिणाम, जिसकी तुम्हें आशा भी नहीं हो सकती। आचार्य विष्णुगुप्तका कहना भी तो यही है कि प्रत्येक सत्य-असत्य उसके परिणामसे प्रकट हो सकता है।"

मोहिनीका मस्तिष्क भन्ना उठा। हथौड़ोंकी तरह उसके मानसपर इन शब्दोंकी चोट पड़ने लगी, 'हत्या नारीके लिए कलंक है. . .हत्या नारीके प्रेमपर अमिट धब्बा है, जिसको देखकर आनेवाला समय सदा नारीको अविश्वसनीय कह-कहकर उसका तिरस्कार करता रहेगा।' वह सिर पकड़कर वहीं द्वारपर बैठने लगी।

पर्वतक चपलताके साथ आगे बढ़ा। उसे बाहोंमें संभालकर उसने आसनका आधार दिया। मोहिनीने नेत्र खोले और उसकी पलकोंकी लम्बी पंक्ति पर्वतकके माथेसे छू गयी। वह तड़पकर खड़ी हो गयी।

"ओह !" पर्वतक सीधा खड़ा होकर उसी स्मित मुद्रासे आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला। "तो हमारा ही विचार ठीक था। मागधी, तुम मजबूर होकर आयी हो। अब हम अपने प्रेमको क्या कहकर समझाएँ ? हमें उस प्रेमका प्रमाण भी देना है—बड़ी कठिन समस्या है—है न ?"

मोहिनीके लिए किसी पुरुषका इस प्रकारका प्रेम-निवेदन सर्वथा नवीन था। इस नवीनतामें एक ऐसा आकर्षण था, जो नागपाशकी तरह उसे चारों ओरसे जकड़ता हुआ जा रहा था। उसने पलकें ऊपर उठाकर पर्वतकको देखा।

"मालूम होता है कि तुम अनबोलती प्रेमिका हो," पर्वतकने कहा। "भला, विधाताने क्या संसार रचाया है ! लेकिन नहीं, लोग झूठ कहते हैं। इस संसारको विधाताने नहीं रचाया। वह इतनी बड़ी असंगति नहीं रख सकता। वास्तवमें जब लोगोंको कुछ समझमें नहीं आया, तो उन्होंने उस नासमझीका भार किसीके सिरपर थोपनेके लिए स्वयं विधाताकी रचना कर डाली। तो, हमें प्रमाण देना है...लेकिन हाँ...इतनी देरसे हम जो बोल रहे हैं वह सब तुम्हें सुनाई भी दे रहा है ?"

"नरहत्या पाप है !" मोहिनीका अन्तर मूक भाषामें बोल रहा था। उसीमें उसे पर्वतकके वे शब्द सुनाई दिये और आप-ही-आप उसकी गरदनने हिलकर जैसे अपनी स्वीकारोक्ति प्रकट कर दी।

पर्वतक बड़े ज़ोरसे हँसा। "मैदानोंके एक साधूने हमें एक बार बताया था कि सबसे बड़ा प्रेम त्यागमें है। देखें आज उसकी परीक्षा करके। मालूम होता है कि हमारा हृदय आज उसी प्रेमके दलदलमें फँस गया है। इसलिए तुम हमारे प्रमका प्रमाण देखो, और हम त्याग करें।" पर्वतकने गंभीर होकर कहा, "अच्छा, यदि तुम्हें हमपर विश्वास हो, तो हमारा संग स्वीकार करो, अन्यथा हम तुम्हें मुक्त करते हैं। स्वाधीन प्रेम ही प्रेमीके लिए सबसे बड़ा आकर्षण है।"

और वह इस मनुष्यकी हत्या करने आयी है ! क्या संसारमें समस्त

नीति-अनीति केवल कल्पनाकी वस्तुएँ ही हैं ? मोहिनी अपने आप ही इसका उत्तर न दे सकी। वह द्वारकी ओर जानेके स्थानपर इस अपूर्व प्रेमीकी ओर बढ़ी और उसके पैरोंपर गिरनेके लिए झुकी।

तभी पर्वतकने मोहिनीके गिरते हुए शरीरको अपनी बाहुओंपर संभाल लिया। वह हँसकर अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करता हुआ बोला, "यह बहुत पुरानी बात है। स्वाधीन प्रेमिकाका स्थान पैरोंमें नहीं, हृदयके पास होता है।"

"नहीं, पर्वतराज, नहीं !" मोहिनीने छतकी ओर भयसे निहारते हुए कहा, "मुझे क्षमा कीजिए।"

"क्यों, हमपर विश्वास नहीं ?" पर्वतकने शान्त किन्तु उत्सुक वाणीसे पूछा।

"मैं कहती हूँ मुझपर ही विश्वास मत कीजिए," उभड़कर आते हुए पीड़क रोदनको दोनों हाथोंसे रोकनेकी चेष्टामें मुँह छिपाये हुए मोहिनीने कहा—"मुझे आचार्य विष्णुगुप्तने आपकी हत्या करनेके लिए भेजा है।"

एक क्षण तक स्थिति समझकर पर्वतक ठहाका मारकर हँस पड़ा। "तब, आचार्यने नारी और पुरुषको समझनेमें पहली बार भूल की। यदि भूल नहीं की, तो भी हम यह खतरा उठानेके लिए तैयार हैं।" और उसकी आँखोंमें साहस और विश्वासका सम्मिलित पुट दिखाई पड़ा।

मोहिनी सुबक उठी। "नहीं, पर्वतराज !" अपने मनकी पीड़ाको पलंगपर गिरकर दबानेकी चेष्टा करती हुई वह बोल उठी, "मुझे प्रेम करनेका अधिकार नहीं है। मैं वंचिता हूँ। विगत सम्राट् महानन्दने जिन कन्याओंको सांसारिक भावनाओंसे जबरदस्ती नोचकर केवल विनाशके लिए पालन किया था, मैं उनमेंसे एक हूँ—मैं विषकन्या हूँ।"

यही वह रहस्य था, जिसे चाणक्यने लक्ष्य किया था। यही वह भेद था, जिसे अगले दिन सुबहको जानकर चन्द्रगुप्तका मस्तक चाणक्यके सामने झुक गया था। इस रहस्यको इस प्रकार प्रकट होते देखकर इतनी देरसे

मुखर पर्वतकका मुख पीला पड़ गया। यह वह भौतिक संसार था, जहाँ भावनाएँ अपना मूल्य खो देती हैं।

लगभग एक घड़ी किंकर्तव्यविमूढ़ पर्वतक जहाँ-का-तहाँ खड़ा रहा। तबतक पलंग पर पड़ी विषकन्या रोती-रोती शायद सो गयी थी। पर्वतकने कुछ निश्चय किया और वह कक्षसे बाहर निकला। एक परिचारिकाको उसने अपने पुत्र मलयकेतुको तुरन्त बुलानेके लिए भेजा। समय बीतते न बीतते वह आ गया। पर्वतकने उसके कंधेपर हाथ रखते हुए कहा: 'वत्स, कल अपने देश लौट जाना। आचार्य चाणक्यकी विकट राजनीतिका दुर्गम चक्र चल रहा है। इस महाऋषिके अस्त्र अचूक हैं। एकबार ब्रह्माका अस्त्र निरर्थक हो जाय, किन्तु चाणक्यका अस्त्र नहीं चूकेगा। राजनीतिके प्रपंचमें न पड़ना, नहीं तो सर्वनाश होगा।"

"और आप?" मलयकेतु आश्चर्यसे कुछ भी न समझकर बोला।

"हम?" पर्वतराज हँसे, "आचार्यने हमारे लिए एक ऐसी अनुपम भेंट भेजी है, जिसे हम सब कुछ जानते हुए भी अस्वीकार करनेमें असमर्थ हैं। यह जानते हुए भी कि वह...खैर, तुम जाओ। जैसा कहा वैसा प्रबंध करो।"

मलयकेतु विस्मयकी प्रतिमूर्ति बना कक्षकी ओर जाते हुए पर्वतककी विशाल पीठ देखता रह गया।

हिंसक

ईसाके जन्ममें अभी लगभग दो सौ वर्षसे कुछ कम ही शेष थे, जब विशाल भारतमें महान् अशोककी अहिंसाने मनुष्यकी पाशविक वृत्तियोंपर विजय प्राप्त करके तथागतकी परंपराको अजर-अमर कर दिया था। अशोकके बाद उसके वंशज आये और चले गये, और जन-जीवनकी दुर्गम राहपर शान्ति-प्रेमियोंके पदचिह्नोंकी एक लंबी कतार अंकित होती चली गई। लोग हिंसासे इतना घबराये, इतना भागे, कि अशोक-द्वारा कलिंगके नरसंहार जैसे कृत्योंकी चर्चा अहिंसाका उपदेश देते समय उदाहरणके तौरपर प्रयोग करके भक्तोंके मनोंमें केवल झुरझुरी पैदा करनेके लिए की जाती थी। अहिंसा स्वयं एक अस्त्र बन गई थी।

अशोक महान्के वंशजोंने अपने प्रपितामहकी लगाई हुई बेलको बराबर सींची, बढ़ाई, यहाँ तक कि उसने जनताके शरीरको भी जकड़ लिया। फिर भी लोग सुखी थे क्योंकि सुख शांतिकी देन है। किन्तु कब तक?

परंपरागत शांतिसे संचित निधिपर विदेशियोंके दाँत गड़ने लगे। मौर्यवंशके अंतिम सम्राट् बृहद्रथके समयमें यूनान उन विदेशी गिद्धोंमें प्रमुख था। हर रोज़ गुप्तचर यूनान, तातार और फ़ारसकी संशयजनक हलचलोंके समाचार लाते। किन्तु इस कालकी यदि कोई उपेक्षित संख्या थी, तो वह सेना थी।

साठ वर्षके वयोवृद्ध महासेनापति इन समाचारोंसे त्रस्त होकर एक दिन महाराज बृहद्रथके सामने विशेष रूपसे उपस्थित हुए।

"परम भट्टारक, नीच विदेशी नहीं जानते कि बुद्धके धर्मका मर्म क्या है। ज्ञानको ग्रहण करनेसे पहले अज्ञानी सदा उसे नष्ट करनेकी चिन्तामें रहता है।"

"आपने ठीक कहा, महासेनापति," सम्राट्ने स्वर्णपत्रके आवरणसे मँढ़ी हस्तलिखित विनयपिटकपर हाथ रखते हुए कहा। "विदेशोंमें धर्मप्रचार करनेके लिए अभी पर्यटकोंकी संख्या और बढ़नी आवश्यक है।"

महासेनापतिने होंठ भींचे। "अज्ञानीको समझानेसे पहले उसके प्रहारों को रोकना आवश्यक है, देवाधिदेव। इस समय विदेशी प्रहारको रोकनेके लिए बल संचय करना ही होगा। इसलिए मैं अपने पद-त्यागकी अनुमति चाहता हूँ।"

बल संचयकी आवश्यकता और महासेनापतिका पद-त्याग इन दो विरोधी बातोंसे किंचित् विस्मित हो सम्राट्ने पूछा, "क्यों? सेना तो आपके अधिकारमें जितनी सुखी है उतनी न कभी थी न कभी होगी।"

वृद्ध योद्धाने अपनी घनी मूँछोंके दो बाल दांतोंसे दबाकर नोच डाले। "सेनाके सुख और प्रजाके सुखमें बैर है, देव। नये और युवा हाथोंके द्वारा सेनाका संगठन होना चाहिए। बूढ़े बैलमें बल नहीं रहता। श्रीमन्!"

जिस किसी प्रकार महासेनापतिने अपना पदत्याग स्वीकार करा लिया। इसमें सबसे बड़ी कठिनाई उस अहिंसाप्रेमी सम्राट्के लिए यही थी कि नये सेनापतिकी नियुक्तिके लिए नियमके अनुसार सशस्त्र प्रतियोगिता होनी थी और इससे हिंसाकी गंध आती थी। इतने बड़े पदकी प्रतियोगितामें भारी संख्यामें जनताकी उपस्थिति अनिवार्य थी, जो जनसाधारणके आध्यात्मिक स्वास्थ्यके लिए निश्चय ही हानिकारक थी। सबसे बड़ी बात इस प्रतियोगितामें यह थी कि विजयीके हाथों द्वन्द्व-युद्धमें यदि पराजित प्रतियोगी मारा जाय, तो उसके लिए कोई दंड-विधान नहीं था।

इस अपूर्व प्रतियोगिताका समाचार पंख लगाकर उड़ा। पचासों वर्षसे जिस कलाकी उपेक्षा होती चली आई थी, इतने बड़े पैमानेपर उसका प्रदर्शन लोगोंके लिए दुर्लभ मनोरंजनका संदेश लेकर आया। तीर्थयात्रा पर ही निकलनेवाली सवारियाँ आज सजीं। गन्धर्वशालाओंके नृत्यगान उस दिन

बंद हो गये। पाटलिपुत्रके गली-कूचोंमें परदेशियोंके द्रुतगामी पदचाप और उनके मुखोंसे निकलती उत्सुकताकी मर्मर ध्वनि मात्र ही सुनाई देती थी।

शस्त्र-विद्याका एकमात्र अखाड़ा महासेनापतिके प्रयत्नोंसे पाटलिपुत्रमें अभी स्वतंत्र रूपसे चल रहा था, नहीं तो सारी सैनिक क्रियाएँ सेना ही में दिये जानेका नियम था। दसियों वर्षसे नई भरती न होनेके कारण इस नियमका व्यवहार भी बहुधा नहीं होता था। इसलिए उस अखाड़ेका प्रधान वसंत भाट पाटलिपुत्रके अधिकृत राज्योंके भीतर शस्त्र-विद्यामें अपना सानी नहीं रखता था। सम्राट्की ओरसे इस प्रतियोगिता-प्रधान समारोहकी अनुमति थोड़ी-सी ही कठिनाईसे केवल इसलिए मिल पाई थी कि वसंत भाटके निर्विरोध चुने जानेकी पूरी-पूरी आशा की जाती थी।

समारोहका प्रारम्भ असाधारण रूपसे हुआ। नगरके बीचोबीच बड़े उद्यानमें बहुत ऊँचा पंडाल बनाया गया ताकि स्थान न मिलनेके कारण अट्टालिकाओंके वातायान और प्रांगणोंपर छा जानेवाले दर्शक यदि कुछ सुन न सकें, तो देख सब कुछ सकें।

सम्राट्ने अकथनीय हर्ष-प्रदर्शनके बीच सम्राज्ञी सुदर्शनादेवीके साथ मण्डपमें प्रवेश किया। सम्राट्की प्रौढ़ आयुमें उनका यह अन्तिम विवाह तीन हज़ारसे कुछ ऊपरकी संख्यामें आता था। अन्य अनेक रानियोंका सर्वोच्च पद तोड़कर सुन्दरी सुदर्शनाको पटरानीका पद दिया गया था क्योंकि उसके चित्तमें तथागतकी अपार भक्ति, उसकी वाणीमें बुद्धके प्रवचनोंकी कोमलता, और उसके शरीरमें अप्सराओंकी कान्ति थी। इतने गुणोंको लेकर वह मौर्य वंशकी अंतिम सम्राज्ञी बनी थी।

मध्यभारतके मंदसौर नामक शक्तिशाली प्रान्तके अधिपति विशाखदत्त भोगपतिको उसके पदकी महत्ताके अनुरूप सभासदोंमें सर्वोच्च आसन प्राप्त था। उसने सबसे पहले उठकर सम्राट्के सामने सिर झुकाया, और हौलेसे सम्राज्ञीके बायें हाथकी रत्नोंसे जगमगाती दो कोमल उँगलियोंको चूम लिया।

सम्राज्ञी सुदर्शनाने अपनेमें एक हल्का-सा कंपन अनुभव किया, किन्तु वह अपनी स्वाभाविक मुसकानसे शांत पलकोंको प्रान्तपतिके प्रति उसके अभिवादनकी स्वीकारोक्तिमें झपकाकर सम्राट्के बराबरवाले सिंहासनपर बैठ गई। विशाखदत्त भोगपातने असंतोषकी एक गहरी और अलक्ष्य साँस ली। उसमें इस प्रकारका असंतोष अनुभव करनेकी शक्ति थी और वह शक्ति मौर्यकालके उस चरणमें सब जगह सर्वमान्य थी।

नियमानुकूल उद्घोषकने ऊँचे स्वरसे घोषणा की: "महाप्रतापी मौर्यकुलके महासेनापतिने अपने पदका स्वेच्छासे त्याग किया है। उस महत्त्वशाली पदके लिए वसंत भाटका नाम प्रस्तुत है। जिस किसीको इसमें विरोध हो, जो कोई इस गौरवपूर्ण स्थानके लिए अपनेको वसंत भाटसे अधिक योग्य और वली समझता हो वह प्रतियोगिताके लिए अखाड़ेमें आये।" और फिर उसने सम्राट् द्वारा विशेष रूपसे बताये एक वाक्यको अंतमें और जोड़ दिया: "है कोई ऐसा वीर ?"

चारों ओर निस्तब्धता छा गई। घड़ीकी चौथाई तक एक साँस तक सुनाई न दी। कोई नहीं बोला। इस बीच वस्त्राभूषणोंसे सजा, अपनी चौड़ी छाती फुलाये वसंत भाट एक ओरसे कूदकर सामने आया और उसने अपनी कमरसे लटका लंबा खड्ग शानसे एक ओर करके सम्राट् बृहद्रथके सामने शीश झुकाया।

उद्घोषकने दूसरी बार वही घोषणा दुहराई, पहलेसे और भी अधिक ऊँचे स्वरमें। फिर घड़ीकी एक चौथाई ऐसे ही बीत गई। और फिर तीसरी बार घोषणाका तीव्र स्वर मण्डपके नीरस वातावरणमें गूँज उठा। चुप्पी! जैसे सारा पाटलिपुत्र दिनको रात समझकर सो गया था।

सहसा एक ओरको कुछ हलचल-सी हुई, कुछ रव भी हुआ। लोगोंके बीचसे निकलकर एक भव्य और वीर आकृति अलग खड़ी हो गई। वह व्यक्ति हाँफ रहा था, जैसे बहुत दूरसे चलकर आया हो।

सम्राट्ने उसे संशयसे देखा। असंख्य मनुष्योंकी निगाहें उसपर जम गईं। यहाँ तक कि कट्टर बौद्ध धर्मकी अनुयायी सम्राज्ञी सुदर्शनाकी

दृष्टिमें प्रशंसाका भी कुछ भाव था। वसंत भाटकी आँखोंसे स्फुलिंग छूट रहे थे।

नवागतने अपना खड्ग ऊँचा करके सम्राट्के सम्मानमें गरदन झुकाई। उद्घोषकने पूछा, "तुम्हारा नाम ?"

"पुष्यमित्र," शांत किन्तु सबल वाणीमें उत्तर मिला।

अब जैसे सारी नीरवता हवा हो गई। चारों ओरसे स्पष्ट किन्तु दबे स्वरमें इस अनोखे साहसको दम्भका नाम लिया जाने लगा। उद्घोषकने इस शोर-शराबेके बीच नवागतका परिचय आदि पूछकर सम्राट्की ओर देखा। सम्राट्ने महासेनापतिकी ओर देखा, और महासेनापति अपनी आँखोंमें प्रशंसाकी सच्ची चमक लिये युवक पुष्यमित्रमें अपना भावी उत्तराधिकारी ढूँढ़ रहे थे।

अभ्यर्थनाके लिए युवक पुष्यमित्र सीधा सम्राट्के सामने आया। सम्राट् और सम्राज्ञी दोनोंने उसकी अभ्यर्थनाको स्वीकार किया। पुष्यमित्रकी दृष्टि ऊपर उठी और सहसा ही वह सम्राज्ञी सुदर्शनाकी दृष्टिसे टकरा गई। मनने बड़े ज़ोरसे उस रूपराशिकी गरिमा बखाननी चाही, किन्तु मनके मालिक पुष्यमित्रने संयम किया। जहाँतक हाथ नहीं पहुँच सकता वहाँ मनके अश्वकी लगाम रोक लेनी ही बुद्धिमानी है।

अखाड़ेके बीचमें दोनों प्रतियोगियोंको आमने-सामने देखकर प्रतियोगिताके परिणामके विषयमें पहले सम्राट् हीके मनमें संशयका उदय हुआ। जोड़ीदारोंके बलमें उतनी विषमता नहीं थी, जितनी प्रतीत हो रही थी। साथ-साथ ही लोगोंने इस तथ्यका अनुमान किया, और कलरव मद्धिम पड़ता गया।

खड्ग-युद्धके आरम्भके कुछ क्षण बड़े नीरस बीते। फिर दाँव-पेंच और कौशलका प्रदर्शन करनेका प्रयत्न किया गया। किन्तु शीघ्र ही संघर्ष तीव्र और मर्मान्तिक हो गया। वसंत भाट, पाटलिपुत्रकी वीरताका नायक था। पुष्यमित्र पाटलिपुत्रका सम्मानित अतिथि था। और नायककी आँखों-

में भय छाता जा रहा था। युवककी कलाका जोड़ नहीं मिल रहा था। यह स्पष्ट प्रकट हो रहा था कि कला प्राचीनताकी बपौती नहीं होती।

सहसा महासेनापतिके मुँहपर घृणाका भाव प्रकट हुआ। वसंत भाटने ईर्ष्याके वशीभूत होकर ओछा दाँव मारा था। यह दाँव नियमके विरुद्ध था। किन्तु उस ओछेपनको लक्ष्य करनेवाला पारंगत ही वहाँ कौन था? पुष्यमित्रने कौशलसे उस दाँवको तो बचा लिया, लेकिन उसकी आँखोंमें प्रतिहिंसाकी ज्वाला कौंध गई। उसके बादके क्षण निर्णायक थे। रण-कुशलतासे भरे लगातार अनेक प्रहार करके पुष्यमित्रने विरोधीके हृदयसे अपना लंबा खड्ग लगा दिया। पीछे अखाड़ेकी सीमा तनिक ऊँची थी, और वसंत भाट लाचार हो गया था।

इसके बाद अचानक ही एक ऐसी घटना घटी, जिसने मौर्यकुलका अन्त करनेमें प्रमुख भाग लिया। तेजीसे पुष्यमित्रकी निगाहें अपार जनसमूहकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए घूम गईं। जनता आँखें फाड़े खड़ी थी। वसंत भाट हार गया था यह कुछ लोगोंपर प्रकट हो पाया था कुछ पर नहीं। वह अल्प क्षण इस प्रकारका था, जिसमें वसंत भाटका जीवन पुष्यमित्रके खड्गकी एक जुंबिशपर टँगा हुआ था। पुष्यमित्रके लिए सोचनेका समय इतना थोड़ा था कि यदि वह हिचकिचाहट दिखाता, तो सम्राट्के इशारेसे प्रतियोगिता उसके पक्षमें समाप्त घोषित कर दी जाती। इस अल्प क्षण को केवल इने-गिने व्यक्तियोंने पहचाना, और उनमें सम्राज्ञी सुदर्शना भी एक थी।

एक क्षण, नहीं, एक क्षणका कुछ भाग संसारके बड़े-बड़े परिवर्तनोंका उत्तरदायी होता देखा गया है। परिश्रमकी गरमी, विरोधीकी नीचताकी प्रतिक्रिया तथा प्रतियोगिताका जोश इन सबने एक साथ मिलकर युवकके मस्तिष्कमें आग लगा दी, और उस एक क्षणके कुछ भागके समाप्त होनेतक पुष्यमित्रका चमचमाता खड्ग विद्युत्की गतिसे वसंत भाटकी छातीके पार हो गया। कुछ देर वह खड़ा रहा, फिर कटे वृक्षकी भाँति भूमिपर गिर पड़ा।

कर्णभेदी कोलाहल मचा। व्यायामसे थके भारी पग एकके बाद एक रखता हुआ पुष्यमित्र अखाड़ेके बाहर आया। आँखें ऊपर उठाकर उसने एक बार शोर मचाते हुए जनसमूहको चमकती हुई दृष्टिसे देखा। एक प्रकारकी मोहनिद्रा, जो अखाड़ेके वातावरणसे ही संबंध रखती है, टूट गई। पुष्यमित्रका मुख हर्षके उन्मादसे खिल उठा। जनताका स्वागत ग्रहण करनेके लिए वह लोगोंकी ओर बढ़ा, मानो इतने मानव समूहके ऊपर किसी नरेशकी उपस्थितिको वह भूल गया हो।

सम्राट् बृहद्रथके मनपर साँप लोट गया। कितनी भारी नृशंसता है! वह पाटलिपुत्रका स्वामी है, महान् अशोकका प्रपौत्र है। उसीकी आँखोंके सामने एक अपरिचित ब्राह्मण-पुत्रने आकर एक जीते-जागते इन्सानका खून कर दिया है, और वह एक उँगली भी नहीं हिला सकता! उसीके सामने उस व्यक्तिके गलेमें फूलोंकी मालाएँ डाली जा रही थीं, उसे हाथोंमें उठाकर उछाला जा रहा था, और वह जैसे किसी भूली-सी बातको याद करके लोगोंके हाथोंसे निकलकर सम्राट्को अभिवादन करने आ रहा है, जैसे नरहत्या करके उसने पाटलिपुत्रके राज्यका कोई गुरु कार्य संपन्न किया है!

पुष्यमित्रने पाटलिपुत्रके स्वामीके सामने सफलताके गर्वसे शीश झुकाया। सम्राट् जड़ मूर्त्तिकी तरह बैठे रहे। फिर वह और निकट आया, और सीधी दृष्टि किये उसने सम्राज्ञीको प्रणाम किया।

सम्राज्ञी सुदर्शना तनिक हिल गई। उसके मनमें भी एक अपूर्व परितापके-से भाव उठ रहे थे। किन्तु वह परिताप गर्व-खलनका परिताप नहीं था। उसमें जहाँ युवतीकी मनोहारिणी मुद्रा और उसकी वीरताके प्रति सम्मान था वहाँ एक विचित्र प्रकारकी घृणाका पुट था, जो सहसा ही अदबदाकर होंठोंपर आ गई। दबे हुए होंठोंसे सम्राज्ञीने कहा: "हिंसक!"

दबी हुई घृणा इस मिश्रित एक शब्दको सुनकर युवककी गरदन झटके

के साथ ऊपर उठी और रानीकी दृष्टिसे मिल गई। रानीके होंठोंपर अब तक एक सच्चे बुद्धानुयायीका दुःख सिकुड़नके रूपमें उपस्थित था।

इसी बीच उद्घोषकका तीव्र स्वर वातावरणमें गूँज उठा: "वीर पुष्यमित्रने इस विशाल प्रतियोगितामें विजय प्राप्त की है। अतः नियमानुसार वह मगधके महासेनापति निर्वाचित किये जाते हैं।"

पुष्यमित्र, एक अनजान युवक, एक ही क्षणमें मगधका महासेनापति हो गया।

× × ×

धीरे-धीरे वृद्ध महासेनापतिका स्वप्न चरितार्थ होने लगा। पुष्यमित्र ने मगधकी सेनाओंमें अपूर्व परिवर्तन किया। व्यायामका दौरदौरा चला। अंदरूनी प्रतियोगिताओंपर बल दिया जाने लगा। यूनानी उदाहरण लेकर खड्ग चलानेकी नई परिपाटी चलाई गई। थोड़े ही दिनोंमें मगधकी सेनाओंके युवक खिले हुए फूलोंकी तरह लहराने लगे। उनकी बाहुओंमें मछलियाँ पड़ गईं। मगध शांत रहा, अहिंसक रहा, किन्तु मगधकी रण-वाहिनी दिन-रात व्यस्त हो गई।

फिर भी एक शब्दकी टीस यदि किसीके मनमें हो सकती है, तो वह पुष्यमित्रके मनमें थी। वीर पुरुषके लिए सौन्दर्य ही सबसे आकर्षक वस्तु है। सभी वीर सौन्दर्यको नहीं भोग पाते। किन्तु सभी वीर मन ही मन उसकी पूजा करते हैं। प्रकृतिकी यह देन मानवके प्रयोगसे ऊपरकी चीज़ है। वीरता उसके सम्मुख अपनी बड़ाई चाहती है, किन्तु पुष्यमित्रको सौन्दर्यकी प्रतिमाके मुँहसे घृणाका एक शब्द मिला था: "हिंसक।" किसी दिन उसे अवसर मिले, तो वह पाटलिपुत्रकी इस सबसे सजीली गुड़िया-को समझा दे कि स्वयं वह कितनी बड़ी हिंसक है।

यह अवसर भी शीघ्र ही मिला। मुख्य शरीर-रक्षक सेनाके प्रातः व्यायाम-निरीक्षणसे लौटते हुए नगरकी एक गलीसे रुदनकी एक तीखी ध्वनि पुष्यमित्रके कानोंमें पड़ी। अश्वकी लगाम खिन्च गई। रोनेका शब्द

पुरुषका है। कौन रोता है? क्यों रोता है? शरीर-रक्षकको इशारा हुआ। उसने गलीके एक द्वारपर जाकर दस्तक दे दी। "सम्राट्के नामपर, द्वार खोल दो!"

कुछ देर बाद एक प्रौढ़ व्यक्ति महासेनापतिके सामने लाया गया। पुष्यमित्रने देखा वह जवान था, उसका चेहरा भरा हुआ था, किन्तु शरीरकी हड्डियाँ निकली हुई थीं। अब भी उसके गालोंपर आँसुओंकी दो लंबी रेखाएँ शरमके साथ अपनी कहानी कह रही थीं। पुष्यमित्रको दु:ख हुआ।

"कौन हो तुम? यदि पाटलिपुत्रके पुरुष रोने लगे, तो फिर हँसेगा कौन? क्या तुम चाहते हो कि हम घुटनोंमें सिर देकर रोएँ, और विदेशी हमारे घरोंके द्वारोंपर पहरा देते-देते हँसा करें?"

महासेनापतिकी इस बातको सुनकर वह आदमी हिचकियाँ ले-ले कर रोने लगा। उच्च राज्याधिकारीके सामने इस प्रकार असभ्यताका व्यवहार क्षमा करनेके योग्य नहीं था। वह चिल्ला उठा।

"तुम मगधकी संस्कृतिको बट्टा लगा रहे हो।"

वह आदमी सहसा रोते-रोते चुप हो गया। वह रुँधी हुई वाणीमें बोला: "मगधकी संस्कृति! आज वह रह ही कहाँ गई है? आजका मगध मेरे लिए श्मशान है। मैं श्मशानमें बैठा रो रहा हूँ। क्या तुम कोई परलोककी आत्मा हो, जो मुझे डराने आई हो?" और वह ज़ोरके साथ ठठाकर हँस पड़ा।

वह व्यक्ति पागल हो गया था।

उसी दिन मध्याह्नके समय सम्राज्ञीके महलके मुख्य द्वारपर दो दर्शनार्थी उपस्थित थे। एक मंदसौरका भोगपति विशाखदत्त था और दूसरा मगधका महासेनापति पुष्यमित्र। सुन्दर बग़ीचेमें सम्राज्ञीकी अनुमति मिलनेकी प्रतीक्षामें भोगपति बेचैनीसे टहल रहा था।

दासी अनुमति लेकर आ गई। "महादेवी दोनों सज्जनोंको एक साथ देखना चाहती हैं।"

तनिक अनिच्छासे भोगपतिने पुष्यमित्रको देखा । भोगपतिके मनमें अपनी अवांच्छनीयताको अनुभव करके पुष्यमित्र प्रसन्न हुआ । किन्तु उसे आगे जाने देकर पुष्यमित्र उसके पीछे-पीछे पटरानीके कक्षकी ओर चला ।

द्वारकी ओर पीठ किये रानी वातायनसे दूसरी ओरके बगीचेमें झाँक रही थी । आगतोंकी उपस्थिति जानकर वह बोलीं, "सोमेश्वरके राजाको बिना रक्तपातके ही बौद्ध बनाकर आपने प्रशंसनीय कार्य किया है, भोगपति जी ।"

सम्राज्ञी उसके विनयपूर्वक किये गये प्रणामको नहीं देख रही है यह समझकर भोगपति यंत्रकी तरह सीधा हो गया । "महादेवीके मुखकमलसे प्रशंसा पानेके लिए ही सेवक यहाँ उपस्थित हुआ है ।" वह और कुछ कहना चाहता था, किन्तु महासेनापतिकी उपस्थिति उसे अखर रही थी । उसी भावसे उसने एक बार अपनी आँखोंकी कोरोंसे पुष्यमित्रकी ओर देखा, जो सम्राज्ञीका संबोधन अपनी ओर न पाकर छातीपर बाँहें बाँधे बराबरकी दीवारके मनोहर चित्रमें उलझा हुआ था । फिर भी सेनापतिकी कनखियोंको उसने देख लिया । मन-ही-मन विचार आया कि भोगपतिके अनिच्छित व्यवहार पर नैतिक प्रतिबन्ध रखनेके लिए ही शायद रानीने पुष्यमित्रकी उपस्थिति भी साथ-साथ चाही थी । वह मन-ही-मन हँसा । 'भोगपतिके वांच्छित प्रेमालापको राह नहीं मिल रही है ।'

रानीने भोगपतिकी बातका उत्तर दिया : "सार्वजनिक रूपसे सम्राट् आपके सम्मानकी व्यवस्था कर रहे हैं । वह सम्मान हमारी प्रशंसासे भी बढ़कर है ।"

पुष्यमित्रने सहसा गरदन फेरकर सम्राज्ञीकी ओर देखा । उपस्थितों-की ओर अब भी रानीकी पीठ ज्यों-की-त्यों थी । भोगपतिने फिर अपने तईं सम्राज्ञीको महत्ता दे ही प्रयत्न किया । "महादेवीने ही सेवकको इस सम्मानकी सूचना दी है, यह सत्य उस सम्मानसे भी बढ़कर है. . ." और उसने फिर पुष्यमित्रकी ओर देखकर गंभीर मुद्रा धारण कर ली ।

"हमारे प्रति इस आदरके लिए हम आपको साधुवाद देते हैं।" फिर एक क्षण रुककर भोगपतिको सुननेको मिला, "अब यदि आपकी उपस्थिति का उद्देश्य पूरा हो गया हो, तो हमें आशा है कि आप दूसरे अतिथिको अवसर देनेकी कृपा करेंगे।"

भोगपतिके लिए अब कोई और चारा नहीं था। अपनी उपस्थितिमें पुष्यमित्रको बात करनेका अवसर देनेके लिए वह रुका रहा। लेकिन जब सर्वथा शान्ति ही छाई रही, तो वहाँ ठहरे रहना असंभव हो गया। भूमिको उंगलियोंसे छूकर उसने जाते-जाते कहा, "सेवक प्रणाम करता है।"

"हमारे लिए आप आदरके पात्र हैं," रानीने उत्तरमें कहा। भोगपति मुँह चुभलाता हुआ वहाँसे प्रस्थान कर गया।

अब सम्राज्ञी सुदर्शनाने एकदम मुद्रा फेर ली। वातायनसे आते हुए वायुके झोकोंने बालोंकी दो लटोंको उसके मुँहपर अठखेलियाँ करनेके लिए मुक्त कर दिया। पुष्यमित्रने सावधानीसे अपनी सबल बाहुओंको मोड़कर शीश नवा दिया। अभी तक रानीके साज-शृंगारपर उसकी दृष्टि नहीं पड़ी थी। उसे किंचित् कोमल स्वरमें केवल उसका प्रश्न सुनाई दिया :

"बहुत व्यस्त रहते हैं, महासेनापति?"

"हाँ, महादेवी," सेनापतिने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया। वह जिस लिए आया था, जो झगड़ा उठाने आया था, उसके लिए इतनी ही संक्षिप्त भूमिका की नितान्त आवश्यकता थी।

"सेनाओं का कायाकल्प हो रहा है!" सब कुछ जानते हुए भी रानीने कहा।

"फिर भी हम यूनानियोंसे पीछे हैं, महादेवी। स्वयं हिंसासे हिंसाकी तैयारीमें अधिक समय लगता है।" पुष्यमित्रने फिर छातीपर हाथ बाँध लिये। किन्तु ज्यों-ही किसी और तरफ़ जानबूझकर देखते रहनेसे उकता कर उसकी दृष्टि अलक्ष्य रूपसे उसका उत्तर सुनकर मुसकराती हुई रानीकी दृष्टिसे मिली, उसकी बाहुओंका बंधन टूट कर पीठ पीछे पहुँच गया।

सौंदर्यकी मृदुभाषिणी प्रतिमा कह रही थी, "तो महासेनापति अपनी सम्राज्ञीसे विवाद करने आये हैं...स्वागत है !"

उस अपूर्व रूप-दर्शनसे पुष्यमित्रकी नाड़ीकी गति अनजाने ही कभीकी तीव्र हो गई थी। वह बोला, "अनर्गल विवाद दुर्भावनाओंको जन्म देता है, महादेवी। मुझे महादेवीकी ओरसे 'हिंसक' का पदक मिल चुका है। अतः विवाद करके उसे लौटानेकी इच्छा मुझे नहीं है। महादेवीके अहिंसक राज्यमें निरीह मानव पर कितना अत्याचार हो रहा है, मुझे केवल यही दर्शानेके लिए आना पड़ा है।"

सौंदर्य भी वीरतासे किसी प्रकारका पक्ष चाहता है। वीरताकी कार्य-शील व्यस्तता सदा ही उस कामनाको नहीं बुझा सकती। सम्राज्ञीने तनिक रूखे स्वरमें कहा, "सम्राट् ही त्रस्तोंका पूरा-पूरा न्याय करते हैं। यह विभाग मेरे हाथमें नहीं है, महासेनापति।"

"मेरा फ़रियादी महादेवीकी ही जातिका एक जीव है। अपनी व्यथा वह सम्राट्को नहीं सुना सकती। वह अहिंसकोंसे ही त्रस्त है। अतः उससे महादेवीका मनोरंजन होना निश्चित है," पुष्यमित्रने कहा।

रानीने अपने कोमल अधरोंको दबाया। "अहिंसकोंसे कोई त्रस्त नहीं होता, महासेनापति। प्रार्थीको उपस्थित कीजिए।"

महासेनापतिने करतल-ध्वनि की और तत्काल ही उसका प्रधान अंग-रक्षक श्वेत और स्वच्छ वस्त्रोंमें सिमटी-सिकुड़ी, घूँघटके परदेमें अपना मुख छिपाये एक नारी मूर्त्तिको लेकर उपस्थित हो गया। अंगरक्षकने सिर नवा-कर सम्राज्ञीकी अभ्यर्थना की, किन्तु आगत नारी जैसे आई थी वैसीकी वैसी खड़ी रह गई।

"तुम अपनी सम्राज्ञीके सम्मुख हो। आवरण हटा दो," कोमल तथा स्नेहपूर्ण स्वरमें रानीने कहा।

वह नारी न हिली न बोली। "घूँघट उसने अपने मुँहपर नहीं डाल रखा है, उसके सारे जीवनपर घूँघट पड़ चुका है। उसे खोलना उसकी

सामर्थ्यसे बाहर है। महादेवी उसका मुँह देखना चाहती हैं, तो मैं दिखाता हूँ," कहकर पुष्यमित्र पीछे हटा और कनिष्ठिका व अंगूठेसे सिरका पल्ला उठाकर उसने उस स्त्रीका मुँह उघाड़ दिया।

उसका मुँह देखते ही रानी विस्मय और आतंकसे सिहर गई। जगह जगहसे क्षत-विक्षत, मानो किसी जानवरने उस निरीह अबलाके मुँहको अपने क्रूर पंजोंसे झिझोड़ा हो, उस नारी-मूर्त्तिका चेहरा नारी-सुलभ श्रीसे हीन हो गया था, जिसके भीतरसे कभीकी सुन्दरता अपनी अकाल मृत्युकी कहानी सुना रही थी। उसकी आँखोंकी पुतलियोंमें तेज नहीं था और वे सामने देखती हुई भी कहीं दूर देखती प्रतीत हो रही थीं।

"सुना दो महारानीको अपने कष्टकी गाथा। सुना दो अपनी घिनौनी कहानी। यहाँ केवल वे ही हैं, जिन्हें उसके सुननेका अधिकार है, जिन्हें तुमसे सहानुभूति है,' पुष्यमित्रने कहा।

त्रस्त नारी फिर भी चुप रही। कुछ क्षण प्रतीक्षा करके रानीने कहा, "कहो, बहन, हम सुन रही हैं।"

अलक्ष्य रूपसे स्त्रीके होंठ हिले, और फिर बंद हो गये।

रानीने हैरानीसे महासेनापतिकी ओर देखा। उतनी ही हैरानीसे पुष्यमित्रने कहा, "कैसा संयोग है! अहिंसकोंकी छत्रछायामें पलनेवाली प्रजा अपने दु:खकी बात, अपने ऊपर किये गये अत्याचारकी कहानी भी नहीं सुना सकती। कितना शीतल आतंक है!"

पुष्यमित्रके इन वाग्बाणोंसे क्षुब्ध होकर सम्राज्ञीने अपने स्वरमें समस्त अधिकार संचय करके उस स्त्रीको संबोधन किया: "हम तुम्हें आज्ञा देते हैं। कहो जो तुम्हें कहना है!"

अंतमें इसका परिणाम और भी अवांच्छनीय निकला। निरीह प्रजाका वह दीन प्रतीक सहसा फूट-फूटकर रो पड़ा। उस नारीने अपनी हथेलियोंसे मुँह छिपाया और उलटे पैरों वह वहाँसे भाग खड़ी हुई। मगधके राज-महलके अधिकारकी ऐसी अवहेलना करनेका साहस किसीने आजतक नहीं

किया था, और जिसने किया था उसकी स्थिति कभी दंडकी सीमासे बाहर नहीं रही थी। उसके ऊपर पुष्यमित्रका फिर प्रहार हुआ :

"वह फिर भी नारी है। उसका पति होता, तो महादेवीके सामने इस अनुपम अत्याचारकी कहानीको हजार ज़बानोंसे सुनाता।"

रानीने तीव्र दृष्टिसे सेनापतिको देखा। उस दृष्टिका अर्थ था : 'मैं भी नारी हूँ, किन्तु मैं कमज़ोर नहीं हूँ।' प्रकटमें वैसे ही उत्तेजित स्वरमें रानीने आज्ञा दी : "यदि इसका पति है, तो उसे ही उपस्थित कीजिए, महासेनापति ! मैं इस तथ्यको बीनकर छोड़ूँगी।"

"अवश्य।" और कुछ देर बाद महासेनापति पुष्यमित्रने मगधकी सम्राज्ञीके सामने उसी पागल व्यक्तिको उपस्थित कर दिया, जो कल पाटलिपुत्रके बीचोंबीच बैठा मगधकी संस्कृतिको बट्टा लगा रहा था। अपनी निरीह पत्नीके विपरीत उसने ज़मीन छूकर सम्राज्ञीको अभिवादन किया। अभिवादनकी इस असाधारणतामें एक अलक्ष्य व्यंग्य छिपा हुआ था।

"क्या हुआ है तुम्हारे साथ, प्रजाजन ? तुम मगधकी महारानीके सम्मुख हो। जो कुछ कहो सच कहो," महासेनापतिने उसे आदेश दिया।

"कहाँ है मगध ? क्या मगधकी कोई महारानी भी है ?" उस व्यक्तिने छूटते ही प्रश्न किया।

रानीको बोलनेका अवसर देनेसे पहले ही पुष्यमित्रने कृत्रिम रोष प्रकट करते हुए चिल्लाकर कहा, "सभ्यतासे बात करो !"

उसी शान्तिसे उस व्यक्तिने फिर प्रश्न कर डाला, "कहाँ है सभ्यता ?"

फिर इससे पहले कि सम्राज्ञी इस निरंकुश व्यवहार पर उचित रोष प्रकट करे, वह व्यक्ति ठठा कर हँस पड़ा। "मगध नहीं है, मगधकी महारानी नहीं है, मगधकी सभ्यता नहीं है। तुम सब हवामें मँडराती हुई आत्माएँ हो। मुझे डराती हो क्योंकि मैं इस श्मशानमें बैठा तुम्हारे ऊपर अट्टहास जो कर रहा हूँ।"

"यह तो पागल है!" रानीने कहा।

"पागल हो गया है, महादेवी। सही कहा जाय, तो पागल कर दिया गया है," इशारेसे अंगरक्षकको उस व्यक्तिको वहाँसे हटा देनेका आदेश देते हुए पुष्यमित्रने कहा।

अपनी गम्भीरता तोड़ते हुए रानी सुदर्शनाने किंचित् हास्यसे कहा, "आप सब कुछ जानते हैं, महासेनापति। यह सब वितंडावाद लाकर आप हमें अबतक खेला रहे थे।"

पुष्यमित्रने आदरसे मस्तक झुकाया। "सेवक इतना साहस नहीं कर सकता, महादेवी। यह व्यक्ति पागल हो गया है। इसकी सुन्दर पत्नी भावशून्य हो गई है। यह सब खेल नहीं है, महादेवी। सेवक उस लज्जाहीन बातको अपने मुँहसे कहना नहीं चाहता था। अब महादेवी मुझे आज्ञा देंगी, तो साहस करके कहूँगा।"

रानीने पुनः गम्भीरता धारण कर ली। "अच्छी बात है। मैं आज्ञा देती हूँ। कहो!"

"महादेवी मेरी इस वाचालताको क्षमा करें, भोगपति विशाखदत्त ने उस दीन अबला पर बलात्कार किया है।"

चौंककर सम्राज्ञीने द्वारपर लटके वस्त्रका सहारा लेकर उसे मुट्ठीमें भींच डाला। उस क्षणकी रानीकी प्रतिक्रियाको सचेत दृष्टिसे देखते हुए पुष्यमित्र कहता रहा :

"महादेवी, उस व्यक्तिके लिए सचमुच मगध नहीं रह गया है, मगधकी महारानी नहीं रह गई है, मगधकी संस्कृति मर चुकी है। शास्त्रोंमें कहीं अबलापर इस अत्याचारका प्रतिकार नहीं है। समाजमें भी नहीं है। स्वयं उस नारीका संस्कारशील अंतःकरण मर चुका है। हिंसकोंके पास उसका प्रतिकार है : बदला। पीड़ित होनेपर प्रकृतिका प्रत्येक प्राणी बदला लेता है। उससे गया वैभव लौट नहीं सकता, किन्तु उससे गया आत्मविश्वास लौट सकता है। महादेवी उनका न्याय करके उन्हें संसारकी

सबसे मूल्यवान् संपत्ति दे सकती हैं, किन्तु उनका लुटा हुआ अंतःकरण वापस नहीं लौटा सकतीं।"

"मगधकी नैतिक शक्ति इतनी कमज़ोर नहीं, महासेनापति, जितनी आप समझ रहे हैं। तथागतका धर्म उनकी आत्माओंको निष्कलंक कर देनेकी क्षमता रखता है।"

"किन्तु तथागतके धर्मको माननेवाला मगध नहीं रखता, महादेवी। वह साथ-साथ अत्याचारीको भी प्रश्रय देता है। वह दुराचारके इस सदाबहार वृक्षको जड़ें नहीं काटता, उसका काँटा चुभ जानेवालोंके प्यारसे मरहम लगाता है। क्या महादेवी भोगपतिको प्राणदण्ड दिये जानेकी व्यवस्था करेंगी?"

सम्राज्ञी चिन्तित हो उठीं। "यह कैसे हो सकता है, महायुध! विशाखदत्त भोगपतिको राजसम्मान देनेकी घोषणा की जा चुकी है। उसका विरोध करनेसे मगधकी राजनीतिको भारी धक्का पहुँचेगा, यह तो आप जानते ही हैं। इस बीच उसने अपनी शक्ति असाधारण रूपसे बढ़ा ली है।"

"पाटलिपुत्रने स्वयं अकर्मण्य रहकर उसकी शक्ति बढ़ाई है। अहिंसाने हिंसाको फलने-फूलनेका अवसर दिया है। अहिंसक परिस्थिति-वश वीर हो सकता है, किन्तु अहिंसा वीरताकी जननी नहीं है। वीर वीरताकी आवश्यकता न समझकर उसे भूल जाते हैं, और. ." महासेनापतिने महारानीकी तीव्र दृष्टि सहन करते हुए, प्रयाससे स्वरको दृढ़ करके कहा, "और कायर उसमें अपनी कायरता छिपा लेते हैं।"

साफ़ था कि सम्राज्ञी दब रही थीं। तर्कसे नहीं, तो उसकी मुद्रा और भावप्रदर्शनके ढंगसे। इसीलिए रानी प्रत्युत्तर दे रही थी। उसने कहा, "महासेनापति उस सर्वोच्च बलको भूले जा रहे हैं, जो केवल अहिंसकोंके पास ही होता है। मनोबल सब बलोंसे ऊँचा है।"

"मन कोई स्वतंत्र वस्तु नहीं है, महादेवी। वह तो केवल भौतिक

संसारका प्रतिबिम्ब है। निरन्तर विपरीत व्यवहारसे वह बल घिस जाता है, और हम जान भी नहीं पाते कि हम कब शक्तिहीन हो गये, कैसे हो गये। फिर भी यदि मगध वह मनोबल अनुभव करता है, तो सेवक भोगपति को दण्ड देनेके लिए अपनी सेवाएँ अर्पित करता है।"

कुछ देर सम्राज्ञी चुप रहीं। एक ओरसे महासेनापति पुष्यमित्रका मोहक जादू अपने तर्कोंके साथ उसपर हावी होता जा रहा था। दूसरी ओरसे अब तककी शिक्षा-दीक्षा और तथागतकी भव्य-मूर्ति खींच रही थी। इस खींचातानीसे हतोत्साह होकर रानीने कहा, "आपका प्रस्ताव विचारणीय है, महासेनापति। शान्तिदायिनी अहिंसापर मेरा अटल विश्वास है।"

"हिंसा ही विकृत हिंसाको समाप्त कर सकती है, महादेवी। मेरा उस हिंसा पर अटल विश्वास है, और प्रतिस्पर्धी विश्वास संघर्षके सूत्रधार होते हैं," महासेनापतिने कहा।

"महासेनापति!" सम्राज्ञीने रोषपूर्ण स्वरमें कहा, "अपने कथनको स्पष्ट कीजिए!"

"महादेवी कोई ग़लत अर्थ न लगायें। मेरे तर्कोंसे सम्राज्ञीने अपने मनमें जिस संघर्षका अनुभव किया है मेरा उसी ओर संकेत है।"

पुष्यमित्र यथारीति अभ्यर्थना करके वहाँसे प्रयाण कर गया, किन्तु रानी सशंक हो गई। बात तुरन्त सम्राट्के कानोंतक पहुँचाई गई। सैनिक शक्तिकी ओरसे बेख़बर सम्राट् वृहद्रथ भी सजग हो गये। गुप्तरीतिसे पुष्यमित्रके विरुद्ध सचेत होनेकी आज्ञाएँ प्रसारित की गईं।

× × ×

वह दिन और वह रात्रि पुष्यमित्रने भोगपतिको अगले दिन प्रातः ही राजसभामें सम्मान देनेकी योजनाको स्थगित कर देनेकी राजाज्ञाकी प्रतीक्षामें विताये। किन्तु उसकी आशा पूरी नहीं हुई। उसका तन-मन जल गया। भोर रहते ही, जब सारा पाटलिपुत्र सो रहा था, पुष्यमित्र अपने सैनिक व्यायामके लिए निकला। और वह जब वापस लौटा, तो उसके साथ उसकी शिक्षा-दीक्षामें तैयार मगधका हरावल दस्ता था।

उधर समारोहकी नौबतें बजनी आरंभ ही हुई थीं कि राजमहल पुष्यमित्रके सैनिकों-द्वारा घेर लिया गया। पूजागृहसे निकलते हुए सम्राट् बृहद्रथ बंदी कर लिये गये। बड़ी शान्ति और व्यवस्थासे पाटलिपुत्रसे मौर्य शासनका अन्त हो गया। पुष्यमित्र स्वयं सम्राट्के सामने गया। सम्राट्ने काँपते हुए चिल्लाकर कहा, "राजद्रोही!"

पुष्यमित्रने कहा, "मुझे यह पदक भी स्वीकार है, महाराज! शुक्र है कि मैं प्रजाद्रोही नहीं हूँ। अब सम्राट्के विचार करनेके लिए यह प्रकोष्ठ है, और यदि उन दो अभागे प्रजाजनोंको सम्राट् अपनी अहिंसाके द्वारा कुछ दे सकें, तो सम्राट् फिर सम्राट् हो जायेंगे।"

सम्राज्ञी सोकर उठी, तो दास-दासियाँ हाथ बाँधे प्रस्तरकी मूर्त्तियोंकी तरह खड़ी थीं। साजसिंगारका कोई सामान उपस्थित न था। कोई पानीका कलश लेकर पैर धोनेके लिए आगे न बढ़ी। सम्राज्ञीने पूछा, "क्या बात है?"

"सम्राट् महासेनापति पुष्यमित्र-द्वारा बंदी कर लिये गये हैं, महादेवी।"

सम्राज्ञीका सारा अलस भाव तिरोहित हो गया। वह बिना उत्तरीयको कंधेपर डाले ही उठ खड़ी हुई। दासीने पीछेसे ओढ़ाया। इस बीच रानी द्वारपर पहुँच चुकी थीं। "कहाँ है महासेनापति?"

महासेनापति संभावित अशान्तिको यथास्थान दबा देनेके आदेश देते राजमहलमें घूम रहे थे। सेनाएँ पुष्यमित्रके हाथोंमें थीं, अतः बाहरकी ओरसे कोई चिन्ता नहीं थी।

सम्राज्ञीको छेड़ना विशेष रूपसे वर्जित किया गया था। उसके जागनेका समाचार पाकर पुष्यमित्र महाराजकी कोठरीकी ओर चला, और वहाँ दोनोंकी भेंट होनी निश्चित थी। किन्तु वह राहमें ही हो गई।

"महासेनापति, यह क्या खिलवाड़ है!" सम्राज्ञीने पूछा।

"महादेवी, मगधने अहिंसाके जुएको अपने कंधोंसे उतार फेंका है। आप इसे खिलवाड़ न कहिए," पुष्यमित्रने कहा।

"साफ़ क्यों नहीं कहते कि तुमने विद्रोह किया है ? तुमने मगधके राज्याधिकार और अपनी स्वामिभक्तिका जुआ अपने कंधोंसे उतार फेंका है।"

"नहीं, महादेवी। इस उच्छृंखलताके पीछे विचारोंका लंबा संघर्ष है। एक अपराधीको दंड मिल जानेके बाद यह अपराधी भी सम्राट्के सम्मुख बँधा हुआ उपस्थित होगा।"

"तुमने राज्य-व्यवस्थाको स्वयं अपने हाथोंमें लिया है। पहले तुम्हारे ही अपराधका निर्णय होगा। कहाँ हैं सम्राट् ?"

उस सम्मोहक आतंकके सामने पुष्यमित्र सहसा ही विवश हो गया। अचेतन रूपसे उसका हाथ उठा और उसने बता दिया कि महाराज किस प्रकोष्ठमें बंद हैं। रानीने उसकी कमरमें खोंसा हुआ चाबियोंका गुच्छा झटकेके साथ निकाल लिया और वह तेज़ीसे महाराजके प्रकोष्ठकी ओर चली। राहमें जो प्रहरी भी मिलता वह अपनी गरदन झुका देता।

किन्तु पुष्यमित्रके पास कहनेको बहुत कुछ शेष था। "कठिन से कठिन परिस्थितियोंमें भी विश्वास करना ही श्रेष्ठता है। मैंने विद्रोह किया है, विश्वास नहीं खोया है। मैंने केवल मगधको सचेत करने का प्रयास किया है। मैं अपराधी हूँ, किन्तु जागरणका, मैं हिंसक हूँ किन्तु हिंसकका। मैं भी मनुष्य हूँ। इस पृथ्वीपर केवल एक ही वस्तु टिक सकती है, हिंसा या अहिंसा, यह मिला-जुला रूप अहिंसा और हिंसा दोनोंको विकृत बनाता है, बनावटी कर देता है...।"

सम्राज्ञी सुनती जा रही थी और बढ़ी जा रही थी। वातावरणमें केवल पुष्यमित्रके आत्मसमर्पणके बोल गूँज रहे थे। सम्राट्के प्रकोष्ठतक उसकी आवाज़ जा रही थी। साथ ही द्वारमें चाबी लगनेका शब्द हुआ। सहसा सम्राट्की आँखोंमें एक चमक कौंध गई। वह उठे और झपट कर द्वारके पासकी दीवारपर लगी ढालमेंसे खड्ग खींच लिया।

द्वार खुला और सम्राट्के खड्गका एक भरपूर हाथ प्रवेश करनेवालेके

कंधोंको चीरता निकल गया। क्षणमात्रमें तथागतकी भक्त वह सौम्य रानी भूमिपर गिरकर दम तोड़ने लगी।

दोनों प्रतिस्पर्द्धी एक दूसरेके आमने-सामने खड़े स्तंभित रह गये। वातावरण जड़ हो गया।

कुछ क्षणोंके बाद सम्राट्के हाथ-पैर काँपने लगे। खड्ग हाथसे छूटकर भूमिपर गिर पड़ा। पुष्यमित्रकी आँखें घृणा और हिंसासे विस्फारित हो गईं। उसने फिर एकबार समस्त शक्ति संचय करके रानीके तड़पते हुए शरीरको देखा। यहाँतक कि सम्राज्ञी सुदर्शनाका प्रत्येक अंग शान्त हो गया।

पुष्यमित्रने कड़ककर कहा, "यही तुम्हारी अहिंसा थी!"

सम्राट् पूर्ववत् काँप रहे थे। पुष्यमित्रकी बातका कोई उत्तर नहीं मिला।

"खड्ग सँभालो, सम्राट् बृहद्रथ! आज या तो हिंसाका अन्त होगा या उस अहिंसाका, जो छिपकर वार करती है। उठाओ खड्ग!" सेनापति पुष्यमित्रका रक्त खौल रहा था।

सम्राट् फिर भी नहीं हिले।

"तो. . .तो, "पुष्यमित्रने कहा, और उसने अपने लंबे खड्गका एक हाथ जोरके साथ घुमाया। सम्राट् बृहद्रथका सिर प्रकोष्ठकी धरतीपर लोटने लगा।

रक्तसे सना नंगा खड्ग लिये पुष्यमित्र प्रकोष्ठसे बाहर निकला दालानसे बाहर निकला, और राजमहलसे बाहर निकला, थका-हारा, अशान्त और उत्तेजित।

राजमहलसे बाहर पाटलिपुत्रकी जनताकी अपार भीड़ अब तक इस क्रान्तिको निरखनेके लिए उपस्थित हो गई थी। उसके सामने जाकर पुष्यमित्रने अपना खड्गवाला हाथ ऊपर उठाया, जिसपर सूर्यकी किरणोंने चमक कर रक्तकी लालीको छिटका दिया।

जयघोष उठा, "सम्राट् पुष्यमित्रकी जय !" "महाराज पुष्यमित्रकी जय !"

पुष्यमित्रने अपना दूसरा हाथ उठाकर चुप होनेका संकेत करते हुए चिल्लाकर कहा, "नहीं, नहीं, मुझे महाराज न कहो, मुझे सम्राट् न कहो। कहो, सेनापति पुष्यमित्र !"

मौर्यवंशके बाद शुङ्ग वंशके इस पहले अधिपति, अपूर्व हिंसक, सेनापति पुष्यमित्रने दो बार सिकंदरकी तरह यूनानियोंके प्रबल आक्रमणको निष्फल करके उन्हें भारतकी सीमासे बाहर किया और आज भी इतिहासमें उसका नाम सेनापतिके रूपमें ही अंकित है।

चन्द्रगुप्तकी मोहर

गण्डक नदी एक समय अपने वर्त्तमान बहावसे कोसों दूर हटकर बहती थी। धनधान्य, समृद्धि और वैभवसे भरपूर एक मात्र गणराज्यकी प्राचीन और सुन्दर राजधानी वैशाली गण्डकके तटपर बसी थी। उसके चारों ओर छोटे-छोटे राज्य यत्र-तत्र बिखरे पड़े थे। पास ही पाटलिपुत्रमें गुप्तोंका भाग्य-रवि उदय हो रहा था। इन सब एकतंत्र राज्योंके समुद्रमें वैशाली ही एक ऐसा द्वीप थी, जो राजा और प्रजाको बराबरीका दरजा देकर सदियोंसे राज्य-प्रणालीका एक अनोखा रूप अपनाये हुए थी। उसपर सभीकी दृष्टि अनायास ही जा टिकती थी।

समयके थपेड़ोंसे वैशालीका प्राचीन गौरव और शक्ति नष्ट हो चुकी थी। अब उसका ढाँचा मात्र शेष रह गया था। शरीरकी कांति वही थी, दीप्ति वही थी, लेकिन नियतिके निर्मम हाथोंने मांस-मज्जा निकालकर मानो उसमें भूसा भर दिया था। ईसाकी चौथी शताब्दीके प्रारंभमें इसी वैशालीके सम्मान और स्वतंत्रताका प्रवाह एक लड़कीके होंठोंसे निकलने वाली हाँ या ना पर अटक गया। यह लड़की थी वैशालीके गणपति कुमारा-युधकी बेटी कुमारदेवी।

वैशालीपर युद्धके बादल मँडरा रहे थे। पाटलिपुत्रके नवनिर्मित महाराजाधिराज चंद्रगुप्तकी उद्यत सेनाएँ वैशालीकी सीमाएँ छू रही थीं। मरनेके लिए कमर कसे वैशालीके वीरोंमें जीतनेका जोश था। बूढ़े पिताओंको अपने पुत्रोंके शवोंके पीछेसे हारकी कालिमा दिखाई दे रही थी। चंद्रगुप्त चारों ओरके बली-से-बली राज्योंको ग्रस चुका था। वह महाराजसे महाराजाधिराज बना था। उसका बल अपूर्व था। इधर अभीतक अकेली वैशाली इस चढ़ते हुए सूर्यके आगे मस्तक ऊँचा किये खड़ी थी।

सीमापर चंद्रगुप्तके शिविर तन गये थे। विशाल सेनाके पड़ावसे दूर एक वृक्षके नीचे युद्धके साजसे सजे दो घोड़े अपने स्वामियोंको पीठ-पर लिये खड़े-खड़े मचल रहे थे। एक पर चंद्रगुप्त स्वयं था। दूसरेपर महासेनापति वीरधवल थे। महासेनापति कह रहे थे :

"श्रीमान्‌ने वैशालीके सामने बड़ी हलकी-फुलकी शर्त रखी है। बड़े सस्तेमें छूट गई वैशाली !"

"नहीं, धवल, हमें अब भी संशय है कहीं युद्ध छेड़ना ही न पड़े ! शत्रु होते हुए भी हमें वैशालीके गौरवसे मोह है। हम एक बार वैशालीके वैभव और उल्लासको अपनी आँखोंसे देख चुके हैं। आजकी इस युद्ध-यात्रा और इस हलकी-फुलकी शर्तकी नींव उसी समय पड़ी थी," चंद्रगुप्तने रासको और भी कसते हुए कहा।

"महाराज श्री घटोत्कचने आपको वैशाली भेजा था ?" सेनापतिने पूछा। घटोत्कच महाराज चंद्रगुप्तके स्वर्गीय पिता थे।

"नहीं। वैशालीके गणोंने हमें न्योता दिया था। सदाकी भाँति उस वर्ष भी वैशालीकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरीका चुनाव था। उसी अवसरपर हम मोह-पाशमें फँस गये।" आँखोंपर हाथकी छाया देकर, वृक्षकी टहनियोंसे छनकर आती सूर्य-किरणोंको रोकते हुए, चंद्रगुप्तने दूर तक नज़र दौड़ाई।

"वैशालीकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरीका मोह-पाश ?" सेनापति मुसकराये।

"हमें वैशालीके चुनावमें विशेष रुचि नहीं थी। वह उस समयके एक छोटेसे सेनानायक कुमारायुधकी कन्या थी। अब वह गणपति हो गये हैं।"

"ओह !" वीरधवल उछल पड़े। "अब इस शर्तका रहस्य खुला।"

"अभी नहीं खुला, महासेनापति," चंद्रगुप्तने मुसकराकर कहा। "चुनाव-भवनके उद्यानमें खड़े होकर हमने एक दूसरेको खूब जी भरकर देखा। हमें आश्चर्य था कि उस सुन्दरीको छोड़कर वे लोग फिर चुनाव कैसा कर रहे थे। शायद वह चुनावमें भाग ही नहीं लेना चाहती थी।"

"हूँ," सेनापतिने अपनी बात फिर कट जानेके डरसे और कुछ नहीं कहा ।

चंद्रगुप्त पर भावना छाती जा रही थी । "दोनों तरफ़से खिंचाव हुआ । अगले दिन हम दोनों उद्यानमें अकेले मिले । हमने कहा, 'अगर कभी देवताओंसे वरदान मिला, तो मैं तुम्हें माँग लूँगा ।' वह हँस दी । उसने उत्तर दिया, "वैशालीकी कन्याएँ वरदानमें नहीं मिलतीं । वे पराक्रमका प्रमाण देनेसे मिलती हैं ।' फिर..." सम्राट्ने दोबारा उचककर दूरतक देखा ।

"फिर ?" सेनापतिने व्यग्रतासे पूछा ।

"फिर सहसा वह हमारा परिचय पूछ बैठी । मगधके युवराजका परिचय सुनते ही उसकी तो भृकुटी तन गई । उसने कहा, 'जिस दिन वैशालीमें युवकोंकी कमी हो जायेगी, उसकी ललनाएँ कुमारी रहना ज्यादा पसंद करेंगी ।"

"क्यों ?" महासेनापति चकराये ।

"यही सवाल हमने उससे पूछा था । उसने बड़ा अटपटा-सा उत्तर दिया था : 'सिरसे सिर मिलनेका नाम विवाह है । राजाकी रानीका पद राजाके चरणतलसे शुरू होता है । वैशालीकी कन्या अपने हृदयके मूल्य पर भी अपना बराबरीका अधिकार नहीं खो सकती ।' और भेंट समाप्त हो गई ।"

"उफ़ !" वीरधवलने हाथ मले ।

चंद्रगुप्तने कहा, "हमारे सेनापति होनेके नाते आप जानते हैं कि हमने इतने राज्य देवताओंसे वरदानमें नहीं माँगे । हम वैशालीकी उस कन्याको अपना पराक्रम दिखाने आये हैं । हम बराबरीके अधिकारसे उसके हृदयका मोल करने आये हैं । देखते हैं स्वतंत्रताकी उस गर्वितासे हमें क्या उत्तर मिलता है । उसकी एक हाँ पर वैशालीके वीरोंको अभयदान मिल सकता है ।"

दोनों अश्वारोहियोंने कान खड़े किये । एक घोड़ेकी टापोंकी आवाज सुनाई देने लगी थी । कुछ ही देरमें एक घुड़सवारने आकर सम्राट् चंद्रगुप्तके चरणोंमें मस्तक नवा दिया । सम्राट्ने उसकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखा ।

"सम्राट्की जय ! सारी वैशाली युद्धके लिए मचल रही है ।"

"युद्ध !" सम्राट्के मुँहसे निकला । चंद्रगुप्त युद्धके लिए ही तो आया था । किंतु न जाने क्यों वह युद्धके नामसे कभी इतना विरत नहीं हुआ था ।

"गणपति कल अपना निश्चयात्मक उत्तर देंगे," दूतने निवेदन किया ।

सम्राट्ने छुटकारेकी एक निःश्वास छोड़ी । "चलो, महासेनापति, अब कलकी प्रतीक्षा करना आरंभ करें ।"

× × ×

प्रथम दृष्टिमें प्रेमकी बात कुमारदेवीको हास्यास्पद लगती थी । प्रजातंत्रकी उस महान् नगरीमें बचपनसे वह यही सुनती आई थी कि राजा किसीका नहीं होता । वह अपने देशका भी नहीं होता । वह केवल अपना होता है । अपने व्यक्तित्वके विकासके लिए वह अपने देशकी प्रजाको शूलीपर चढ़ा सकता है, लाखों मनुष्योंको युद्धकी अग्निमें झोंक सकता है । उसका अन्तःपुर केवल उसके व्यक्तित्वकी विकृत वासनाओंको संतुष्ट करनेके लिए होता है । इन संस्कारोंमें पली कुमारदेवी कभी चंद्रगुप्त-सरीखे व्यक्तिपर मोहित हो सकती है, उसे प्रेमकी दृष्टिसे देख सकती है, यह घोर विडंबना थी, घोर असंभावना थी; यदि कोई संभावना थी, तो उसके ऊपर प्रथम दर्शनसे अबतक न जाने विपरीत और विरोधी भावनाओंकी कितनी परतें चढ़ चुकी थीं । मोहका वह नन्हा-सा स्फुलिंग उसके नीचे दब गया था ।

चिन्तातुर वृद्ध गणपति दूसरे तरीक़ेसे सोच रहे थे । युवकोंके नेता जयकीर्त्तिको लेकर वह बेटीको समझाने आये थे । कुमारदेवीने उन्हें देखते ही तीव्र स्वरमें पूछा ।

"युद्ध नहीं होगा, तात ?"

"नारी चाहे और युद्ध न हो, ऐसा कभी नहीं हुआ, बेटी । वैशाली-की नारी तो और भी शक्तिशाली है । वह चाहे तो एक नारीके लिए हजारों युवक हँसते-हँसते अपने प्राण विसर्जन कर देंगे । किन्तु हमारा शत्रु उन युवकोंके प्राण नहीं माँगता । वह हमारी भूमि नहीं चाहता । वह हमारी स्वतंत्रता नहीं चाहता । वह केवल उस कन्याको चाहता है, जिसने उसे कभी मोहकी दृष्टिसे देखा था । वह कन्या उस आदमीकी बेटी है, जिसके कंधोंके ऊपर वैशालीके एक-एक व्यक्तिकी सुख-शांतिकी जिम्मे-दारी है । हम अपनी बेटीसे उसकी सम्मति जानने आये हैं ।"

पिताकी बात सुनकर कुमारदेवी बिफर उठी । "शत्रुका मुँह सदा नरमांस माँगता है । शत्रुका हृदय सदासे ही गगनभेदी चीत्कारोंका अभ्यस्त है । यह अनोखा शत्रु है, जो हमारी स्वतंत्रताकी एक उमंगको हमारे बीचमेंसे खींच ले जाना चाहता है ! मैंने कभी ऐसे शत्रुसे मोह नहीं किया । क्या वैशालीकी नारियाँ अब शांतिके मोलपर बिका करेंगी ? बताइए, तात, क्या यही होगा ?"

गणपतिने अपनी आँखोंमें आया जल उत्तरीयसे पोंछ लिया । फिर स्नेहसे सने स्वरमें उन्होंने कहा, "सारी वैशाली आज अपनी स्वतंत्रताकी इस एक उमंगकी रक्षा करनेके लिए दीवानी हो रही है । केवल उनका यह बूढ़ा गणपति कहना चाहता है कि उमंगकी यह क़ीमत वहुत बड़ी क़ीमत है, बेटी । सारे समाजके लिए एक व्यक्तिका बलिदान सदासे प्रजा-तंत्रकी पहली शर्त रही है । इस शर्तको तोड़ना बहुत मँहगा पड़ेगा ।"

"क्यों ? क्या वैशालीके गणोंने संकटके समय एक रहनेका प्रण नहीं किया था ? एक अंगपर भीड़ आ पड़नेपर क्या सारा अंग सिमटकर उसकी रक्षा नहीं करता है ? फिर क्यों वैशालीके गणपति अपना एक प्रियतम अंग नोचकर कुत्तोंको खिला देना चाहते हैं ? यह कैसी होती जा रही है वैशाली, तात !" कुमारदेवी रो पड़ी ।

गणपतिके साथ आया युवक जयकीर्त्ति विचलित हो गया। "हम अपने प्राण होम देंगे, देवी! हमपर विश्वास कीजिए।"

गणपतिने दुःखसे उस उच्छृंखल युवककी ओर देखा। फिर पुत्रीकी ओर देखकर उन्होंने कहा, "तुम इस अग्निहोमको देखना चाहती हो तो देखो, बेटी। तुम अपने भी प्राण दे सकती हो, पर वैशाली नहीं बचेगी। वैशालीकी सारी ललनाओंको पाटलिपुत्रके महलोंमें चेरियाँ बनकर रहना पड़ेगा। वैशालीके युवक अपना तेज और स्वाभिमान भूल जायेंगे। यंत्रके निर्जीव अंगोंकी तरह वे देश जीतेंगे, शौर्य और पराक्रम दिखाएँगे, लेकिन अपने लिए नहीं, पाटलिपुत्रके शासनके लिए। वातावरण बदल जायेगा और वे इसीमें वीरता और इसीमें अभिमान समझेंगे। परंपरागत दासोंकी तरह उनके सोचनेका ढंग बदल जायेगा। हमें अफ़सोस तो यही रहेगा कि यह देखनेसे पहले ही हमारी स्वाभिमानिनी बेटी विष खाकर मर जायेगी। लेकिन वैशाली बदल जायेगी, ज़रूर बदल जायेगी..."

"तात!" भावनाओंके उद्वेगसे कुमारदेवीने गणपतिको रोका।

"हम तो तुम्हें भविष्यका चित्र दिखा रहे हैं, बेटी। वह चित्र झूठा नहीं है, साफ़ और सच्चा है। इस चित्रकी पृष्ठभूमिमें तुम हो। सारी लज्जा ढाँकनेको वैशाली अपना एक स्तन काटकर कुत्तोंको दे रही है। हमने तुमसे प्रस्ताव नहीं किया है, अपने कलेजेपर पत्थर रखा है। क्या तुम प्रजातंत्रकी इस प्राचीन नगरीके शोकका अनुमान कर सकती हो, बेटी? लिच्छवियोंने कभी इतना नीचा नहीं देखा था। आज वे अपनी बेटीका विवाह करेंगे, किंतु उनके हृदय रो रहे होंगे..."

"तात!" कुमारदेवीने फिर पिताको और अधिक बोलनेसे रोक दिया, और वह गणपतिके कंधेसे लगकर फूट-फूटकर रो पड़ी।

गणपतिने उसकी पीठपर थपकियाँ दीं। "हम शक्ति-संचय करेंगे।

हमें थोड़ा-सा अवकाश चाहिए। फिर हम अपना आत्मसम्मान वापस ले लेंगे। हमने आत्मसम्मान बेचा है, आत्मविश्वास नहीं बेचा।"

"तात जो कहेंगे मैं करूँगी", सुबकते हुए कुमारदेवीने कहा।

"चंद्रगुप्तसे तुम्हारा विवाह करके वैशालीका कर्त्तव्य समाप्त हो जायेगा। युवक जयकीर्त्ति छायाके समान तुम्हारे साथ जायेगा। अपने प्राण मत देना, बेटी। यदि उस युवक सम्राट्के लिए तुम्हारे हृदयमें कभी एक बार भी स्नेह उपजा हो, तो उसे पहचाननेकी कोशिश करना।"

प्रबंधके लिए जयकीर्त्तिको वहीं छोड़कर गणपति चले गये। कुमारदेवीके नेत्रोंसे रिसता जल सहसा सूख गया। आँखें ऊपर उठाकर उसने जयकीर्तिसे पूछा, "बंधुवर, तुम प्रबंध कर सकोगे?"

"देवी जैसा कहें वैसा ही प्रबन्ध कर सकूँगा," जयकीर्त्तिने कहा।

"अच्छा, तो थोड़ेसे हलाहल विषका प्रबन्ध करो," कुमारदेवीने कहा।

जयकीर्त्ति विमूढ़की तरह उसका मुँह देखने लगा। कुमारदेवीने अपनी दृष्टि फेर ली थी। उसने युवकके आश्चर्यका अनुमान करके कहा, "अपने पिताके कुलका सम्मान बेचकर कोई लड़की चैनसे नहीं बैठ सकती। तुम्हें इस प्रबंधकी बात किसीसे बतानी नहीं होगी। मैं वैशालीका आत्मसम्मान उसे वापस करूँगी। वैशाली फिर अपना सिर ऊँचा करके खड़ी हो सकेगी, और आगे कभी हमारी कमजोरी हमें दुःख नहीं देगी।"

जयकीर्त्ति कुमारदेवीके मनकी व्यथा समझ रहा था। वह भी वैशालीमें ही पैदा हुआ था। उसने भी अपनेको सदा उस विशाल समाजका एक अंग समझा था। उसने कुमारदेवीकी सम्मतिमें अपनी गरदन झुका दी। उसने फिर कहा, "देवीने जैसा कहा वैसा ही प्रबंध होगा।"

× × ×

आगे कभी सम्राट् चंद्रगुप्तकी क्रूर दृष्टि अपने श्वसुर-गृहपर नहीं पड़ेगी, गणोंके सामने इस प्रतिज्ञापर, कुमारदेवीका विवाह सम्राट् चंद्रगुप्तके

साथ कर दिया गया। किंतु वैशालीके किसी घरमें उस रात कोई दीपक नहीं जला। केवल कुमारदेवीके हृदयमें एक दीपशिखा जलती रही—आत्मसम्मानकी ज्योति, जो हवाके एक तेज झोंकेसे त्रस्त होकर और भी तेजीके साथ जल उठी थी।

पाटलिपुत्रमें कुमारदेवीका दर्शनीय स्वागत हुआ। राजमार्ग फूलोंका बिछौना बन गया। सम्राट् चंद्रगुप्तका अश्व कूदता-फाँदता कुमारदेवीकी पालकीके निकट आया। प्रियतमाके मुँहपर आह्लादपूर्ण दृष्टि डालकर चंद्रगुप्तने कहा, "ये फूल नहीं हैं, देवी, प्रजाने अपनी सम्राज्ञीके शुभागमनमें आँखें बिछा दी हैं।"

मर्माहतकी तरह कुमारदेवीने टेढ़े शब्दोंमें उत्तर दिया, "नहीं, प्रजा विजेताके बल-प्रदर्शनसे डर गई है। इस आवश्यकतासे अधिक आदरसे उन्होंने अपनी दीनताकी सूचना दी है। इन फूलोंकी आँखोंमें कितना भय, कितनी सिहरन छिपी है!"

युवक-सम्राट्का मुँह उतर गया। उसका अश्व उछला, और सम्राट्की आज्ञा क्रुद्ध स्वरमें चारों ओर गूँज गई। "इसी दम राजमार्गसे सारे फूल साफ़ कर दिये जायें!"

आज्ञाका पालन तुरंत हुआ। हज़ारों सैनिकोंने मिलकर फूलोंका बिछौना उठा लिया। लोगोंमें सम्राज्ञीका जयघोष गूँज उठा। जिस सम्राज्ञीके मनमें फूलोंको भी कुचलनेकी ताब नहीं है, उसकी छत्रछाया कितनी कोमल, कितनी सुखद होगी! एक क्षणमें घर-घर कुमारदेवीका यश-गान फैल गया।

नियमानुसार विजयके बाद चतुरंगिनीकी फेरी सारे नगरमें होनी थी। कुमारदेवीके मनको इस विजयोल्लाससे ठेस न पहुँचे, इसलिए यह कार्यक्रम रोक दिया गया।

राजभवनके द्वारपर हाथ बाँधे, सहस्रों दास-दासियोंके समूहके आगे खड़े राजभवनके मुख्य प्रबंधकर्त्ता महाप्रतिहारने ज़मीन तक सिर नवाकर

सम्राज्ञीका सम्मान किया। पालकीसे उतरकर कुमारदेवीने पहले एक दृष्टिसे वातावरणका निरीक्षण किया, फिर महाप्रतिहारकी ओर घृणाकी तीव्र दृष्टिसे देखती हुई आगे बढ़ गई। आश्चर्यसे मुँह बाये महाप्रतिहारने पीछे आते सम्राट्के मुँहकी ओर देखा। सम्राट् भौंह ऊँची किये, होंठ दबाये, मानो सब कुछ सुनते-समझते चले आ रहे थे।

रनिवासके अंतरीय द्वारपर राजरानियोंने कुमारदेवीकी पड़गाहना की। पीछे व्यंजनों व कुंकुम-रोलीके थाल लिये चेरियोंकी पंक्तियाँ थीं। आगेवाली दासीके थालमेंसे एक व्यंजन उठाकर कुमारदेवीके मुँहमें ठूसते हुए एक सजीली रानीने कहा, "दुलहनका स्वागत है।"

कुमारदेवी मुसकरा उठी। वैशालीसे चलकर अब उसके होठोंपर हँसी आई थी। हँसीमें ही उस शोख रानीके कानोंके पास मुँह ले जाकर कुमारदेवीने एक ऐसी बात कही, जिससे वह अचकचाकर उसका मुँह देखने लगी। उसने कहा, "ऐसा मालूम होता है, बहन, जैसे किसी बंदीघर-में एक बंदी किसी नये आने वाले दूसरे बंदीका स्वागत कर रहा हो। इस स्वागतसे मेरा मन पुलकित हो उठा है।"

कुमारदेवीको असाधारण सम्मानके साथ उसके लिए नियत कक्षमें पहुँचाया गया। दासियाँ उसकी आज्ञाकी प्रतीक्षामें द्वारसे चिपक गईं।

सम्राट् राजभवनके द्वारपर ही रुक गये थे। कुमारदेवीका सारा व्यवहार एक खूबसूरत और गर्वीली लड़कीकी चिढ़के रूपमें उनके सामने आया था। महलके बाहरी भागके एक कोनेमें खड़े होकर उन्होंने महा-प्रतिहारको इशारेसे अपने पास बुलाया। वह देखते ही दौड़ा आया।

"आज्ञा, देव?" उसने पूछा।

सम्राट्ने अपने विचारशील नेत्र ऊपर उठाये। "महाप्रतिहार, लगता है नई रानी किसी कारण तुमसे अप्रसन्न हो गई हैं।"

आज्ञाकारी सेवकने शोकसे अपनी गरदन लटका ली। "यही तो देख रहा हूँ, देव!"

"लेकिन तुम कितने नम्र, कितने कुशल और कितने कार्य-तत्पर हो यह तो नई रानी नहीं जानतीं," सम्राट्ने कहा ।

स्वामीके मुँहसे अपनी प्रशंसा सुनकर सेवककी बाँछें खिल गईं । "सब सम्राट्का प्रताप है," उसने कहा ।

"फिर भी तुम्हारा संबंध तो सदा राजमहलसे रहेगा," सम्राट्ने कहा ।

सम्राट्के प्रशंसा करनेसे कुछ नहीं होगा यह महाप्रतिहार समझ गया । आज सम्राट्की एक रानी बिगड़ खड़ी हो, तो फिर उस बेचारे का पत्ता महलसे कटते देर न लगे । सभीको प्रसन्न रखना बहुत कठिन होता है और उसका भार उसके छोटेसे कंधोंपर था । फिर नई रानी तो मानो सम्राट्की जी-जान थी । वह चंद्रगुप्तकी विचार-शृंखलापर नाच रहा था, बोला: "सम्राट् जानते हैं, सेवकने कभी इस संबंधका मान नहीं खोया ।"

"ठीक है, हम जानते हैं," सम्राट्ने कहा । "किंतु नई रानीको भी तो जानना चाहिए । क्यों न तुम उनके पास जाकर अपना अपराध क्षमा करा आओ ।"

सम्राट् सीधी आज्ञा नहीं दे रहे थे । राजमहलकी व्यवस्थाके संबंधमें सारी गुप्त मंत्रणाएँ उसीसे होती थीं । इसलिए उसे चंद्रगुप्तकी सलाहमें कोई असाधारणता नहीं जँची । सम्राट् आज सहसा कितने दयालु हो गये हैं, वह यही सोचकर हवामें उठा जा रहा था । लेकिन सम्राट् और सम्राज्ञी-के बीच कितनी गहरी खाई थी और सम्राट् उस खाईको पार करनेके लिए किस प्रकार उसे सीढ़ी बना रहे थे यह वह नहीं समझ सका । उसने हर्षसे अपने दोनों हाथ जोड़कर झुके हुए मस्तकसे लगा दिये ।

× × ×

यहाँ तककी मंज़िल सम्मानके साथ कट गई । अब क्या किया जाय, कुमारदेवी इसीमें उलझी थी । इसी उलझनमें उसने राजसी स्वागतसे लेकर स्नान, साज-सिंगारतककी सारी दुर्गम राहोंको बिना बोले-चाले, दासियोंकी तत्परतासे पार कर लिया । संध्या हो चली थी और राजमहल तरह-तरहके मंगल-गानोंसे मुखरित होने लगा था । सजीली रानी छाया-

की तरह कुमारदेवीके साथ लगी थी । और भी रानियाँ कई बार आ-आकर कुमारदेवीका मुँह चूम गई थीं ।

दीपक जलनेके कुछ समय बाद महाप्रतिहारने एक दासीके द्वारा कुमारदेवीके सामने उपस्थित होनेकी आज्ञा चाही । आज्ञा मिल गई ।

महाप्रतिहार राजमहलके भीतर यदा-कदा आता ही था । मुख्यत: उसका काम राजद्वार पर था । आजकी सज्जा उसे बड़ी अपरिचित-सी लगी । इस अपूर्व सजधजसे उसके ऊपर धीरे-धीरे नई रानीका रोब चढ़ता जा रहा था । दासी उसे भेंटकक्षमें लिवा ले गई । वह अभी चारों ओरकी शोभा निहार ही रहा था कि कुमारदेवीका नम्र और मीठा स्वर सुनाई पड़ा : "क्या चाहते हो ?"

नई रानीके सिंगारको देखते ही वह पलकें झपकानी भूल गया । फिर भी वह कार्यकुशल व्यक्ति था । तत्क्षण ही चेतन होकर, उसने जमीनपर लेटकर अनुनयके अत्यन्त भीत स्वरमें कहा, "महादेवी, दासका अपराध क्षमा करें । दास अकिंचन है, सेवक है ।"

कुमारदेवीके कानोंमें जैसे किसीने तपा हुआ तेल डाल दिया हो । बचपनसे आजतक उसने कभी इतनी दीनता, छोटेपनकी इतनी भावना नहीं देखी थी । मनुष्य मनुष्यके साथ मनुष्यकी तरह व्यवहार करता है, मनुष्यकी तरह बात करता है, यही उसने देखा था । वह अबतक कई बार सोच चुकी थी कि राजमार्गके फूलोंके अर्थ लगानेमें उसने कहीं भूल तो नहीं की थी । किंतु महाप्रतिहारकी इस क्षुद्र क्षमा-याचनाको देख-सुनकर उसका हृदय भुन गया । उस मनुष्यके इस व्यवहारके पीछे क्रूर राजसत्ता और एकाधिपत्यके दमनकी परंपराका कितना भय छिपा था, उस एक क्षणमें वह इसका अनुमान न लगा सकी । उसका मुख तमतमा गया । आंखोंमें रोष और उत्तेजना टपकाती हुई वह पास ही खड़ी सजीली रानीको लक्ष्य करके बोली :

"इस मनुष्यने कोई अपराध नहीं किया है । विना क़सूर किये ही यह

इतनी नीचतासे क्षमा माँगकर मेरा अपमान कर रहा है। क्या मैं इस राजमहलमें ऐसे ही तमाशे देखनेके लिए आई हूँ? यह व्यक्ति अभी, इसी क्षण मेरी दृष्टिके सामनेसे दूर हो जाये!"

उँगलीसे सजीली रानीने आँखें फाड़े, किंकर्तव्यविमूढ़, महाप्रतिहारको चले जानेका इशारा किया। कुमारदेवी जिस ओरसे आई थी, तेजीसे उसी ओर चली गई। पीछे-पीछे गई सजीली रानी और महाप्रतिहार।

महाप्रतिहार चारों तरफ़ छिपता हुआ राजमहलके बाहर निकला। चाँदनीमें आकर उसने आँखें ऊपर उठाईं और उधर देखा, जहाँ खड़े होकर सम्राट्ने उसे नई रानीके पास जाकर क्षमा माँगनेकी सलाह दी थी। उसकी आँखोंमें जल भर आया था, किंतु फिर भी उस जलके भीतर कुछ आभूषणोंकी झिलमिलाहट दिखाई दी। उसने आँखें मलीं और देखा अँधेरेकी हलकी-सी छायामें इस समय सम्राट् फिर उसी जगह उपस्थित थे।

वह दौड़कर सम्राट् चंद्रगुप्तके चरणोंमें गिर पड़ा, और उसकी आँखोंका बहुत देरसे रुका हुआ बाँध हिचकियाँ लेते हुए टूट पड़ा। इसी रुदनमें उसने अपनी प्रतारणाका सारा उलाहना चंद्रगुप्तके सामने उँडेल दिया।

सम्राट्की सीढ़ी टूट गई थी।

उन्होंने महाप्रतिहारको कंधे पकड़कर उठाया। "निर्भय हो, सेवक। परोक्षमें यह हमारा ही अपमान हुआ है। तुमने केवल सम्राट्की सेवा की है। तुम्हें दुःखी होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।"

महाप्रतिहार आश्वासन पाकर चला गया। लेकिन सम्राट् वहाँसे कब गये, सुबह तक गये भी या नहीं, यह किसीको पता नहीं चला। जिसने सैकड़ों खाइयाँ पलकें मारते शत्रुओंके शवोंसे पाट दी थीं, वह इस छोटी-सी अलक्ष्य खाईको पाटनेकी योजना बनाता हुआ पत्थरोंके दालानमें सारी रात घूमता ही रहा।

× × ×

सुबह हुई और कुमारदेवीने जयकीर्त्तिको उपस्थित करनेकी आज्ञा दी। जयकीर्त्ति आया। उसने नवोढ़ाका वैभव और शृंगार देखा, और

देखताका देखता रह गया। वैशालीके गणपतिके घरमें तो युगोंसे इतनी संपदा इकट्ठी नहीं हुई थी।

"देखा, बंधु," कुमारदेवीने कहा, "इन लोगोंने गणपतिकी बेटीको कितना नीचे दबा दिया है ?"

जयकीर्त्तिका सम्मोहन हटा। "हाँ, देवी, देख रहा हूँ, समझ रहा हूँ।"

शायद जयकीर्त्ति पूरा-पूरा अनुमान नहीं लगा सका था। कुमारदेवी-के रोम-रोममें पाटलिपुत्रकी राजसत्ताके प्रति घोर घृणा समा चुकी थी। वह सारी रात उसने सपने देखते बिताई थी। वैशालीके सरल, स्वच्छंद, आत्मगौरवसे पूर्ण संगी-साथियोंके सपने, जिनमें मनुष्यके सामने कभी न झुकनेका आत्मविश्वास था।

"अब समय निकट आ रहा है, बंधु जय," कुमारदेवीने कहा। "वैशालीका शरीर बच गया। वैशालीकी बेटीको अपना शरीर बचाना है। लाओ वह उपहार, जो तुम मेरे लिए वैशालीसे साथ लाये थे।"

यंत्रकी तरह जयकीर्त्तिने अपनी कमरपेटीसे हलाहलकी पुड़िया निकालकर कुमारदेवीके बढ़े हुए हाथपर रख दी।

कुमारदेवीने पुड़िया चोलीमें रख ली। "जाओ, प्रतीक्षा करो। समाचार मिलते ही वैशाली दौड़ जाना। गणोंसे कहना कि उनकी बेटीने उनके शत्रुका अंत करके ही अपना अंत किया है। उसने इस विष मिले हुए रक्तसे वैशालीका गौरव उसे लौटा दिया है।"

"देवी!" भावातिरेकसे जयकीर्त्ति और कुछ न बोल सका।

"जाओ, बंधु जय, विदा। कर्त्तव्यके समय शोक नहीं मनाया जाता।"

जयकीर्त्ति वहीं अपने नेत्रोंसे आये आँसुओंको पोंछकर बाहर निकल गया।

कुमारदेवीने विष मिलाकर अंगूरोंके रसके दो प्याले तैयार किये और संध्या होते न होते वह सम्राट् चंद्रगुप्तका समुचित स्वागत करनेके लिए तैयार हो गई।

एक पहर रात बीतनेपर सम्राट्के आनेका समाचार मिला। तीखे मनकी कटुता सँभालकर कुमारदेवी द्वारकी ओर टकटकी लगाकर खड़ी हो गई। दासीने अंदर आकर निवेदन किया, "सम्राट् पधारनेकी अनुमति चाहते हैं, महादेवी।"

"सम्राट् अनुमति चाहते हैं!" कुमारदेवी हँस दी। "अनुमति है।"

दो क्षण बाद सम्राट् द्वारपर थे। कुमारदेवीकी नज़रोंसे उनकी नज़रें मिलीं, और अपराधीकी तरह झुक गईं। अपूर्व थी कुमारदेवीकी छटा, अनुपम था उसका तेज।

चंद्रगुप्त पहले बोला, "पाटलिपुत्रके राजमहलोंमें उतनी सुविधाएँ नहीं हैं। देवीको कोई कष्ट तो नहीं हुआ?"

"यहाँ इतनी सुविधाएँ हैं कि स्वयं उन्हींसे कष्ट होता है," कुमारदेवीने उत्तर दिया।

चंद्रगुप्त हँसा। "महाप्रतिहारने भी हमसे यही कहा था कि देवीको कोई कष्ट है।"

महाप्रतिहारका नाम सुनते ही कुमारदेवीकी भौंह संकुचित हो गईं। "सम्राट्के आतंकका उसने जो परिचय दिया था, उससे मनुष्य कहलाने-वाला कोई प्राणी सुख अनुभव नहीं कर सकता। जिसे कोई जीतकर लाये उसके लिए इतना आदर उसके मुँहपर तमाचा मारनेके लिए ही किया जाता है। शायद सम्राट्ने ही उसे वे आदरके शब्द परिश्रम करके सिखाये थे।" संयम रखते-रखते भी कुमारदेवीके स्वरमें तीखापन साफ़ तौरसे उभर रहा था।

चंद्रगुप्तने इस तीखेपनको पीकर शांतिसे पलकें झपकाईं। "इससे भी ज़्यादा परिश्रम हमें उसके यहाँसे लौटनेके बाद करना पड़ा। हमने उसे समझाया कि देवी बीमार हैं। हमने बड़ी कठिनाईसे उसे देवीकी महानताका विश्वास दिलाया।"

"नहीं, नहीं," कुमारदेवीका ज़बरदस्ती रोका हुआ रोष फूट पड़ा।

"मैं महान् नहीं हूँ। मैं बीमार भी नहीं हूँ। किंतु यदि इसी प्रकारके दीन व्यक्ति मेरे सामने आते रहे, तो मैं सचमुच बीमार हो जाऊँगी। तब शायद मैं महान् भी हो जाऊँगी !" उसने 'महान्' शब्दपर ज़ोर दिया।

चंद्रगुप्त एकटक कुमारदेवीके मुँहकी ओर देखता रहा। वह न जाने किस दवाकी घूँट पीकर आया था। समतल स्वरमें उसने कहा, "देवी, वैशालीके एक उद्यानमें एक बार हमें जो लड़की मिली थी, वह निश्चय ही महान् थी। उसका प्रेम गौरवसे ओतप्रोत था।"

"गौरव और महानता !" कुमारदेवी फीकी हँसी हँसी। "ये वैशाली-के समाजके अंग हैं, उसके व्यक्तिके नहीं। फूलको उसके पौधेसे तोड़कर कोई दो दिन बाद उससे पूछे उसका गौरव कहाँ चला जाता है !"

चंद्रगुप्तने एकदम पासा पलटा। "देवी देवी नहीं रही, मानवी हो गई है, तुम हमें यही तो विश्वास दिलाना चाहती हो ? अच्छा, आजसे हम देवीको मानवी ही कहा करेंगे।" कुमारदेवीकी ओर देखता हुआ वह उस छोटी-सी जगहमें ही चहल-क़दमी करने लगा। "कल रातभर राज-महलके दालानमें हम मानवीके हृदयको समझनेके लिए चक्कर काटते रहे। जानती हो इस सोचनेका क्या परिणाम निकला ?" उसने पूछा। फिर स्वयं ही अपने प्रश्नका उत्तर दिया, "हमने अनुभव किया कि मानवी हमें मानवसे ऊपर समझती है, इसीलिए हम मानवीसे दूर हैं। हम एक साधारण बेकल मानव बनकर मानवीके पास आये हैं।"

कुमारदेवीके मुँह परसे अपनी दृष्टि हटाकर चंद्रगुप्त एक क्षण रुका। फिर स्वयंमें ही डूबकर बोला, "प्रत्येक मनुष्यकी अपनी कमज़ोरियाँ होती हैं। हमने सम्राट् बनकर देश विजय किये, योद्धाओंको पराजित किया, पराक्रम दिखाया। लेकिन आज...आज हमारा प्यार हमारी सबसे बड़ी कमज़ोरी बन गया है। एक मामूलीसे मामूली आदमीमें और हममें कोई अंतर नहीं रह गया है।"

कुमारदेवी अब भी चुप रही। वह अपने भावोंके साथ डूबती-उतराती

रही। सचेत होकर वस्तु-वस्तुपर घूमती हुई चंद्रगुप्तकी दृष्टि एक जगह अटकी और फिर कुमारदेवी पर जाकर टिक गई। "और हमें विश्वास है कि तुम हमारे हृदयकी इस कमज़ोरीको पहचानती हो। इसीलिए तुमने हमारे स्वागतके लिए दो प्याले भरकर रखे हैं। तुम अपने अभिमानके कारण इन्हें प्रस्तुत करना ही भूल गई। हमने तुम्हें पकड़ लिया है, मानवी। हमने भी तुम्हारी कमज़ोरी पहचान ली है!"

सरलता और उल्लाससे चंद्रगुप्तकी दृष्टिका तेज दुगुना हो गया। इस तेजको न सहनेके कारण कुमारदेवी सिरसे लेकर पैरतक सिहर उठी। जो व्यक्ति रातभर जागकर, उसके हृदयको समझनेके लिए गुदगुदी कोमल शैया छोड़कर पत्थरोंमें घूमता रहा उससे उसकी कौन-सी भावना छिप सकती है? चंद्रगुप्त सब कुछ समझकर उसे नचा रहा है। अप्रकटके प्रकट हो जानेके भयसे काँपकर अनजाने ही कुमारदेवीकी नज़र उन विष-भरे प्यालोंपर गई और साथ ही चंद्रगुप्तकी अंतर्भेदी दृष्टिने उसका पीछा किया। किसी दुर्गम संभावनातक पहुँचा हुआ कल रातका उसका एक विचार स्पष्ट होकर उसके मस्तिष्कमें उभरा और उन प्यालोंसे हटकर फिर दोनोंकी नज़रें एक दूसरेसे मिल गईं।

कुमारदेवी जल्दीसे बोल उठी, "मैं कमज़ोर हूँ, मैं मानवी हूँ, इसीलिए सम्राट् अकेलेमें मुझे त्रास देनेके लिए चले आये हैं!"

प्रेयसीकी स्पष्ट प्रतारणासे चंद्रगुप्तकी सरल मुद्रा करुणाजनक मुद्रामें वदल गई। ऐसेमें वही सँभल सकता है, जिसने स्थितिके प्रत्येक पहलूमें डूबकर मनन किया हो। उसने सर्वथा शांत और गंभीर वाणीमें धीरे-धीरे कहा, "जो सम्राट् था उसका सारा बल वैशालीकी एक दृढ़ कन्याके सामने खंड-खंड हो गया है। हम त्रास देनेके लिए नहीं आये हैं। हम यह देखनेके लिए आये हैं कि जिसे हमने पागल बनकर प्रेम किया, जिसके नेहको हमने वर्षोंतक अपने मनमें संजोकर रखा, उसके पास हमें त्रास देनेके लिए कितने अस्त्र हैं। वैशालीकी मानवी देखे कि हम अपनी कमज़ोरीका परिणाम भुगतनेमें कितने दृढ़ हैं।"

चंद्रगुप्त शांतिसे आगे बढ़ा। कुमारदेवी आँखें फाड़े देखती रही। चंद्रगुप्तने मृत्युके दूतके सुन्दर कलेवरको अपने दायें हाथमें उठा लिया। "चाहे यह स्वागत हमारे जीवनके लिए अंतिम ही क्यों न हो, हम इसे मानवीका पहला स्वागत समझेंगे।" और उसने स्वर्णपात्र मुँहसे लगा लिया।

× × ×

कुमारदेवी फुरतीसे झपटी। उसका हाथ तेजीसे घूमा और चंद्रगुप्तके हाथमें थमे विषके स्वर्णपात्रने झन्न-झन्न करके फ़र्शपर अपना रक्त उँडेल दिया। चंद्रगुप्तकी आँखें उल्लाससे चमक गईं। कुमारदेवी उद्वेगको सँभाल न सकनेके कारण खड़ी-खड़ी थरथर काँपने लगी।

चंद्रगुप्तने पुकारा, "देवी!"

कुमारदेवी चौंकी और सचेत हो गई। उसके फैले हुए नेत्र एकबार धीरेसे मुँदकर खुल गये, मानो नायिकाकी थकी हुई निढाल पलकोंने नायक-की पुकारका मौन उत्तर दिया हो।

जब चंद्रगुप्तने कक्षमें प्रवेश किया था, उसके बायें हाथकी मुट्ठी बंद थी। अब वह उसने खोल दी। उसपर एक सोनेकी मोहर प्रकाश पा कर चमक उठी। चंद्रगुप्तने कहा, "हमने रातभर ही विचार नहीं किया, दिनमें भी कुछ किया। दुर्भाग्यने हमें सम्राट् भी बनाया है, इसलिए हमें अपनी सम्राज्ञीको बराबरका अधिकार भी देना था। हमने राज्य भरमें इस मोहरको प्रचलित करनेकी आज्ञा दी है। इसके एक ओर चंद्रगुप्त और कुमारदेवीकी मूर्त्तियाँ और नाम अंकित हैं। दूसरी ओर, जिन लिच्छ-वियोंने हमें सम्राट्से मानव बनाया है और एक अनुपम मानवीका हाथ हमारे हाथमें दिया है, उनकी स्मृतिमें 'लिच्छवय' शब्द खुदा है। अब सम्राज्ञीकी आज्ञाएँ सम्राट्की स्वीकृतिके बिना राज्य भरमें तत्परतासे पालन की जायेंगी। हम मिट जायेंगे, किंतु हमारी ये मोहरें हमारे तन, मन और धनकी बराबर साझेदारीकी कहानी सदा संसारको सुनाती रहेंगी। गुप्तोंका वैभव लिच्छवियोंके गौरव और महानताके साथ-साथ याद किया जायेगा।"

कुमारदेवी होंठ सिये एकटक उस मोहरकी ओर देखती रही। चंद्रगुप्तने आगे कहा, "हमने इसे पहले इसीलिए नहीं दिखाया कि मानवी इसे कहीं एक सम्राट्का प्रलोभन न समझ बैठे...."

कुमारदेवीके नेत्रोंमें पानीकी एक हलकी-सी परत धीरे-से उभर आई थी, और सम्राट् चंद्रगुप्तकी लंबी उँगलियोंमें थमी हुई वह मोहर अस्पष्ट होती जा रही थी। कहीं बहुत गहरेमें सोये हुए एक मागधी राजकुमारके स्नेहका नन्हा-सा स्फुलिंग एकाएक भभक उठा।

चंद्रगुप्त कहता ही जा रहा था, "यदि यह रसका प्याला हमें सदाकी नींद सुला देता, तो बादमें मानवी इस मोहरको देखती। तब हमारा सिर उसकी गोदीमें होता, और हमें सबकुछ मिल जाता।"

और क्या होता यह कुमारदेवीके समझनेके लिए शेष रह गया। उसका मन इस प्रेमकी पराकाष्ठाकी यादमें उसे सौ-सौ आँसू रुलाकर मारता। कुमारदेवी भी मर जाती, किंतु उसकी सारी घृणा मरनेसे पहले सम्राट्परसे उतरकर उसे ही दबोच लेती। मर जाये ऐसी प्रेमिका तो अच्छा हो....!

कुमारदेवीके हाथने अनजानेमें ही भरा विषका दूसरा स्वर्ण-पात्र उठा लिया, और इससे पहले कि वह उसके होंठोंतक पहुँचे, चंद्रगुप्तकी लंबी उँगलियोंने उसकी कलाई थाम ली। कुमारदेवी खिंचकर चंद्रगुप्तके निकट आ गई। उसके पानी भरे नेत्रोंने चंद्रगुप्तकी स्नेहसे व्याकुल आँखोंमें झाँककर कुछ टटोला, और विष-पात्र उसके हाथसे छूट पड़ा। कुमारदेवी अपने प्रियतमके वक्षमें समा गई।

अगली सुबह जयकीर्त्ति फिर कुमारदेवीके सामने था। कुमारदेवीने स्मित मुद्रासे उसे आदेश दिया, "बंधु जय, आज ही वैशाली जाना होगा। गणपतिसे कहना कुमारदेवीने अपने सोये हुए स्नेहको पहचान लिया है। वैशालीने बिना जाने ही कुमारदेवीको उसकी प्रियतम वस्तु दी है। इसके लिए वैशालीको हीनता अनुभव करनेकी आवश्यकता अब नहीं रह गई है। कुमारदेवी वैशालीका आत्म-सम्मान ज्यों-का-त्यों उसे लौटा रही है।"

और युवक जयकीर्त्तिकी आँखें हर्षसे नाच उठीं।

शतरंजके मोहरे

बग़दादके ख़लीफ़ा वालिद बिन अबदुल मलिककी आज्ञासे हिंदुस्तान पर अरबके मुसलमानोंका सबसे पहला आक्रमण हिजरी ६३ में हुआ। वे जिहादके जोशसे भरपूर, टिड्डी दलकी भाँति भारतके उत्तर-पश्चिमी सिरेसे आये और सिंधके इलाक़ेपर छा गये। ब्राह्मण राजा दाहिर उनका मुक़ाबला करनेके लिए आगे बढ़ा और उसने वीरगति प्राप्त की। लेकिन उसका प्रधान गढ़, रावड़का सुदृढ़ क़िला अभी शेष था, जिसे सर किये बिना आगे बढ़ना असंभव था। क़िलेकी कमान राजा दाहिरकी विधवा रानीके हाथोंमें थी। स्थान-स्थानपर दूत भेजकर उसने विभिन्न राजाओंकी सहायतासे पन्द्रह हज़ार जवानोंको रावड़में एकत्र किया था। लेकिन दूरदराजसे मजहबके नामपर जान हथेलीपर लेकर आनेवाले विदेशी यवन तादादमें उनसे कहीं बढ़चढ़ कर थे। हार निश्चित थी, अवश्यंभावी थी।

राजा दाहिरकी दो लड़कियाँ थीं, जालपा और दर्पणी। दोनों ही युवा थीं। जब हार स्पष्ट ही सामने दिखाई देने लगी, तो रानीने उन दोनोंको एकान्तमें बुलाया। बारी-बारीसे उनके मस्तकोंको चूमकर उसने कहा:

पुत्रियो, तुम देख रही हो भाग्य आज हमारे विपरीत हो गया है?"

अब क्या होगा?" जालपा घबराकर बोल उठी।

'कुछ नवीन नहीं होगा," रानीने अविचलित स्वरमें कहा। "मृत्यु और जीवन दोनोंके लिए हमने रास्ते बना रखे हैं। हममें यही विशेषता है कि हम हारते नहीं। जब हार आती है, तब हम नहीं रहते। आँगनमें एकत्र चंदन तुमने देखा होगा। शीघ्र ही उसमें एक ज्वाला उठेगी और वह ज्वाला हमारे बचे-खुचे वीरोंके हृदयपर छा जायेगी। यवन क़िला जीत लेंगे, लेकिन उन्हें उसका महँगा दाम देना पड़ेगा।"

दर्पणीकी आँखोंमें आँसू आ गये। वह बिलखकर बोल उठी, "माँ !"

"यह रोनेका समय नहीं है, बेटी। रोना उसे ही शोभा देता है, जिसके रोनेमें प्रलय हो। अंत निकट है, किंतु मुझे उससे पहले तुम दोनोंसे कुछ कहना है। मुझे विश्वास है कि तुम उसे सूत्रकी तरह याद रखोगी।"

दोनों राजकन्याएँ विकल होकर सिंह-माताके चरणोंसे लिपट गईं। "कहो, माँ," जालपाने कहा। "हमें आज्ञा दो और तुम देखोगी कि चिता हमें तुमसे भी अधिक प्यारी है।"

उनके सिरोंपर हाथ रखकर वीर माताने कहा, "नहीं, जालपा, मुझे एक दूसरी ही तरहकी बात कहनी है। संभव है इससे तुम्हें युगों-युगोंका विश्वास ढहता प्रतीत हो। लेकिन इसीसे देशका भला होता है और जीवन ग़ुलामीके बंधनोंसे मुक्त होता है। बेटी, जालपा, दर्पणी, मुझे जल्दी है, बहुत थोड़ेमें कहूँगी।"

दिन भरकी भागदौड़से रानी थक गई थी। क़िलेके भारी फाटककी दिल हिला देनेवाली चरमराहट वहाँ तक सुनाई देने लगी थी। महलके बाहर चंदनकी चितामें पड़ते हुए घीकी चड़चड़ भी कानोंमें पड़ रही थी। रानीने पास ही रखे एक मोढ़ेपर बैठकर कहा :

"प्रत्येक व्यक्तिका समाजके लिए कुछ-न-कुछ उपयोग है। जब समाज के ऊपर संकट आता है, तो प्रत्येक व्यक्तिसे यह आशा की जाती है कि वह उसके विरुद्ध पंक्तिबद्ध होकर खड़ा हो जायेगा। किंतु हमारा समाज नारीसे यह आशा नहीं करता। वह समाजका नहीं एक व्यक्तिका अंग मानी जाती है। वह जब तक जीती है, केवल एकके सुखका साधन समझी जाती है। जब उसका स्वामी मर जाता है, तब उसके भी जल मरनेका विधान है। जब उसका समाज अपनी कमज़ोरीके कारण उसकी रक्षा नहीं कर पाता, तब भी उससे यही आशा की जाती है कि वह मर जाये। इस प्रकार ये क़ीमती हीरे, जो कुछ समय बाद शत्रुकी छातीके नीचे उतर सकते हैं, उसे मृत्युकी पीड़ाका स्वाद चखा सकते हैं, समयसे पहले ही नष्ट कर दिये

जाते हैं। मुझे इससे विरोध है। मरना हर एकको होता है– कुछ देर आगे या पीछे। किंतु इन्सान वही है जो यमको भी अपनी मृत्यु महँगे दामों बेचता है। सतीत्व जानेके डरसे जल मरना कायरता है। उसे जाना है तो जाने दो। नारी वही है जो जाते हुए सतीत्वको भी महँगे दामों बेचती है। इतने महँगे दामों कि शत्रु उसे दे न पानेके कारण पेट फाड़कर मर जाये। वचन दो कि तुम दोनों मरनेकी चेष्टा नहीं करोगी, और जब मरने लगोगी तो अपने समाजको अपने अभावकी कुछ क़ीमत देकर जाओगी।" विचारके कारण रानीके मुखपर अनेक बल उभर आये।

"हम वचन देती हैं, माँ," जालपा और दर्पणीने एक साथ कहा। "लेकिन तुम क्यों चितामें कूद रही हो, माँ?"

"मेरा समय समाप्त हो चुका है," रानीने किसीका पदचाप शीघ्रता-पूर्वक उसी ओर आता हुआ सुनकर जल्दीमें कहा। "विजय या मृत्यु, एक रानीके लिए ये ही दो रास्ते हैं। अब मैं उन लोगोंमें अंधविश्वासका ईंधन बनने जा रही हूँ, जिनकी चेतना मेरी जीवित-चिताकी ज्वालासे ही उत्तेजना प्राप्तकर शत्रुपर जीतोड़ प्रहार कर सकेगी। पुत्रियो, मैं अपने अभावकी पूरी-पूरी क़ीमत देशको देकर जा रही हूँ।"

इतनेमें प्रतिहारने आकर कहा, "महादेवी, क़िलेका द्वार टूट चुका है। शत्रु नगरमें घुस आया है। राह-रास्तोंपर मारकाट मच रही है। राज्यपुरोहित आप तीनोंकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। चिता अपनी पूरी तेजीपर है, महादेवी। एक-एक युवक केसरिया बाने पहने महादेवीके बलिदान-की राह देख रहा है।"

"तुम चलो, मैं आती हूँ," रानीने कहा।

प्रतिहार चला गया। उसके जाते ही रानीने दोनों लड़कियोंका हाथ पकड़ा और जल्दीसे महलकी ओर चली। उस समय एक गुप्त और सुरक्षित तहख़ाना ही रानीका लक्ष्य था।

थोड़ी देर बाद रानी चिताके पास बनी ऊँची मचानपर आई और

लोगोंके देखते-देखते चितामें कूद पड़ी। एक विशाल जयघोष हुआ। उसका वेग समाप्त होते ही राजपुरोहितको याद आया कि अभी दो आहुतियाँ और शेष थीं और रानी अकेली आई थी। केसरिया बानोंवाले युवक उछलते-कूदते, नेजे-बरछे चमकाते बाज़ारोंकी ओर पिल पड़े। इधर राजपुरोहित दोनों लुप्त राजकन्याओंको ढूँढ़नेके लिए राजमहलमें इधर-से-उधर चक्कर काटने लगा।

× × ×

यवनोंका सेनापति प्रसिद्ध विजेता मुहम्मद-बिन-क़ासिम था। संध्या होते-होते वह राजमहलके द्वारपर पहुँच गया। द्वार अंदरसे बंद थे, जो पलक मारते तोड़ दिये गये। मुहम्मद दलबल सहित भीतर घुसा। जहाँ जो मिलता उसे हिरासतमें ले लिया जाता। तलवार म्यानमें डाले, विजयके गर्वसे मस्तक ऊँचा उठाये वह महलके कोने-कोनेका निरीक्षण कर रहा था, जैसे शेर गायको मारकर उसे चारों ओरसे घूम-घूमकर सूँघता है।

राजमहलके अंतरीय भागमें, एक छोटेसे दरवाजेके बीचोबीच दोनों संदलियोंपर अपना एक-एक हाथ टिकाये एक वृद्ध पुरुष खड़ा था। उसकी तीव्र और जलती हुई दृष्टि ठीक सामनेसे आते हुए यवन सेनापति पर पड़ रही थी। उसकी हड्डियाँ, जो दूरसे ही गिनी जा सकती थीं, साँसके तीव्र आवागमनसे जल्दी-जल्दी उठ-बैठ रही थीं। सेनापतिके निकट आते ही वह ज़ोरसे चिल्लाया :

"ओ यवन, ठहर जा! अभी इस महलके भीतर दो सतियाँ शेष हैं। उनका अंतिम संस्कार होनेसे रुका हुआ है। अगर इस संस्कारके पूर्ण हुए बिना तूने भीतर क़दम रखा, तो तू भस्म हो जाएगा।"

मुहम्मद-बिन-क़ासिमने उसका तात्पर्य समझनेके लिए साथमें आये एक दुभाषियेकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखा। जब वह उसका मतलब बयान कर चुका, तो उसने एक यवन सैनिककी ओर इशारा किया, "इस बुड्ढेको तलवारके घाट उतार दो।"

तलवारका एक भरपूर हाथ राजपुरोहितपर पड़ा और उसका सिर,

आँखें फाड़े, अंधेरेमें एक ओरको जा गिरा। बिना किसी प्रकारका भाव प्रकट किये यवन सेनापति गंभीर मुद्रासे महलके अंतरीय भागमें घुस गया। उसने सच्चे मजहबका एक और स्तंभ गाड़ा था। उसने अरबकी एक चिर-प्रतीक्षित विजयकी साध पूरी की थी। अरबके मुसलमान उसकी तलवार की तारीफ़ करेंगे, दुनियामें बीमारीकी तरह जगह-जगह बसे काफ़िर उसकी तलवारका लोहा मानेंगे और खलीफ़ा इज्ज़तके साथ उसे अपने दिलमें जगह देगा। काफ़िरोंके साथ जुल्म करना बेजा नहीं, लेकिन उस-पर हँसना एक मुसलमानका काम नहीं। यह था मुहम्मद-बिन-क़ासिम-का उसूल। अफ़सोस कि वह महलके भीतर भस्म नहीं हुआ!

जालपा और दर्पणी तीन दिन तक अपने जीको दबोचे, भूखी-प्यासी, उस अंधेरे तहखानेमें बन्द पड़ी रहीं। आखिर जालपाने बाहर निकलने-का निश्चय किया। जब मरना ही है, तो भूखों नहीं मरेंगी।

कहीं रातका अँधेरा, कहीं मशालोंकी रोशिनी—सारा महल भूतोंके निवासकी तरह लग रहा था। दर्पणी आँखें फाड़े, अपनी बहनके बदनसे बदन सटाये, पथरीली दीवारके सहारे-सहारे राजमहलके प्रवेश-द्वारकी ओर बढ़ी जा रही थी। फिर वे एक लंबे-चौड़े गलियारेमें मुड़नेके लिए ठहर गईं। जालपाने झाँककर देखा—दूर तक दोनों ओर मशालें दीवारोंमें खोंसी हुई थीं। जालपाने दर्पणीका हाथ कसकर पकड़ा और तेज़ क़दमोंसे गलियारा पार करने लगी।

गलियारेके अंतमें जब वे फिर मुड़ीं, तो सहसा जालपा ठिठक गई। उसके शरीरमें काटो तो खून नहीं। उनके सामने एक हट्टा-कट्टा यवन सैनिक खड़ा था, जिसकी छातीपर भयानक काली दाढ़ी लटक रही थी। आहट पाकर वह घूमा और चकराकर इन दोनोंकी तरफ़ देखने लगा। फिर कुछ समझकर वह मुसकराया और उसका हाथ अपनी मूँछोंपर पहुँच कर उन्हें ऐंठने लगा। दर्पणीने भयाक्रांत होकर एक चीख़ मारी।

सहसा वे दोनों मुड़कर पीछेकी ओर दौड़ चलीं और यवन सैनिक

दीवारमेंसे मशाल उतारकर उनके पीछे-पीछे भागा। वह अरबीमें चिल्लाता जा रहा था : "लड़कियो, ठहरो तो सही। तुम लोगोंको ढूँढ़नेके लिए हम लोगोंने ज़मीन-आसमानके कुलाबे मिला दिये। अरे, बच कर जाती कहाँ हो, छोकरियो ?"

पकड़के निकट आते ही जालपा स्थिर होकर घूम गई। दर्पणी उससे चार पग आगे जाकर ठहरी। यवन इस आकस्मिक प्रतिक्रियासे फिर ठिठक गया। जालपाने तीव्र स्वरमें पूछा, "कहाँ है तेरे सेनापति ?"

उसकी बात न समझकर यवन खड़ा-खड़ा हँसने लगा। आगे बढ़कर उसने धृष्टतासे जालपाका हाथ पकड़ लिया और फिर दर्पणीकी ओर बढ़ा। दर्पणीने दोबारा एक चीख़ मारी और अचेत होकर ज़मीनपर गिर पड़ी। उस बलशाली यवनपर इसका कोई असर नहीं हुआ। शायद वह जानता था कि इस स्थितिमें लड़कियाँ बेहोश होनेके अलावा और कोई काम नहीं कर सकतीं। उसने दर्पणीको उठाकर कंधेपर डाल लिया और जालपाका हाथ पकड़े उसे खींचता हुआ ले चला।

कुछ देर बाद दोनों सिंधी राजकुमारियाँ यवन सेनापति मुहम्मद बिन क़ासिमके सामने थीं। उन्हें देखते ही वह बोला, "खुदाका फ़जल है ! तुम दोनोंके लिए ही मैं ठहरा हुआ था। नहीं तो अबतक मुलतान तक पहुँच चुका होता।"

राजकन्याओंके पल्ले उसकी बातका एक अक्षर भी नहीं पड़ा, यह समझकर मुहम्मदने उस सैनिकको आज्ञा दी, "ऐ, जाओ, जमाल मियाँको बुला लाओ।" यह सेनापतिका ज्ञानवान् दुभाषिया था।

जमाल मियाँ आये और लड़कियोंके ऊपर एक निगाह डालते ही वह जहाँके तहाँ खड़ेके खड़े रह गये। लेकिन मुहम्मद बिन क़ासिमका ध्यान उस तरफ़ नहीं था। दुभाषियेके आ जानेको अनुभव करके वह मुँह फेरे-फेरे ही बोला :

"सूरजको देखते ही जिस तरह तारे एक-एक करके भाग जाते हैं, उसी

तरह विजयी मुहम्मदके सामने आते ही तुम्हारे वीरोंकी आत्माएँ इस दुनियासे कूच कर गई हैं। मुहम्मद अपने साथ इस्लामका तेज लेकर आया है। उस इस्लामकी बाँहें लंबी और छायादार हैं। उनके नीचे सबको पनाह मिल सकती है। लड़कियो, खुदाकी रहमत है कि इस्लाम तुम्हारी तरफ़ अपना हाथ बढ़ा रहा है। बोलो, क्या इरादा है?"

जमाल मियाँने सेनापतिकी बात ज्यों-की-त्यों सिंधीमें अनुवाद कर दी। जालपाने कहा, "जिस तरह स्वतंत्र विचरते हुए निर्दोष हिरणोंको पापी भेड़िये गोल बाँध कर मार डालते हैं, उसी तरह, ओ यवन सेनापति, तूने हमारे प्रिय माता-पिताको मार डाला है। तू जिस इस्लामका इतने गर्वसे नाम लेता है वह हत्या और विनाशका दर्शन है। ओ इस्लामके दंभी नेता, तू शेर ज़रूर है पर तूने भूलसे सेहियोंको दबोच लिया है। या तो उन्हें छोड़ दे, नहीं तो पल भरमें उनके काँटे खड़े हो जाएँगे, और तुझे नष्ट कर देंगे।"

मियाँका अनुवाद खतम होते-न-होते मुहम्मद क़ासिम घूम गया। धर्मान्ध भावोंसे मिश्रित उसका मुख तन गया और उसने तीखे स्वरमें कहा, "बहादुर क़ासिमका बेटा मुहम्मद क़ाफ़िर औरतोंको मुँह नहीं लगाता। उसकी एक बीवी है, जो इस दुनियाके गुनाहोंसे पाक है—वह उसे प्यारी है। लड़कियो, तुमने इस्लामके पाक मज़हबकी तौहीन की है। बग़दादके बाज़ारमें जिस वक़्त तुम दोनों ग़ुलाम बनाकर बेच दी जाओगी, तब तुम्हें पता चलेगा कि इस्लामको नफ़रतकी नज़रसे देखनेवालोंका क्या अंजाम होता है।"

जालपाकी भौंह तन गई। दर्पणीकी मुद्रा करुणाजनक हो गई। वह बड़ी बहनके और नज़दीक सिमट गई। जालपाने सेनापतिकी बातका उत्तर दिया, "सेनापति, अभी तो सिंध ही लिया है। आगे बढ़, और देख कि अत्याचारको धर्म समझनेवालोंका क्या परिणाम होता है।"

मुहम्मद इन बच्चों जैसी बातोंपर हँसा। "हाँ, हमें परिणामका पता है। हम आगे बढ़ेंगे, और वहाँ सैकड़ों तुम्हारे जैसे हीरे बग़दादके खलीफ़ाके

हरमकी रौनक़ बढ़ानेके लिए हमारी राह देख रहे होंगे—क़ीमती हीरे ! हा हा हा !"

"हाँ," जालपाने दाँत भींचते हुए कहा, "क़ीमती हीरे, जो जल्दी ही ज़बानसे फिसलकर पेटमें पहुँच जाते हैं, और अँतड़ियोंको काट देते हैं ।"

अब सेनापतिको क्रोध आने लगा था, और औरतोंपर क्रोध उतारना वह कायरता समझता था । उसने जमाल मियाँकी ओर देखकर आज्ञा दी, "आज ही कारवाँ तैयार किया जाय । जमाल मियाँ, तुम इन लड़कियोंको साथ लेकर बग़दाद जाओगे । खलीफ़ाके हुजूरमें हमारी तरफ़से तोहफे पेश करना और इन लड़कियोंको खलीफ़ाका हुक्म लेकर बग़दादके सबसे जालिम व्यापारीको बेच देना । जाओ, कमबख्तो, तुम्हारी यही सजा है ।"

जमाल मियाँ फिर उसकी बातका अनुवाद करके लड़कियोंको समझाने लगे कि मुहम्मदने उन्हें बीचमें ही रोककर जोरसे आज्ञा दी : "जाओ !"

जमाल मियाँ ज़मीनपर झुक गये और तुरन्त दोनों राजकन्याओंके हाथ थामकर उस स्थानसे बाहर हो गये ।

× × ×

उसी दिन हब्शियोंकी एक बड़ी टुकड़ीके साथ जमाल मियाँका कारवाँ दोनों राज-कन्याओंको साथ ले बग़दादके लिए रवाना हो गया ।

जालपा और दर्पणीकी स्थिति उन यात्रियोंकी तरह थी, जिनकी नाव अपने समूहसे बिछुड़ गई हो और मँझधारमें आसमान पर काले बादल घिर कर उन्हें भयावने भविष्यकी काली-काली छायाएँ दिखा रहे हों । जालपाके हृदयमें सब भावनाओंसे ऊपर उभर कर प्रतिशोधकी भावना बार-बार वेगके साथ जाग उठती थी । दर्पणी केवल रो रही थी । वैसे भी वह भूखी थी । म्लेच्छ यवनोंके हाथका खाना उसके गलेके नीचे ठीक प्रकारसे उतरा नहीं था । मजबूरीमें जो कुछ खाया गया था वही, मालूम होता था, जैसे अभी तक गलेमें अटक रहा हो ।

जब कहीं पड़ाव पड़ता था, जमाल मियाँ उनके पास आ विराजते ।

इस आक्रमणसे बहुत दिनों पहले उन्होंने हिंदुस्तान आकर संस्कृत और सिंधी ज़बानें सीखी थीं। वह हिंदुस्तानकी संस्कृतिको कुछ-कुछ समझनेका दावा करते थे। बुढ़ापेके किनारे पहुँच चुके थे। लेकिन शरीर खालिस खूनकी तरह लाल था। उनमें अब भी जवानोंसे ज़्यादा हिम्मत थी।

दूसरे पड़ाव पर जमाल मियाँने कहा, "देखो, लड़कियो, मुझे हुक्म हुआ है कि तुम्हें बग़दादमें अच्छे दामोंपर बेच दूँ। मुझे इस बातका बहुत अफ़सोस है कि उस नीरस सिपहसालारमें औरतकी कोमल भावनाओंको समझनेका ज़रा भी माद्दा नहीं है। ग़ुलामोंके व्यापारी बड़े बेरहम और बेहया होते हैं। कभी-कभी खरीदारको उसके मालकी तरफ़से दिलजमई करानेके लिए वे लोग औरतोंको सरेबाज़ार नंगा कर देते हैं। खुदाका कहर उनके सिर पर टूट पड़े!"

जालपाने दूर क्षितिजकी ओर देख कर एक लंबा निःश्वास छोड़ा। शायद वह अपने प्रारब्धको पढ़नेका यत्न कर रही थी।

जमाल मियाँकी निगाह दर्पणीपर जमी थी। वह आश्वासन देते हुए बोले : "लेकिन जहाँ तक भी होगा मैं तुम्हें इस मुसीबतसे तो कमसे कम छुटकारा दिलवा दूँगा। हो सका तो मैं ही खरीद लूँगा। बग़दादके अमीरोंसे ज़रा डर लगता है। जिस चीज़के पीछे कमबख्त पड़ जाते हैं, उसके लिए कंगाल हो जानेमें ही इज्ज़तकी बात समझते हैं।" दर्पणीकी नज़रें उनसे मिलीं और वह मुसकरा दिये।

लेकिन दर्पणीकी आँखोंमें उस समय कोई भाव नहीं था।

जमाल मियाँ चले गये। जालपाने दर्पणीको सुनाते हुए कहा, "हम आज हार गये हैं तो क्या? इस धर्मयुद्धमें जो मारे गये हैं उनके भाई, बहनें, विधवाएँ मौजूद हैं। एक दिन आयेगा और सिंध फिर उठेगा। सिंधी बाँके बग़दाद तक पहुँचकर दुश्मनोंसे हमारी इस बेइज्ज़तीका बदला लेंगे। तुझे विश्वास होता है न, दर्पणी?"

दर्पणी विस्फारित नेत्रोंसे जालपाको देख रही थी। उसकी आँखोंकी

पुतलियाँ स्थिर थीं। लगता था कि उनमें चेतना नहीं है। उसने शायद जालपाकी बात भी सुनी नहीं थी। वह अपने विश्वासकी बात क्या बताती? लेकिन प्रतीत हो रहा था कि जालपाके प्रश्नमें स्वयं विश्वासका पुट नहीं था।

"क्या बात है, दर्पणी! तू ऐसे क्यों देख रही है?" जालपा उसके और निकट आ गई। उसे बाहुओंमें भरते हुए वह बोली, "देख, मेरी अच्छी बहन, इस तरह दुखी नहीं होते। तुझे देख कर मेरा मन बैठा जाता है।"

दर्पणी चुप रही। तभी जालपाको ध्यान आया कि दर्पणी पिछले वक़्त भी भूखी रही थी। उसने कहा, "यह दुभाषिया अच्छा आदमी है। एक तबाक भरकर दलिया लाया था। कहता था पासके गाँवसे एक ब्राह्मणको पकड़ लाकर उससे बनवाया था। खासतौरसे तुझे खिलानेको कह रहा था। वह भी जानता है कि तू म्लेच्छोंके हाथका खाना मनसे नहीं खाती। डेरेमें रखा है। मैं ला रही हूँ। मेरी रानी बहन, दुख मनाना हमें शोभा नहीं देता।"

जालपा उसे छोड़कर डेरेकी तरफ़ चली। गाँवसे ब्राह्मणको पकड़ लानेकी बात मनगढ़ंत थी। जिस उद्देश्यके लिए जालपा अपनेको जीवित रखे हुए थी उसीके लिए वह येन-केन-प्रकारेण दर्पणीको भी जीवित रखनेकी चेष्टा कर रही थी। दो चार पग चलकर सहसा वह घूम कर बोली, "अरे, अभी तो तू नहाई भी नहीं! चल, मैं हब्शी ग़ुलामसे कहकर पानी..." लेकिन आगेकी बात उसके मुँहसे नहीं निकली। इतना कहते-कहते उसकी निगाह जो दर्पणीपर गई तो वह लगभग चीख उठी: "दर्पणी!"

जंगलीपनसे दर्पणी अपनी उँगलीमें पड़ी अँगूठी जल्दी-जल्दी चबा कर उसका हीरा निगलनेकी चेष्टा कर रही थी। जालपा दौड़ी। अँगूठी वाला बायाँ हाथ थामकर वह ज़ोरसे बोली, "क्या करती है! पागल हो गई है? याद नहीं, माताजीने क्या-क्या कहा था? इतनी-सी मुसीबतमें सब भूल गई?"

लेकिन दर्पणीके दाँत अद्भुत ढंगसे खुले हुए थे, गाल पीछेको हो गये थे, और नेत्र पहलेसे भी ज़्यादा आतंकित थे। उसने अपना हाथ छुड़ानेकी कोशिश की, और जब नहीं छूट सका, तो उसने जालपाकी कलाईमें अपने

दाँत गड़ाकर बड़े ज़ोरसे काट खाया। पीड़ासे जालपा छटपटा गई। दर्पणीका हाथ उसके हाथसे छूट गया। फिर वह उसे अपने मुँह तक ले गई।

जालपा विवशकी तरह अपने चारों तरफ़ देखने लगी। चिल्लानेसे सब माजरा खुल जाता। फिर उनपर और भी कड़े पहरे बैठाये जाते, और उनके लिए दुश्मनसे बदला लेनेके अवसर हर प्रतिबन्धके साथ कम होते जाते। अंतमें उसने एक बड़े ज़ोरका थप्पड़ दर्पणीके मुँहपर जड़ दिया।

दर्पणीका हाथ मुँहसे हट गया। थप्पड़की पाँचों उँगलियाँ उसके गोरे गालपर उभर आईं, और उसका वेग न सह सकनेके कारण वह एक ओरको लुढ़क गई। अँगूठीका हीरा लगभग बाहर आ चुका था। जालपाने उसे अपने दाँतोंसे पकड़कर निकाल लिया। दर्पणी अपने दोनों हाथोंसे मुँह छिपा कर बैठ गई। वह रो रही थी। उसका सिर अपनी छातीमें छिपाकर जालपा भी वहीं बैठ गई। उसके नेत्रोंमें भी जल भर आया था।

दूर पहरेपर बैठे हब्शी उनकी किसी भी बातको समझ न पानेके कारण अविचल भावसे जहाँके तहाँ मिट्टीके माधोकी तरह बैठे रहे। जमाल मियाँ शायद कहीं डेरेके आसपास नहीं थे। होते तो निश्चय ही यह बग़दादके ग़ुलामबाज़ारमें दर्पणीको खरीदनेके स्वप्न भूल जाते।

× × ×

हिंदुस्तानकी लूटका माल लिये जमाल मियाँके आनेका समाचार उनसे भी पहले बग़दादमें पहुँच गया। ख़लीफ़ाने नये ऊँट भेजे कि थके हारे ऊँटोंको छुट्टी दे दी जाये।

जब बग़दादकी चौहद्दीका बुलंद दरवाज़ा इन लोगोंको प्रवेश देनेके लिए खुला, तो 'अल्लाहो अकबर!' के नारोंसे बग़दादके निवासियोंने जमाल मियाँके कारवाँका स्वागत किया। सबसे आगे एक सजीली ऊँटनीपर जमाल मियाँ स्वयं थे। उनके पीछे एक ऊँटपर महमिल था, जिसमें ज़र्कबर्क़ पोशाकोंमें जालपा और दर्पणी बैठी थीं। उनके पीछे हब्शी जवानोंका ऊँट-दल था, जो हज़ारोंकी संख्यामें कभी ख़तम ही होनेका नाम नहीं लेता था। सबके पीछे बग़दादी सैनिक थे, जिनकी तादाद

लगभग दो हज़ार थी। और इन लोगोंके बीचमें असंख्य तोहफे और अपार धन था, जो विजयी सेनापति मुहम्मद कासिमने खलीफाकी सेवामें अपनी वफ़ादारी और जाँनिसारी के प्रमाणस्वरूप भेजा था।

बग़दादके गोल गुंबदोंपर, छतोंपर, छज्जोंपर लोगोंके ठट जूटे थे। लोग झाँक-झाँक कर उन जीवित हीरोंको देखना चाहते थे, जिनकी चमक आँखोंके साथ-साथ दिलको भी पार किये दे रही थी। दर्पणी फिर अपने हाथोंमें मुँह छिपा कर रोने लगी। जालपाने उसकी ओर देखा, और भौंह विकृत करके उसने दर्पणीके हाथ उसके मुँहपरसे बलपूर्वक हटा दिये। "देखती नहीं, बग़दादके निवासी हमारा कितना शानदार स्वागत कर रहे हैं! क्या तू यहाँ हिंदुस्तानकी हँसी उड़वाना चाहती है? ये लोग सोचेंगे हिंदुस्तानकी स्त्रियाँ कितनी डरपोक होती हैं!" और दर्पणीने कोशिश करके अपना मुँह सीधा किया। उसके होठों पर मुसकराहट थी और आँखों में रुदन था।

विजयके जोश और उछाहके नारे लगाते लोग उस लंबे कारवाँके दायें-बायें और पीछे खलीफाके महलकी ओर चले। सब ओर मुहम्मद बिन कासिमका नाम सुना जा रहा था। उसने हिंदुस्तान नहीं जीता था, मानो बग़दादियोंका दिल जीत लिया था।

विजयके दूतोंका स्वागत स्वयं अपनी उपस्थितिसे करनेके लिए खलीफा दरबारसे बाहर आया। बग़दादके इतिहासमें यह पहला अवसर था, जब खलीफाने किसी आने वालेकी इज्ज़तमें दरबारसे बाहर क़दम रखा था। खलीफाको देखते ही लोगोंने 'खलीफा वालिद ज़िंदाबाद!' की आवाजें उठाईं कि खलीफाने हाथ उठाकर उन सबको चुप किया। फिर उसने तेज आवाज़में कहा, "नहीं, नहीं, कहो: भारत-विजेता मुहम्मद बिन कासिम ज़िंदाबाद!"

खलीफ़ाकी आज्ञा पालन की गई।

दरबार आज नये ढंग और नये करीनेसे सजा था। झाड़फानूस आज

असाधारण रूप बिखेर रहे थे। जनसाधारणके लिए गलियारे बनाय गयं थे। हरमका हरम चिलमनोंपर झुका पड़ रहा था। उन्होंने सुना था कि हिंदुस्तानकी हरियालीकी भूमिसे मुहम्मद कासिमने दो खूबसूरत और नौजवान तितलियाँ पकड़ कर भेजी हैं, जिनके सामने खलीफ़ाके सारे हरमकी सुंदरता पानी भरती है। उत्सुकता और भय दोनों उनकी आँखोंमें नाच रहे थे।

आनबान और शानके साथ खलीफ़ाके सामने हिंदुस्तानके तोहफे पेश किये जाने लगे। पन्ने और पुखराज, हीरे और ज़मुर्द। फल, जिन्हें सिंधसे बग़दाद तक विशेष रूपसे सुरक्षित रखा गया था। फिर जमाल मियाँ आगे आये। उन्होंने सिर झुकाकर ज़मीनको चूमा।

"ऐ दोनों दुनियाके मालिक, संसारके एकमात्र खलीफ़ा, मैं तेरे हुजूरमें हिंदुस्तानकी जादुई ज़मीन का एक ऐसा अजीब खेल पेश करता हूँ, जिसे ग़रीबोंने खेला और बादशाहतके सपने देखे, अमीरोंने खेला और घर बैठे योद्धा बन गये, बादशाहोंने खेला, और संसारकी विजयकी कल्पनाएँ उनमें जाग उठीं।"

उसके हाथोंमें एक बड़ा थाल था, जिसपर जरीका एक बेशक़ीमती कामका छाजन था। उसने उसे उलट दिया। उसके नीचे एक चौकी थी, जिसपर खालिस सोनेका पत्तर था और जगह-जगह छोटे-छोटे हीरे जड़े हुए थे। कारीगरीसे बिल्लौरमें रंग भरकर चौकीकी ज़मीन पर चौंसठ खाने बनाये गये थे, जो बराबर-बराबर दो रंगों में थे। चौकीकी एक दराज थी, जिसे जमाल मियाँने जल्दी-जल्दी एक सोनेकी चाबीसे खोला और उसे बाहर खींच लिया। बड़ी बारीकी और कारीगरीसे तराशे हुए लाल और पन्नोंके वे बत्तीस मोहरे थे। बिसातपर सजते ही उनकी आभा दुगुने रूपसे चमकने लगी।

"ऐ सारे ज़मानेके खलीफा, यह वह खेल है जिसे हिंदुस्तानवाले शतरंज कहते हैं और जो हिंदुस्तानके पहले मुसलमान विजेता मूहम्मद बिन कासिम

की आज्ञासे पहले पहल बग़दादको भेंट किया गया। इससे उस महान् सेनापतिकी कलापूर्ण दृष्टिका पता चलता है। इससे मालूम होता है कि वतनसे दूर रह कर, हज़ार मुसीबतें झेलते हुए भी, बग़दादका नाम रोशन करनेवाला सतरह सालका वह बाँका शूरवीर किस तरह अपने स्वामीके मनोरंजनके लिए चिन्तित रहता है। ऐ दुनियाके मालिक, उसे दुआ दे ताकि वह तेरी दुआओंसे बल प्राप्त करके अपने उस महान् उद्देश्यमें सफल हो सके।"

जमाल मियाँके इस छोटेसे व्याख्यानसे और उसके भीतर वर्णित तथ्योंसे दरबारके ऊपर ऐसा असर पड़ा, जिसने कुछ देरके लिए सबका ध्यान उन दो जीवित प्रतिमाओंकी तरफ़से हटा दिया, जोअभी तक एक-एक नौजवान बग़दादीके दिलपर छाई हुई थीं।

"देखनेमें चीज़ लाजवाब है! हमें खुशी हुई। कैसे खेला जाता है यह खेल, जमाल मियाँ?" खलीफ़ाने पूछा।

जमाल मियाँने गरदन लटका ली। "जानकी खैर चाहता हूँ, ऐ मालिक। काफिरोंने किसी विदेशीके दिमाग़को इस काबिल नहीं समझा कि कोई इस खेलमें उनका मुकाबला कर सके। यही कारण है कि उन्होंने कभी-किसी वाहरी आदमीको यह खेल सिखानेमें दिलचस्पी नहीं ली। ग़ुलामने जो तारीफ़ इस खेलकी सुनी मालिकके सामने बयान कर दी।"

मोहरोंको हाथमें लेकर देखनेके लिए मचलती हुई हथेलियोंको भींचकर बग़दादके खलीफ़ाने कहा, "जमाल मियाँ, तुम्हारी अक़लपर अफ़सोस है! तुम एक ऐसी चक्करदार चीज़ ले आये हो, जो बेशक़ीमती तो है, लेकिन जिसे हिंदवाले जानते हैं, बग़दादवाले नहीं जानते। हमें ताज्जुब है कि तुमने यह नहीं सोचा कि इससे सारे बग़दादकी बेइज्ज़ती होती है। देखनेवाले कहेंगे कि अरबकी राजधानीमें ऐसी भी चीज़ है, जो बेशक़ीमती होनेके कारण ही बग़दादमें रखी है, लेकिन वे लोग उसकी रूहसे अनजान हैं। खैर मनाओ, जमाल मियाँ, अगर तुम उस जाँनिसार सिपाहसालारके दूत न होते, तो हम तुम्हारा सिर कलम करा देते।"

खलीफ़ा इस ज़रा-सी बातका मनमाना अर्थ लेकर इसपर इतना नाराज हो जायेगा, इसका जमाल मियाँ को गुमान भी नहीं था। इतनेसे समयमें ही सारे बग़दादमें प्रसिद्ध हो गई उन सुंदरियोंकी तरफ़से खलीफ़ाका ध्यान हट जाये, इसलिए उसने यह नई चीज़, जिसकी क़ीमतका अनुमान उसके नयेपनके साथ मिल कर कल्पनाको छितरा देता था, खलीफाके सामने पेश की थी। लेकिन भाड़में जाय दर्पणी और उसका हुस्न। अब खलीफ़ाकी काटती हुई नज़रोंसे पिंड छुड़ाना भारी हो रहा था। कुछ देर सकतेकी हालतमें खड़े रह कर जमाल मियाँने निवेदन किया :

"ग़ुलाम दो और बेशक़ीमती तोहफे मालिकके हुज़ूरमें पेश करना चाहता है और ग़ुलामको इतमीनान है कि ख़ुदावंदका प्यारा, बग़दादका शिरमौर उनकी आत्माका रहस्य पहलेसे ही जानता है। फिर भी वे तोहफे बेमिसाल हैं और इस तोहफेसे किसी भी हालतमें कम नहीं हैं।"

भारी स्वरसे खलीफाने कहा, "इजाजत है।"

× × ×

जमाल मियाँ पीछे हटते हुए वहाँसे लोप हो गये। कुछ देर बाद फिर प्रकट हुए। इस बार वह बार-बार झुकते हुए, लोगोंकी वाह-वाह और मरहबा-की ध्वनियोंके उत्तरमें आदाबअर्ज करते हुए चले आ रहे थे। उनके पीछे झिलमिलाती मूल्यवान पोशाकोंमें जालपा और दर्पणी थीं। उनके सुंदर मुख लोगोंके सामने प्रदर्शनके लिए खुले रखे गये थे। खलीफ़ाकी पलकोंका उठना-गिरना बंद हो गया।

दर्पणीका चेहरा सुन्न था। किसी प्रकारके दुःख-सुखका भाव उसके मुखसे प्रकट नहीं हो रहा था। संभवतः पीड़ाका अतिरेक उसके हृदयसे अनुभूतिका तत्त्व नष्ट कर चुका था। सारा दरबार उसे घूर रहा था। लेकिन उसकी दृष्टि मुखकी सीधमें खलीफ़ापर जमी थी। लगता था कि खलीफ़ाकी कमरमें कामदार म्यानमें लिपटी कटार ही मानो उसका एकमात्र लक्ष्य हो।

शतरंजके बारेमें जमाल मियाँके सिरपर घहराते हुए खलीफ़ाके

तीव्र उद्गारोंको जालपा सुन चुकी थी। शायद उसने मन ही मन कुछ निर्णय भी कर लिया था। यही कारण था कि उसके होंठोंपर मुसकराहट अपनी हलकी लालिमाके साथ नाच रही थी। खलीफाके दरबारका ऐश्वर्य उस पर जादू-सा करता प्रतीत हो रहा था। अपनी गंभीरताके कारण एक देवी-सी लग रही थी, तो दूसरी इंद्रके दरबारमें अभी-अभी नृत्य करके आई अप्सरा-सी प्रतीत हो रही थी।

नजरें सीधी रखकर खलीफ़ाने कहा, "हम हैरान हैं, जमाल मियाँ, कि हम तुम्हारे हाथोंको चूमें, बहादुर मुहम्मद बिन कासिमकी यादगारको चूमें या इन सुंदरियोंके हाथोंको चूमें, क्योंकि हमारे होंठ अब किसी चीजको बड़े ज़ोरसे चूमनेके लिए मचल रहे हैं।"

इसपर दरबारमें कहकहोंका एक दौर चला। विलासी और नौजवान खलीफ़ा दरबारमें सब तरहकी बातें करता था। जबतक उसे अपने बुजुर्गोंका स्मरण रहता था वह अदब और शानमें नीरोसे कम व्यवस्था पसंद नहीं करता था, और जब दरबारमें बैठे-बैठे ही रंगीनी आ जाती थी, तो मयखाने-के बग़दादी नागरिकमें और उसमें कोई अंतर नहीं रह जाता था।

कहकहोंकी मद्धिम होती हुई ध्वनियोंके बीचमें एक बारीक और संयत ध्वनि सुनाई दी : "नहीं, ये तीनों चीज़ें बग़दादके खलीफ़ाके चूमनेके योग्य नहीं हैं। अगर चूमना आवश्यक ही है, तो उस कसौटीको चूमिए, जिसपर हिंदुस्तानवाले दूसरोंकी अक़्लको घिसकर परखते हैं।" और उसने बिखरी हुई शतरंजकी ओर खलीफ़ाका ध्यान आकृष्ट किया। यह थी जालपा।

सारा दरबार जालपाकी आवाज सुननेके लिए निःशब्द हो गया। सूई भी गिरती, तो उसकी आवाज सुनाई दे जाती। जालपाने चुपचाप अपनी ओर देखते हुए खलीफ़ाकी नज़रोंसे नज़रें मिला कर कहा, "इतनी मूल्यवान भेंट अनाथोंकी तरह जो खलीफ़ा ठुकरा देगा उसे जौहरी कौन कहेगा? न कहिए फिर कि बग़दादमें कोई ऐसी चीज़ है, जिसे हिंदुस्तान-

वाले जानते हैं, बग़दादी नहीं जानते। आज हम बग़दादमें हैं तो बग़दाद हमारा है और हम बग़दादके हैं। मैं बताऊँगी बग़दादके खलीफ़ाको इस खेलका रहस्य।"

जालपाकी भाषा समझ न पा सकनेके कारण उस वक़्त खलीफा तड़प गया। उसकी बल खाती हुई आवाज़में निकला, "जमाल मियाँ, इस वक़्त महान् खलीफ़ाके कान क्या सुन रहे हैं?"

जमाल मियाँने झुककर अपने ऊपर सौंपे हुए कर्त्तव्यको पूरा किया। अनुवाद समाप्त होते ही खलीफा उछल पड़ा। "खुदाकी क़सम, बगदादके इतिहासका नया अध्याय आरंभ होने जा रहा है। स्वागत है, स्वागत है, लाख बार स्वागत है! जमाल मियाँ, तुम जितना धन एक बारमें उठा सको शाही खजानेसे ले जा सकते हो।"

इस कृपाके लिए जमाल मियाँ झुके तो बस झुके ही रह गये।

× × ×

दोनों भारतीय राजकन्याओंको बग़दादके शाही हरममें दाखिल कर लिया गया।

दिनभर खलीफ़ा जशन वग़ैरहमें बाहर रहा। दो चार बेगमें जालपा और दर्पणीको देखने तो आईं, लेकिन स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि उनके आगमनको कुछ विशेष महत्त्व नहीं दिया जा रहा था या इतना महत्त्व दिया जा रहा था कि उसके कारण ईर्ष्या और द्वेषका स्वाभाविक वातावरण उत्पन्न हो गया था। इस प्रकार थोड़ी ही देर बाद जालपा और दर्पणीको एकांत मिल गया।

अपनी बहनकी ओरसे दर्पणीके हृदयमें ज्वाला कौंध रही थी। एकांत पाते ही उसने व्यंग्य-वाण छोड़ा, "क्या पता था कि बग़दाद इतना मनोरम है!"

जालपा हँस पड़ी। "यही क्या पता था कि हिंदुस्तानसे बाहर भी कोई जगह है, और वह बग़दाद हो सकती है!"

दर्पणीके जैसे काँटे चुभ गये। "इतने सस्ते मूल्यपर यवनकी बेगम बननेके लिए ही रावड़में पैदा हुई थी?"

उसी ˜ ालपा बोली, "जिस चीज़का कालान्तरी
बिकन नने मूल्यका क्या पता हो सकता है ? फिर
, इससे क्या आता जाता है ?"
संतोष है ?" दर्पणीने होंठ तिरछे करके पूछा ।
ा !" जालपाने विस्मयसे कहा । "मैंने तो अपनी
क़ीमत ज ाई है ।"

दर्पणीके ध टूट गया । वह झल्लाकर तीव्र स्वरसे बोली, "तो तू मुझसे कि का बदला चुका रही है ? मुझे मरने क्यों नहीं देती, जालपा ?"

"क्योंकि तू बिक गई है, दर्पणी । अब मुझे तेरा मोल भी तो लेना है न । अपनी रानी बहनके जीवनका इतना सस्ता मोल कैसे लगा दूँ ?" जालपाने कहा ।

इतनेमें खलीफ़ाके आनेकी घोषणा हुई । एक चोबदारके बाद दूसरे चोबदारकी स्वागतकी आवाज़ कितनी ही देरतक सुनाई देती रही । होंठोंपर उँगली रख कर जालपाने दर्पणीको किसी भी प्रकार बोलनेसे रोकनेका इशारा किया और वस्त्र सुव्यवस्थित करके वह खलीफ़ाके स्वागतके लिए तैयार हो गई ।

जमाल मियाँके साथ द्वारपर आकर खलीफा बेसब्रीसे भीतर घुस पड़ा । सामने ही चाँदके दो टुकड़े देखकर वह झूम गया । उसने अंदाजसे सिर ज़रा-सा झुकाकर कहा, "हुस्नकी देवियोंको बग़दादके खलीफ़ाका पहला सलाम ।"

"कबूल है," जालपाने तिरछी होकर उत्तरमें कहा । दर्पणीके मुख पर घृणाका हलका भाव संयमके बावजूद झाँक रहा था ।

"ग़ुलाम रसूल !" खलीफ़ाने बाहर खड़े ग़ुलामको पुकारा ।

वह आया । "हुक्म हो, मेरी जानके मालिक ?"

"शतरंज लाओ," खलीफ़ाने हुक्म दिया ।

जब तक शतरंज आई खलीफ़ा एक क्षणको भी चुप नहीं रहा। वह बातें करता रहा, हिंदुस्तानकी, उसके रीति-रिवाजोंकी, उसके निवासियोंकी और उनके रहनसहनकी।

बिसात बिछ गई। जालपाने अपनी लंबी-लंबी उँगलियोंसे उस पर शतरंजके मोहरे सजाये। फिर वह खलीफ़ाको सुझाने लगी। जमाल मियाँ नियमानुसार अनुवाद करने लगे। "ऐ अरबके खुदा, देख यह बादशाह है। इसकी शान इतनी कि यह अपने घरसे किसी भी तरफ़ एक क़दमके फ़ासलेसे ज़्यादा नहीं चलता। यह वजीर है, जिसे सदा किसी-न-किसी कामसे बिसातपर चारों तरफ़ दौड़ना पड़ता है। यह ऊँट है, जो सदा दूरकी मार करता है, लेकिन तिरछे-तिरछे। यह घोड़ा है, जिसकी नज़र कहीं होती है और क़दम कहीं पड़ता है। यह हाथी है, जो बेतहाशा सीधी पट्टीपर भागता है।"

हाथीकी बात सुनकर खलीफ़ाको खूब हँसी आई। उसने मग्न होकर कहा, "आख़िर हिंदुस्तान हिंदुस्तान है।"

जालपाने भी हँसीमें योग दिया। "और ये सोलह पैदल हैं। इनके लिए पीछे लौटना वर्जित है। इनका काम है आगे बढ़ना और मर जाना। और, ऐ खलीफ़ा, शतरंजकी यही ख़ूबी है कि इसके मोहरोंकी जो गति निश्चित कर दी गई है, कोई मोहरा उससे विचलित नहीं होता, चाहे मर जाये।"

बेअख्तियार खलीफ़ाके मुँहसे निकला, "वाह रे हिंदुस्तान!"

"अब आइये, पहली बाजी बिना किसी शर्तके रहेगी। इसकी हार जीत नहीं मानी जायेगी। एक ही बाजीमें बग़दादका बुद्धिमान खलीफा शतरंज की चालोंको समझ जायेगा।"

खलीफाने एक बाजी खेली। इस नये मनोरंजनकी इतनी मोहिनी उस पर छा गई कि वह बोलना भूल गया। जब बाजी खतम हो गई, तो जालपाकी आकर्षक ध्वनि बंद हो गई। खलीफा बिसातके ऊपर कुहनी रख कर जालपाके पास अपना मुँह ले जाकर सहसा बोल उठा, "ऐ

हिंदुस्तानकी अक़्लमंद हूर, बग़दादका महान् खलीफा तुझे अपने हरमकी नलिकाका प्रतिष्ठित पद देना चाहता है।"

जालपा समझी नहीं। उसने दोजानू बैठे जमाल मियाँकी तरफ़ देखा। खलीफा पीछे हट गया। उसके चौड़े नासापुटोंसे एक निःश्वास निकला। उसे जमाल मियाँके अनुवाद समाप्त होने तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

लेकिन उत्तरमें जालपाने कहा, "और दर्पणी—मेरी बहन—उसका क्या होगा?"

"हम उसे तुझसे भी ऊँचा मानेंगे," और खलीफाने अपनी कनिष्ठिका से दर्पणीका झुका हुआ मुँह ऊपर उठा दिया। उसकी ऊँगलीकी अंगूठीमें पड़े चमकते हीरेकी आभा दर्पणीके सुन्दर मुखको देदीप्यमान कर गई।

× ⊠ ⊠

उसके बाद जालपा सहसा ही हतोत्साह-सी हो गई। आशंकासे खलीफा और जमाल मियाँ दोनोंने उसके मुखकी ओर देखा। फिर जालपाने जो बात कही उससे जमाल मियाँ अचकचा कर उसका मुँह देखने लगे। खलीफा जल्दीसे बोल उठा, "क्या है? क्या सुना हमारे कानोंने?"

जमाल मियाँ खलीफाके चरणोंमें गिर पड़े। "मेरी जानकी सलामती बख्शी जाये, मालिक।"

खलीफाने उसे झटक दिया। "हाँ, हाँ, बख्शी, जल्दी बोलो!"

जमाल मियाँने अनुवाद किया, "हिंदकी नाजनी कह रही है कि वे महान् खलीफाके हरमके काबिल नहीं हैं, क्योंकि आक्रमणकारी, क्रूर मुहम्मद बिन कासिमने उन्हें तीन दिन अपने हरममें पत्नीकी तरह रखा है।"

खलीफा सुनते ही तड़प गया। "बग़दादके महान् खलीफाके कान यह क्या कुफ्र सुन रहे हैं! उस लौंडे सिपहसालारकी यह हिप्म्मत! उसने तोहफ़ेको खुद जूठा करके हमारे हुजूरमें भेजा है। इसकी सजा मौत है?" और आवेशमें वह चिल्लाया, "गुलाम रसूल!"

ग़ुलाम रसूलने एकदम प्रवेश किया। "हुक्म हो, मेरी जानके मालिक?

खलीफाने चुटीले स्वरमें आज्ञा दी, "इसी वक़्त कारवाँ तैयार करनेका हुक्म दिया जाये। वजीरको फरमान लिखनेके लिए कहो। सिपहसालार

मुहम्मद बिन कासिम जिस सूरतमें हो, जहाँ हो, वहीं अपनेको बैलकी कच्ची खालमें सिलवा कर बग़दादके लिए रवाना कर दे—बस।"

"जो हुक्म, मेरी जानके मालिक," गुलाम रसूलने कहा।

अपने भीतर भड़की हुई भीषण प्रतिहिंसासे उत्तेजित खलीफ़ाने जाते-जाते बारी-बारीसे जालपा और दर्पणी पर एक-एक निगाह डाली, जिसका अर्थ था कि अभी तक हिंदकी नाज़नीनोंने बग़दादके खलीफाकी शान-शौकत देखी है, अब वे उसका प्रताप देखेंगी।

जमाल मियाँका सिर खलीफाकी शक्तिकी स्वीकारोक्तिमें नत हो गया। क्या झूठ था और क्या सच था, यह वह खूब जानते थे। इन लड़कियों-को अपने घरमें रखनेकी अपनी पूर्व कल्पना पर वह मन ही मन सिहर उठे।

खलीफ़ाके जानेके बाद दर्पणी जालपाके चरणों पर गिर पड़ी। "मैं तेरी महानताके सम्मुख अपना सिर झुकाती हूँ, जालपा। मुझे क्षमा कर दे।"

जालपा उसका सिर अपनी छातीमें छिपा कर पहली बार रोई।

पूरे एक मास तक खलीफाने हरमका रुख नहीं किया। फिर एक दिन सारा हरम एकत्र किया गया और कोमलहृदया सजीधजी बेगमोंके सम्मुख बैलकी खालका एक थैला लाकर रखा गया। खलीफाने उसे खोलनेकी आज्ञा दी। खोलने पर उसमेंसे एक लाश निकली। वह सड़ी हुई घिनौनी लाश, जिसे देखकर अधिकांश बेगमें बेहोश हो गईं, भारत विजेता मुहम्मद-बिन कासिमकी थी, जो विजयपर विजय करता हुआ उदयपुर तक पहुँच गया था। इससे पहले कि वह उदयपुर पर अपनी छाया डालता, खलीफाके दूत उसकी मौतका परवाना लेकर पहुँच चुके थे।

कुछ देर तक जालपाने लाशको टकटकी लगाकर पहचाना। फिर खलीफाके हाथमें थमे हरे फूलपर एक दृष्टि डाली और सहसा बड़े ज़ोरसे खिलखिलाकर हँस पड़ी। खलीफाने अचकचाकर पूछा, "क्यों? क्या तुमने महान् खलीफासे धोखा करनेका नतीजा नहीं देखा, नाज़नीनो?"

"देखा, ऐ बुद्धिमान् खलीफा, खूब देखा। हमने देखा कि हिंदुस्तान-वाले शतरंजके बारेमें विदेशियोंकी अयोग्यताको ठीक ही समझते थे।

वे जानते थे कि विदेशी शतरंजके भौतिक रूपको भले ही समझ जाएँ, लेकिन शतरंजके भीतर इस नश्वर जीवनका जो दर्शन है उसे वे नहीं समझ पाएँगे। शतरंज कहती है कि ओ खिलाड़ी, सारी बिसात पर एक समूची नज़र डाल कर अपनी और विरोधीकी स्थितियोंको भलीभाँति देख ले। अगर केवल एक मोहरेपर तेरी निगाह रहेगी, तो तू हार जायगा। ऐ महान् खलीफा, तू इस दूसरी बाजीमें हार गया। शतरंजमें विरोधीके बादशाहको मारा नहीं जाता, केवल उसे मात दी जाती है। तेरे इस अभागे सेनापतिने इस नियमका उल्लंघन करके हमारे पिताको शतरंजकी बिसातसे उठाकर मार डाला, हमारी प्यारी माँको जल-मरने पर मजबूर किया। लेकिन हमने उसके प्रधान गढ़में आकर भी अपना बदला ले लिया। ऐ खलीफा, झुँझला मत, यह तो शतरंजकी एक चाल थी।"

जमाल मियाँ अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए काँपते रहे। सुनते ही खलीफा आगबबूला हो गया। वह चिल्ला कर बोला, "ग़ुलाम रसूल!"

"हुक्म हो, मेरी जानके मालिक?" ग़ुलाम रसूलने कहा।

"इन सापिनोंको ज़िंदा ही दीवारमें चिनवा दिया जाये।"

"जो हुक्म, मेरी जानके मालिक," ग़ुलामने सिर झुकाया।

उसी दिन खलीफाके महलके सदर दरवाजेके पास एक दीवार खड़ी की गई और एक दूसरेसे चिपटी हुई उन दोनों भारतीय कन्याओंको सदाके लिए जीवित ही उसमें चिन दिया गया। सिरके ऊपर उठती हुई दीवारसे केवल जालपाके अंतिम स्वर सुनाई दिये, "दर्पणी, तुझे अपने मूल्यसे संतोष है?" और दर्पणीकी हँसी सुनाई दी—प्रसन्नताकी हँसी, संतोषकी हँसी।

खलीफाके इस बीभत्स व्यवहारसे भारतमें आई हुई अरबकी फौजोंके हौसले पस्त हो गये। व्यक्तिगत निरंकुशता और नीच स्वार्थके प्रदर्शनके सामने उनकी सामाजिक और धार्मिक कर्त्तव्यकी चेतना लुप्त हो गई। फिर राजपूतोंने उन्हें धकेलना आरंभ किया, और थोड़े ही कालमें भारतकी सीमासे बाहर कर दिया।

●

पीले हाथ

जसलमेर राजस्थानकी मरुभूमिका हृदय है। हृदयसे जिस प्रकार रक्तकी नाड़ियोंकी ओर लहू दौड़ता है उसी तरहसे जैसलमेर राज्यकी कथाएँ सारे राजस्थानको अनुप्राणित करती रहती हैं। उन्हीं कथाओंमें से यह एक राजस्थानी लड़कीके पीले हाथोंकी कथा है।

विक्रम संवत् १४६२ की बात है, मोहिलोंके प्रदेशमें औरींतके निकटसे एक बड़ा काफ़िला गुजर रहा था। यह काफ़िला भाटियोंके सरदार सादूका था। सादू पूगलके शासकका उत्तराधिकारी था। चैनसे बैठना उसे आता नहीं था। वह कुछ दिनों घर बैठता था केवल घायल साथियोंके घाव सुखानेके लिए और बाक़ी बचे हुओंके बदन माँजनेके लिए। फिर सिंधुकी घाटीसे नागौरके पूरबतक एक बड़ा हमला होता था। खेत उसका इतना ही लंबा-चौड़ा था। निशाना कोई भी हो सकता था, इससे उसे कुछ भी लेना-देना नहीं था। इसी प्रकारके एक हमलेसे बहुतसे ऊँट और घोड़ोंको हथियाकर वह वापस लौट रहा था, औरींतके निकटसे। साथमें थे चार छोटे भाई, पाहू कबीलेका वीर सरदार जयतुंग, और सात सौ भाटी जवान।

सामने मरुभूमिकी बालू थी। सब पसीने-पसीने हो रहे थे और ऊपरसे सूरजकी किरणें उड़ती हुई बालूके साथ बदनमें चिनचिनाहट पैदा कर रही थीं। विश्रामके नाम पर रेतमें एक दूसरेसे दूर-दूर कहीं नीम, कहीं खेजड़ी, कहीं कीकर और कहीं काँटेदार खैरके वृक्ष दिखाई देते थे। औरींत अभी दो कोस था।

जयतुंग अपनी ऊँटनी हाँककर आगे सरदार सादूके पास ले आया।

"भला, कुँवरजी, अपना तो मन चाहता है यहीं सूर्य देवताकी किरणोंके नीचे पट लेटकर विश्राम किया जाय। ऊँट खैरके पत्ते खा लेंगे

और बलबला लेंगे और आप किसी नीमके नीचे बैठकर रामनाम लीजिए। अपनी चिन्ता हम आप कर लेंगे।"

"औरींत दो ही कोस तो रह गया है।" सरदारने कहा। "दीवड़ी[1] पानी से भरी जा सकती है वहाँ और सोगरा[2] सेंकनेका भी बंदोबस्त हो ही जायगा। थोड़ा और चलो, राजा। औरींत अब आया।"

औरींतके आनेसे पहले एक और छोटी-सी घटना घटी। एक कोस और आगे बढ़नेपर एक कीकरके नीचे ठंडे सोगरापर लाल मिर्चकी चटनी फैलाता हुआ एक चरवाहा मिला। उसने जो ऊँटोंकी बलबलाहट सुनी, तो आँखोंपर हाथ रखकर एकदम खड़ा हो गया। फिर जब तक कारवाँ उसके पास ही न आ गया, सोगरा और लाल मिर्च उसके हाथ पर ही रखे रहे। सबसे आगे सरदार सादू था। कीकरकी हल्की छिटकती छायासे बाहर निकलकर चरवाहा आगे वाले ऊँटके पास आया और दायें हाथसे सूरजकी किरणोंको बचाते हुए उसने मुँह ऊपर उठाकर पूछा :

"किधरसे आते हो?"

"इधरसे ही आते हैं,जिधरसे देख रहे हो",सादूने हँसकर उत्तर दिया।

बिना उत्तरपर भली प्रकार विचार किये ही प्रश्नकर्ताने दूसरा प्रश्न किया, "कहाँ जाओगे?"

"जहाँ ठौर मिलेगी अभी तो वहीं जाएँगे।" अपने लंबे रेगिस्तानी जीवनमें सरदार सादूने ऐसे बहुत-से प्रश्नकर्त्ताओंको उत्तर दे-देकर इस घिसीपिटी प्रश्नोत्तरीका व्यावहारिक ढंग सीख लिया था।

"कौन लोग हो?" प्रश्नकर्त्ताने बिना संकोचके तीसरा प्रश्न पूछा।

जयतुंग साथ लगा हुआ था। उसने दहाड़कर कहा, "हट जा,राह छोड़ दे! हम लोग भाटी हैं। भूखसे प्राण निकल रहे हैं। ज्यादा चींचपर करेगा, तो कच्चा चबा जाएँगें।"

---

१. पानीका एक राजस्थानी पात्र।

२. मिरचीके साथ खाई जानेवाली मोटी रोटी।

उत्तर सुनकर चरवाहा कुछ क्षण ठिठका और आँखें फाड़कर सादू और जयतुंगको देखता रहा। फिर अलग हटकर उसने जल्दी-जल्दी अपना सोगरा सिर पर ओढ़े दुपट्टेके छोरमें बाँधा और पलटकर सीधा एक चरती हुई ऊँटनीकी तरफ़ भागा चला गया। फिर ऊँटनीको पकड़कर वह जाने किस तरह उछलकर खड़ी ऊँटनीकी नंगी पीठपर चढ़ गया और उसकी ऊँटनी औरींतकी तरफ़ तेजीसे दौड़ पड़ी।

सादू खिलखिलाकर हँस पड़ा। "डर गया है बेचारा भाटियोंका नाम सुन कर।"

जयतुंगने भी इस हँसीमें योग दिया।

इसके बाद थके हुए ये राही एक कोस और चलनेके बाद हरियालीके समीप पहुँचे। सब लोग अपनी ऊँटनियों और घोड़ोंसे उतर पड़े। पास ही एक तालाब था। सरदार सादू जयतुंगको साथ लिये तालाबकी ओर बढ़ा।

तालाबके किनारे वही चरवाहा खड़ा मिला। उसने दूरसे ही हाथके इशारेसे अपने पास खड़े दो मनुष्योंको इन्हें दिखाया। वे लोग इनके अपने पास पहुँचनेकी प्रतीक्षा न करके स्वयं इस तरफ़ बढ़े। सरदार सादूके पास आ जाने पर उन दोनोंने झुककर जुहार की। उन्हें इस तरह झुकते देखकर वह चरवाहा भी हड़बड़ाकर झुका।

"आप भाटियोंके सरदार कुँवर सादूसिंह हैं?" उनमेंसे एकने पूछा।

"हाँ, हैं," जयतुंगने उत्तर दिया। "फिर?"

"हमारा अहोभाग्य, कुँवरजी," जयतुंगकी तरफ़ झुकते हुए उस व्यक्तिने कहा। "मोहिलोंके सरदारने संदेश देकर भेजा है। कहलाया है कि औरींतके निकट आनेपर इस तरह बचकर न निकल सकोगे। हमारी आवभगत लेनी पड़ेगी। न ली तो हम भाटियोंको आगे नहीं बढ़ने देंगे।"

"यह लीजिए, ज़बरदस्तीकी मेहमानदारी और ऊपरसे धौंस!"

जयतुंगने कहा। "अरे, पहले हमें हाँ या ना तो करने दी ही होती। भाटिये मोहिलोंकी अकड़ सहने वाले नहीं हैं।"

सरदार सादूने कहा, "अच्छा, अच्छा, जाओ रावजीसे कहना कि सात सौ भूखे-प्यासे जवानोंके लिए भोजन और विश्राम, और दो हज़ार पशुओंके लिए चारे-पानीका प्रबन्ध करें—और जब तक चाहें, तब तक करते रहें। यहाँ अब आगे बढ़नेका विचार नहीं है।" फिर जयतुंग की ओर देखकर समर्थन पानेके लिए सरदारने पूछा, "क्यों, राजा साहब?"

"आपके विचार बहुत सुन्दर हैं, कुँवरजी," जयतुंगने उत्तर दिया।

चरवाहा नृत्यकी मुद्रामें एक घुमाव लेकर बोला, "मैं मोहिलोंके सरदारकी ऊँटनियाँ चराता हूँ। मेरा नाम फूलसिंह है। सरदारके मेहमान सो मेरे मेहमान। एक अरज मेरी है—मानो चाहे न मानो—एक भाटी मेरे यहाँ ठहरेगा।"

कुँवरजी राजस्थानमें किसी भी भले आदमीको कहा जा सकता है। राजा साहब एक ही होते हैं। लेकिन यहाँ अधिकारभरी बातें तो कर रहे थे कुँवरजी, और समर्थन मिल रहा था राजा साहबकी तरफ़से। संदेशवाहकोंने अचकचाकर चरवाहे फूलसिंहकी बातको पीछे डालकर पूछा, "क़सूर माफ़ हो, सरकार। पर आपमें से सरदार सादूसिंह कौन हैं इसका पता नहीं चला।"

घर छोड़कर बाहर घूमनेवालोंमें जो एक प्रकारकी विशेष आवारगी आ जाती है, सरदार सादूमें उसका अभाव नहीं था। इस आवारगीमें मसखरीका अपना एक विशेष स्थान होता है। जब किसीको मसखरी सूझती है, तो वह बड़े-छोटेका लिहाज़ भूल जाता है। सरदार सादूने भौंह चढ़ाकर मुसकराते हुए, जयतुंगकी ओर उँगलीका निर्देश करके कहा, "और कौन हो सकता है? डीलडौलसे भी क्या तुम लोगोंको कुछ पता नहीं चलता?"

जयतुंग अपना उभरा हुआ डीलडौल छिपानेकी इच्छा नहीं रखता था। सीना तानकर उसने कहा, "हाँ, हाथी हम हैं, ये तो बस शेर ही शेर है।"

फूलसिंह चरवाहेने झटसे शेरका पंजा पकड़ लिया। "कुँवरजी, अब न छोड़ूँगा। दो हज़ार पशु और छः सौ निन्नानबे भाटी जवान रहेंगे सरदारके मेहमान और इकले तुम रहियो हमारे मेहमान। ना कही, तो अपना सिर यहीं फोड़ कर परम धाम पहुँच जाऊँगा। कही बात पुरानी, अब न छोड़ूँगा।"

हाथ छुड़ानेकी चेष्टा न करके सरदार सादू मुसकराते ही रहे, लेकिन जयतुंगने अपने डीलडौलपर किये गये व्यंगका पूरा-पूरा बदला चुकाते हुए कहा, "हाँ हाँ, छोड़ना मत कुँवरजीको। हमारी तरफ़से छूट है। वाह रे, मोहिलोंकी मेहमानदारी! हम अपने चारणसे मोहिलोंके आतिथ्य सत्कारपर गीत लिखवाएँगे।"

जिस बातके कारण जातिका मान ऊँचा हो रहा हो उसे तो अब छोड़नेका कुछ प्रश्न ही नहीं रह गया था। चरवाहेने सरदारका हाथ और भी कसकर पकड़ लिया। सिर झुकाकर संदेशवाहक चलने लगे, तो सरदार सादूने जयतुंगको लक्ष्य करके कहा, "अच्छा, राजा साहब! तुम्हारी यही इच्छा है, तो यही सही। हम फूलसिंहके मेहमान और फूलसिंह हमारा मेज़बान। चलो जी, फूलसिंह, तनिक हम अपने साथियोंको ख़बर देते चलें कि हम तुम्हारे यहाँ ठहर रहे हैं। फिर चलेंगे।"

कुँवरजीका हाथ पकड़े चरवाहा आगे-आगे और राजा साहब पीछे-पीछे अपने-अपने आरामके सामान जुटाते सारे भाटियोंमें घूम आये। कुँवरजी सबसे कहते चले कि वह शांति प्राप्त करनेके लिए फूलसिंह चरवाहेका आतिथ्य-स्वीकार कर रहे हैं। किसीके हाथसे पानीकी भरी दीवड़ी छूट पड़ी, तो कोई योंही हक्का-बक्का बना खड़ा रह गया। लेकिन सरदारकी मुख-मुद्रा देखकर किसीने उसे सरदारके नामसे संबोधन नहीं किया।

इस छोटेसे परिवर्तनके साथ भाटिये मोहिलोंके मेहमान हो गये। सरदारकी खाली जगहको जयतुंगने पूरा किया। मोहिलोंका वृद्ध सरदार

इतने लंबे-तड़ंगे, मोटे-ताजे जवानको भाटियोंका सरदार न समझता, तो और क्या समझता ?

× × ×

चरवाहा बड़ा जीदार जीव था। एक भाटीको अपना अतिथि बना लेनेकी प्रसन्नतामें वह उसका हाथ पकड़े-पकड़े अपने घर तक तो चुपचाप ले आया। लेकिन गरम पानीसे कुँवरजीके हाथ-पैर धुलानेके बाद उसका मुखर स्वभाव अपना रंग दिखाने लगा। चुप रहना उसके लिए भारी जोखिमका काम था। हृदय फट पड़नेकी संभावना बनी रहती थी। इसलिए वह कभी खतरा मोल नहीं लेता था। जब कोई पास होता, तो उसे फूलसिंहके सांसारिक ज्ञानकी बातें सुननेके अलावा और कोई चारा ही नहीं था।

"कहनेको तो ऊँटनियाँ चराता हूँ," मट्ठेका कटोरा कुँवरके सामने रखते हुए फूलसिंहने कहा, "पर बिना मुझे बताये सरदार भी कहीं आ-जा नहीं सकते। मैं चाहूँ, तो दो घड़ीके लिए सरदारका आना-जाना भी रोक दूँ।"

"अच्छा !" कुँवरको आश्चर्य हुआ। "इतना रोब मानते हैं सरदार तुम्हारा ?"

"मानना कौन चाहता है ? मनवाता हूँ," फूलसिंहने कहा।

"कैसे मनवाते हो ?" कुँवरने पूछा।

"सरदारकी खास ऊँटनी मैं चराता हूँ। सरदार कहीं जाते हैं, तो पहले मुझसे पूछते हैं कि ऊँटनीकी तबियत तो ठीक है। मैं जब हाँ कर देता हूँ, तब सरदारको सवारी मिलती है," फूलसिंहने कहा।

"ओह ! तो यह है तुम्हारी शक्तिका रहस्य," कुँवरने हँसकर कहा।

फूलसिंहने इस व्यंग पर कोई ध्यान नहीं दिया। मोहिलोंके राज-परिवारका आतिथ्य छोड़कर जिस व्यक्तिने चरवाहेका सत्कार ग्रहण किया था, उसे यह जाननेकी नितान्त आवश्यकता थी कि ऐसा करके उसने कोई ग़लती तो नहीं की। इसके लिए फूलसिंहकी शक्तिका पूरे प्रकाशमें आना आवश्यक था।

"राजपरिवारमें सबसे ज़्यादा भरोसा मुझपर किया जाता है," फूलसिंहने उसी धारामें दूसरा रहस्य प्रकट करते हुए कहा।

"तुम्हारे बिना महल झाड़ूबुहारी बिना पड़ा रहता होगा," कुँवरने व्यंग किया और फूलसिंहकी तरफ़ हँसकर देखा।

लेकिन झाड़ूबुहारी देना फूलसिंहके लिए कोई अपमानकी बात नहीं थी। इसलिए व्यंगका भाव ग्रहण न करते हुए वह बोला, "नहीं। कुँवरीकी इच्छा जब महलसे बाहरकी हवा खानेकी होती है, तो मैं साँड़नी पर बैठा कर उन्हें घुमा कर लाता हूँ। यह तो तुम मानोगे, कुँवरजी, है भरोसेका काम ?"

कुँवरजी उठंग गये।"तुम्हारा रुतबा बड़ा है !"

फूलसिंहका अदम्य उत्साह बढ़ा। "रुतबेकी बात कहते हो, कुँवरजी। कस्तूरीके हिरनसे कम हैसियत मेरी नहीं होती, जब कोरमदेवी मेरे ऊँट पर होती हैं और नकेल पकड़े मैं संध्या समय दो कोस हरियाली पर दौड़ता हूँ। सचमुच देवी है। एक बार पत्थरको आँख भरकर देख ले, तो पत्थर पानी हो जाय। गुस्सा इतना कि खुद सरदार साहब घबराते हैं ! पर आज तक मुझे अ से ब नहीं कहा।"

"तो तुम्हारी कुँवरी बहुत सुन्दर हैं !" अतिथिने मेज़बानके कथनका सारांश बता कर उसकी बात ध्यानसे सुननेका प्रमाण दिया।

"बस, कुँवरजी, सुन्दर कहकर तो तुमने सारी बात खो दी। पूनमका चाँद देखा है कभी ? तुम तो खैर रोज़ खुले आसमानके नीचे अपने सरदार के साथ रहते हो। समझ लो कि हमारी कुँवरीको नहीं देखा, तो तुमने पूनमका चाँद नहीं देखा !"

भाटी सरदारकी उत्सुकता जागी। "जब तक भाटी यहाँ रहेंगे तुम्हारी कुँवरी घूमने नहीं निकल सकती। फिर कैसे देखेंगे हम ?"

"सो तो है," फूलसिंहने कहा। "और जबसे कुँवरीकी मंगनी हुई है, तबसे तो वह कभी महलसे बाहर निकली ही नहीं।"

"उठँगा हुआ भाटी सरदार फिरसे तकिये पर पसर गया, उठती हुई आग पर जैसे पानी पड़ गया हो। लेकिन तब तक फूलसिंह तरकीब सोच चुका था।

वह उछलकर बोला, "तुम्हें पता नहीं, मोहिलोंमें भाटियोंकी बहादुरीका कितना मान है। भाटियोंकी जीदारीकी कितनी ही कहानियाँ मैंने खुद कुँवरीको घुमाते-फिराते सुनाई हैं। कुँवरीने उनमें बड़ा रस लिया था। एक दिन कहती थी कि सादू सरदारके ताज़े-से-ताज़े पराक्रम मैं बटोरकर लाऊँ, तो वह मुझे बहुत-सा इनाम देगी।"

"सच ? "कुँवरजी फिर उठँग गये।

"और क्या झूठ ? " फूलसिंह अपने अतिथिको प्रसन्न देखकर हर्षित होकर बोला। "तुम तो सरदारके साथ सदा रहते ही हो। सादू सरदारकी कहानियाँ तुमसे अच्छी और कौन सुना सकता है ?"

निश्चय ही और कौन सुना सकता था ! कुँवरजी खिल पड़े। किन्तु तुरंत ही फिर उनके मुखपर मुरदनी छा गई। "भला, यह तुम्हारी कुँवरी की मंगनी हुई कहाँसे है ?"

"राजाओंकी लड़की राजाओंके घर। सरदारने अपनेसे भी बड़ा घर ढूँढ़ा है। मंदौरके राठौरोंका नाम सुना है ? राठौरोंके राजाका बेटा है। राजाके मरनेके बाद गद्दी उसे ही मिलेगी। हमारी कुँवरी राजरानी बनेगी। दस हज़ार राठौर जवान हर वक़्त हाथ बाँधे कुँवरीकी सेवामें खड़े रहेंगे," कल्पनामें मग्न होते हुए फूलसिंह बोला।

"नहीं।"सादू सरदारने कहा। "ऐसी मूर्खताएँ राठौरोंमें नहीं होतीं। राठौर सैनिकोंको हाथ बांधे सेवामें खड़े रहनेके अतिरिक्त और भी बहुत-से ज़रूरी काम करनेको रहते हैं। वीरतामें भाटियों और राठौरोंमें बराबरका जोड़ है। लेकिन राठौरोंका दल बहुत बड़ा है....।"

किस प्रकार अनजानेमें ही भाटी सरदार राठौरोंकी वीरताकी प्रशंसा करता-कराता उनकी और भाटियोंकी शक्तिकी तुलना करने लगा था यह देखकर फूलसिंह बीच ही में बोल उठा।

"दल तो उनका इतना बड़ा है कि सारे मरु देशपर छा कर रह जाए।"

भाटी सरदारने कहा, "छोड़ो इस चर्चा को । तब फिर, कल कुँवरीको सादू सरदारकी वीरगाथा सुनानेकी बात तय रही ।"

फूलसिंहने समर्थनमें सिर हिलाया । फिर वह अपने मनचाहे मेहमान के लिए शीत-रावड़ीका प्रबंध करनेके लिए उठ गया । यह भोजन ऐसा था, जिसका इंतज़ाम दो दिन पूर्व करना होता है । दो दिन पहले इतना बड़ा सौभाग्य मिलनेकी ख़बर नहीं थी । इसलिए पड़ोसियोंकी सहायताकी आवश्यकता फूलसिंहको अनुभव हो रही थी ।

× × ×

किसी बड़े कामका फल मिल जाना उस कामका सीधा परिणाम होता है । मनुष्य कभी सोचता भी नहीं कि वह उस बड़े कामके मार्गमें बढ़ता हुआ किसीकी दृष्टि भी अपनी ओर आकर्षित कर रहा है । फिर जब एक दिन यकायक वह उस प्रशंसाकी दृष्टिको अनुभव करता है, तब उसी कामका मूल्य स्वयं उसीकी दृष्टिमें कितना बढ़ जाता है, दंभ और संतोषका कितना बड़ा ख़जाना उसे अनायास मिल जाता है, यह वही जान सकता है, जिसने भाटी सरदारकी तरह अपनी जानको रोज़-रोज़ हथेलियों पर रखकर अपने कारनामोंका इतिहास बनाया हो । अब सरदार सादूके मस्तिष्कमें वे पिछली रोमांचपूर्ण घड़ियां ंगबिरंगी तूलिकासे चित्रित चित्रोंकी तरह घूमने लगीं ।

उस सारे दिन सरदार सादू अपने जीवनकी बिखरी हुई घटनाओंमेंसे सबसे अधिक पराक्रमसे पूर्ण घटनाओंको छाँटनेमें व्यस्त रहा । कोई बहुत सुन्दर राजपूत कन्या इन घटनाओंको सुनकर उनके नायकके प्रति दो प्रशंसा के शब्द कह देगी, इस छोटी सी महत्त्वहीन संभावनासे प्रेरित होकर ही सरदार सादूका मन उछला जा रहा था ।

अगले दिन भाटी सरदारने अपने सैनिकोंके प्रयोगमें आनेवाला एक नया पग्गड़ बाँधा । लाल रेशमी अंगरखा और चूड़ीदार पाजामा पहना । कमरपेटीमें लंबी तलवार लटका कर वह फूलसिंहसे बोला, "चलो ।"

फूलसिंह इससे पहले ही अपनी छोटीमोटी तैयारी कर चुका था । शान-से अकड़ता हुआ वह औरींतके बाज़ारोंमेंसे होता हुआ मोहिलोंके रनिवासकी

ओर चला। फूलसिंह के निकट आज फूलसिंहसे अधिक सौभाग्यवान कोई साँडनी चरानेवाला सारे राजस्थानमें नहीं था। उसके साथ राजस्थानके आतंक, पूगलके निवासी, सरदार सादूका एक वीर सैनिक था!

ड्योढ़ीपर खड़े सेवकसे फूलसिंहने कहा, "कुँवरीजीसे कह दे जाकर। हम अपने भाटी मेहमानके साथ उनकी सेवामें आये हैं।"

मुसकराकर सेवक चलनेको हुआ, तो सामनेसे आते एक युवकको देखकर उसने कहा, "लो, कुँवर मेवराजजी आते हैं। अब उन्हींके साथ भीतर चले जाना।"

सरदार सादूने घूमकर देखा। जिस युवककी ओर संकेत किया गया था, उसका रंग गेहुँआ था। बदन चुस्त और हल्का, और नाकनक्श साँचेमें ढले हुए थे। कमरपेटीमें छोटा नेज़ा था। पास आकर उसने पहले अतिथि को आँखोंमें निकाला, फिर फूलसिंहकी ओर एक क्षण देखकर सरदारसे पूछा :

"भाटी हो?"

"हाँ।"

मेवराज गले मिलनेके लिए आगे बढ़ा। सादू सरदारने उसे गलेसे लगा लिया। लेकिन उसकी कमरमें भाटी सरदारके मजबूत हाथ एक बार लिपट जानेपर छूटनेका नाम ही नहीं ले रहे थे। मेघराजका उत्साह जब समाप्त हो गया, तो उसने कहा, "अब छोड़ो!"

"अभी नहीं", सरदारने कहा। "पहले वचन दो कि यह भाईचारा सदा बना रहेगा।"

मेवराजने ज़ोर आज़मानेकी कोशिश की, किंतु उसकी हड्डियाँ चरमरा गईं। हारकर उसने कहा, "अच्छा, बना रहेगा। अब छोड़ो। तुम ाटियों में यह बहुत बुरी आदत है। एक वह तुम्हारे सरदार हैं। एक बार हाथ पकड़कर छोड़ते ही नहीं।"

उसे छोड़कर सरदार सादूने अपना साफ़ा उतार लिया । "पगड़ी बदल लो, क्या पता फिर भूल जाओ । तुम्हारे कहनेसे तो पता चलता है कि तुम लोगोंमें हाथ पकड़कर छोड़ देनेकी अच्छी आदत है !"

मेघराजने पगड़ी बदलते हुए कहा, "तुम तो बड़े मज़ेके आदमी मालूम होते हो । यह फूलसिंह तुम्हें इधर कैसे पकड़ लाया ?"

फूलसिंहने कहा, "यह कुँवरीजीको सरदार सादूकी वीरगाथा सुनाएँगे । उन्होंने मुझसे कह रखा था ।"

"सरदार सादूकी वीरगाथा ! मैं भी सुनूँगा । वह तो मरुदेशका नाहर है," मेघराज प्रसन्न होता हुआ बोला । "चलो, मैं भी चलता हूँ ।"

तीनों व्यक्ति मोहिलोंकी सबसे ऊँची और विस्तृत हवेली—जिसे महल कठिनाईसे ही कहा जा सकता था—की भूलभुलैयामें से होते हुए कोरमदेवीके निजी वास तक पहुँचे ।

मेघराजने स्वयं बहनको सूचना दी । अपने प्रिय नायकका शौर्य-वृत्तान्त सुननेके लिए कोरमदेवी अधीर हो गई । तुरंत कक्षमें चिकका प्रबंध कराकर उसके पीछेसे कोरमदेवीने आगंतुकोंको देखा । चरवाहेने परिचया-त्मक स्वरमें कहा ।

"कुँवरीजी, साक्षात् कथावाचकको पकड़ लाया हूँ । जो कुछ आपको ये सुना देंगे और कहीं सुननेको नहीं मिलेगा । खास सादू सरदारके दाहिने हाथ हैं । न हो पूछ देखिए..."

"क्या नाम है इनका ?" कोरमदेवीका सरल व कोमल स्वर चिकके पीछेसे सुनाई पड़ा ।

फूलसिंह वहीं कालीनपर बैठ गया । कुँवरजीने उत्तरमें कहा, "मेरा नाम जयतुंग है । पाहू, जातिका छोटा-सा नायक हूँ । बहुत दिनोंसे आपके दर्शनोंकी इच्छा थी । आज अवसर मिला, तो छोड़ नहीं सका ।"

"मैं भाटियोंकी वीरताका सम्मान करती हूँ," कोरमदेवीने कहा । "उनकी वीरगाथाओंको मैं बड़े चावसे सुनती हूँ । पर खेद है तुम्हारे सामने

नहीं आ सकूँगी। इससे तुम्हें अपना अपमान नहीं समझना चाहिए। तुम्हारी कथाको सुननेके लिए मेरे साथ इस समय सारे राजमहलका नारी-समाज एकत्र है।"

भाटी सरदार मेघराजके पास एक ऊँचे आसनपर बैठ गया। फिर वह बोला, "भाटी सरदारको आपने देख लिया है, देवी?"

"हाँ, वह महलमें भोजन कर गये हैं। जैसा उनका डीलडौल है, उसीसे ऐसी घटनाएँ घटनी संभव हो सकती हैं। तुम अब सुनाओ, देरी न करो।"

"भाटी सरदारका सारा जीवन आवारगीमें बीता है, देवी। उनके साथ जो रोमांचपूर्ण घटनाएँ घटी हैं उनमें बहुत-सी सुखान्त हैं, तो बहुत-सी दुःखान्त भी हैं। आप कैसी घटना सुनना चाहती हैं?" भाटी सरदारने प्रश्न किया।

इसपर एक निमिषके लिए सन्नाटा छा गया। मेघराज और फूलसिंह दोनोंने उत्सुकतासे सचेत होकर उस आवरणकी तरफ़ देखा, जिसमें से फ़र्माइश निकलनेवाली थी। कुछ देरमें कोरमदेवीका स्वर फिर सुनाई पड़ा।

"जब भाटी सरदार स्वयं जीवित हैं, तो कोई भी घटना इतनी अधिक दुःखान्त नहीं हो सकती कि सुनी न जाए। तुम कोई भी घटना सुना सकते हो।"

भाटी सरदारने एक क्षण सोचा। फिर वह बोला, "देवी, उन घटनाओं का अंत इसीलिए दुःखपूर्ण है कि भाटी सरदार स्वयं जीवित रह गये। यदि साथ-साथ उनका भी अंत हो जाता, तो वह दुःखपूर्ण अंत गौरव और गरिमासे ढँक जाता। मुझे भय है कि आपके साथ बैठा नारी-समाज उस दुःखसे पीड़ित होगा।"

कुछ देर चुप्पी छाई रही। फिर आदेश हुआ, "उस दुःखको झेलनेके लिए हम सब तत्पर हैं। तुम कहो।"

भाटी सरदारने कहा, "देवी, मैं आपका मनोरंजन करने आया हूँ। भगवान् जानता है कि मेरी भावना शुद्ध है। यदि मेरे मुँहसे निकले शब्दोंसे आपको कुछ पीड़ा पहुँचे, तो मैं उसकी आपसे क्षमा चाहता हूँ। इस संसारमें दु:ख और सुख दोनों हैं। जो दु:ख झेलना तो दूर रहा, दु:ख की बात सुनना भी नहीं चाहता, वह इस विविध रंग-रूपी संसारके आधे दर्शनसे वंचित रहता है। आपने इससे भय नहीं खाया इसके लिए आप मेरा आदर ग्रहण कीजिए। सबसे पहली बात जो मैं कहना चाहता हूँ वह यह है कि शायद मोहिलोंको पता नहीं, भाटी सरदारके साथ आये चार भाइयोंकी वधुएँ अपनी-अपनी सुहागरात देखनेसे पहले ही एक-एक करके स्वयं सरदारके हाथोंमें परलोकगामी हुई हैं।" कहकर सरदार रुक गया। यह रुकना उस अँधेरी चिकके पीछे बैठे नारी-समाजकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए था या स्वयंकी संजीनेके लिए, जानना कठिन ही होगा।

कोरमदेवीकी माँ पास ही बै ी थीं। उनकी आँखोंमें इतनेसे ही जल भर आया। पंक्तिबद्ध दासियाँ जैसे सन्न हो गईं। सूई भी गिरती, तो आवाज़ सुनाई दे जाती। और कोरमदेवी सोच रही थी कि यह कैसा कथा सुनाने वाला है, जो भूमिका-भूमिकामें ही स्तब्ध किये दे रहा है! उसने फिर कहा, "कहो!"

फूलसिंह मुँह ऊपर उठाकर सरदार सादूको देख रहा था, जैस उसके मुँहसे निकले एक-एक अक्षरको पी जाना चाहता हो। सादूने सामने उपस्थित केवल दो श्रोताओंपर एक निगाह डाली और कहना आरंभ किया :

'तुन्नो और मेहरा सरदार सादूसे छोटे ह। यह घटना तुन्नोको लेकर है। राठौराँके मंदौरके निकट, यहाँसे बहुत दूर, रेगिस्तानके पार शंखलाओं-का देश है। प्राणोंको तिनकेकी भाँति परित्याग कर देनेवाले इन शंखलाओं ने अपनी वीरताका एक इतिहास बनाया है। यह इतिहास उन्होंने अपने रक्तसे धरतीकी छाती पर लिखा है। महाराज शंखला इनके राजा और कुलगुरु हैं।

"सिंधुकी घाटीके निकट एक छोटेसे प्रदेशपर आक्रमण करते हुए, सरदार के कंधेसे कंधा भिड़ाकर तुन्नो लड़ रहा था। बहुत देरकी मेहनतके बाद जब तुन्नोने अपने मुक़ाबलेमें लड़ते हुए योद्धाको भूमि पर गिरा लिया, तो उससे पूछने लगा : 'मारूँ या छोड़ दूँ ?'

"उस वीरने कहा, 'मार दोगे, तो मुझे स्वर्ग मिलेगा। छोड़ दोगे, तो तुम्हें स्वर्ग दिला दूँगा—यहीं पर, इसी धरतीपर। शंखलाओंकी कुमारी का नाम सुना है कभी ? उसके साथ तुम्हारा गठबंधन करा दूँगा। वचन देता हूँ।'

"तुन्नोने शंखलाओंकी कुमारीका नाम उससे पहले कभी नहीं सुना था। फिर भी न जाने क्यों उस दिन तुन्नोने उसे छोड़ दिया। लड़ाई भी जीत ली गई। विजयका पुरस्कार समेट कर नाचते-कूदते भाटी अपने देश लौटने के लिए रेगिस्तान पर उतर पड़े। सब लोग खुश थे। सब के मन-मयूर नाच रहे थे। अनुमान था कि पंदरह दिनके भीतर रेगिस्तान पार कर लिया जायेगा, और फिर सरदार सादूको पहली बार पूरा रेगिस्तान पार करने वालेकी ख्याति मिलेगी।

"तीन दिनकी निर्विघ्न यात्राके बाद दूर आकाश पर कुछ मटमैला रंग दिखाई देने लगा। सरदारने चेतावनी दे दी : तूफ़ानका अंदेशा है ! मरु भूमिका तूफ़ान बवाल बनकर आता है। यदि तूफ़ान आया, तो हमारे छोटेसे काफ़िलेका क्या होगा ? कुछ पता नहीं था। शायद रेतके इस समुद्रमें इन रेंगते हुए छोटे-छोटे कीड़ोंका कुछ नामनिशान भी बाक़ी न रह जाय।

"लेकिन इससे पहले तो अभी बहुत कुछ हो चुकना था। दक्षिण दिशा से एक साँडनी-सवार तेज़ीसे अपनी साँडनी दौड़ाता हुआ आया। उसके पास आने पर पता चला कि यह वही वीर था, जिसे तुन्नोने छोड़ दिया था। उसने सरदारको जुहार दी और कहने लगा कि शंखलाओंकी कुमारी तुन्नोकी प्रतीक्षा कर रही है।

"सरदारने पूछा, 'शंखला महाराजकी लड़कीसे तुम्हारा क्या संबंध है? तुम वहाँ तक कैसे पहुँचते हो? उसने आज तक तुन्नोको कभी देखा भी नहीं है। वह उसकी प्रतीक्षा किस तरह कर सकती है?'

"उत्तरमें उस वीरने कहा, 'उसका मुझसे बहनापा है। विपदामें एक समय उसने मुझे राखी पहनाई थी। मैंने आज ही उसके सामने तुन्नोकी वीरताका बखान किया था। सुनकर वह मुग्ध हो गई है। शंखला महाराज ने उसका संबंध मंदौर राज्यके बड़े ठिकानेदा ोंमें कर रखा है। पर वह लड़की राठौरोंमें नहीं जाना चाहती।'

सरदारने पूछा, 'क्यों, राठौरोंमें क्या बुराई है?'

"इस पर मैंने कहा कि जब लड़की मिलनेकी बात चल रही हो, तो जिरह नहीं की जाती। हमारे लिए इतना ही जान लेना काफ़ी है कि शंखलाओंकी लड़की राठौरोंमें नहीं जाना चाहती। किसी विशेष जातिसे इतना भेद रखना हम लोगोंमें नया नहीं है।

"मेहरा महाराजने सम्मति दी कि इस आमंत्रणके पीछे छल भी हो सकता है। इस पर उस संदेशवाहक वीर पुरुषका मुँह तमतमा गया। फिर भी वह चुप रहा। लेकिन सरदारकी आपत्ति सबसे ज़्यादा ज़बरदस्त थी। ऊपरसे तूफ़ानके आसार नज़र आ रहे थे।

"अंतमें यह ठहरा कि तुन्नोके साथ सरदार सादू स्वयं, मैं और दस भाटिए जाएँगे। तुन्नोजी शंखला महाराजसे बातचीत करके मामलेको आहिस्तासे निबटानेकी चेष्टा करेंगे। नहीं तो मैं और सरदार कन्याको हरण करके भाग खड़े होंगे और तुन्नोजी और साथियोंके साथ बादमें कौशलसे निकल आएँगे।

"शंखला महाराज भाटियोंसे लड़ाई मोल नहीं लेना चाहते थे। इसलिए बिना गरम हुए ही उन्होंने प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। खबर हम तक पहुँच गई और हम उस हारे हुए वीरकी सहायतासे शंखला महाराजकी हवेलीसे लड़कीको निकाल लाये। रास्तेमें ही तुन्नोजी मिल गये, जो शंखला

महाराजसे समय पर बिदा ले चुके थे, और हम सब तेज़ीसे चल कर काफिले-में जा मिले। हमें सकुशल पहुँचा कर उस वीर साथीने हमसे बिदा ली और वह वापस लौट पड़ा।

"अभी थोड़ी ही दूर पहुँचे होंगे कि हमें पीछेसे रेतके गुब्बार उठते दिखायी दिये। स्पष्ट था कि शंखला महाराज अपने साथियोंको लेकर आक्रमण करनेके लिए आ रहे थे। सरदार सादूने दो सौ साथियोंके साथ मुझे पीछे छोड़ा और स्वयं तुन्नोजीके साथ आगे बढ़ गये। तय रहा कि सुरक्षित स्थान पर लड़कीको छिपा देने पर वह समस्त साथियों सहित मेरी सहायताके लिए वापस लौटेंगे।

"दो सौ साथियोंके साथ मैं जहाँ-का-तहाँ रुक गया। थोड़ी ही देर में शंखला महाराजकी छोटी-सी सेना दिखाई देने लगी। उन्होंने भी हमें देख लिया और अपने घोड़े तेज कर दिये। किंतु वे हम तक कभी नहीं पहुँच पाये।

"हवा मस्ताकर चलनी शुरू हुई और बालूके कण वायुमंडलमें व्याप्त होन लगे। धीरे-धीरे आसमान धुँधला होने लगा और दोनों ओरके दल एक दूसरेको दिखाई देने असंभव हो गये। मैं अपने साथियों सहित शंखला महाराजका स्वागत करनेके लिए आगे बढ़ा। एक बार वह और हम निकट आ भी गये और उन्होंने मुझे देख भी लिया, लेकिन उसके बाद फिर कभी मेरी भेंट शंखला महाराजसे नहीं हुई।

"तूफ़ान ज़ोर पकड़ रहा था और गरम बालू साँय-साँय बोलने लगी थी। हमने इस प्रकारके तूफ़ान रेगिस्तानी जीवनमें अनेकों बार देखे थे। हमने ऊँटोंपर से तहे हुए रस्से खोल दिये और थोड़ी ही देरमें दो सौ भाटी एक दूसरेके साथ रस्सोंसे बँध गये। अब यदि मृत्यु आती, तो एक साथ और जीवन मिलता, तो एक साथ।

"दुपट्टे खोलकर हमने आँखों पर पट्टी बाँधी और मुँहपर इकहरा कपड़ा लगाकर हम ऊँटोंको हाँक ले चले। एक स्थानपर ठहरनेमें ख़तरा था।

ठहरनेपर हम लोगोंके शरीरों पर बालूके टीले बन जाते और वहीं पर हम सबकी कब्र बन जाती। अन्दाज़से हम ठीक दिशामें चल रहे थे। किंतु फिर भी कहा नहीं जा सकता था कि हम सही-सही किस ओर बढ़े जा रहे थे।

"मालूम नहीं तूफ़ान कितनी देर चला। लेकिन जब रात आई तो वह थम चुका था और तारे आकाशपर निकल आये थे। हम लोगोंने कपड़े झाड़े और बदन पोंछे। दिशाका अनुमान किया। एक बार तो पता ही नहीं चला। लेकिन धीरे-धीरे तारोंकी अवस्था समझमें आ गई और हमने ठीक दिशा पकड़ी। हम उस सही दिशासे बीस कोस इधर-उधर हो गये थे।

"इस बीचमें सरदार पर जो बीती उसका तो बखान ही कठिन है। थोड़ा आगे बढ़ते ही उन्हें भी तूफ़ानने घेर लिया। हमारी तरह उन्होंने भी रस्सोंके सहारे काफ़िलेको बिछुड़ने नहीं दिया। लेकिन जिस प्रदेशमें वह थे वहाँ ज़मीनमें रेतके बड़े-बड़े गड्ढे थे। कभी कोई उन गड्ढोंमें धँस जाता कभी कोई। इस प्रकार सबको निकालते-छुड़ाते सरदार कुछ ही दूर आगे बढ़ पाये थे कि शंखलाओंकी वह कन्या रेतकी मारको सहन नहीं कर सकी। वह शीघ्र ही अचेतन हो गई और उसके नाक और मुँहसे खून निकलने लगा। सरदारने पानी मँगाया, लेकिन अफ़सोस! बालूकी खुश्की से घबरा-घबराकर सब लोग अपनी-अपनी दीवड़ी खाली कर चुके थे। स्वयं सरदारकी दीवड़ी तूफ़ानके हंगामेमें खोई जा चुकी थी।

"सरदारने कसकर लड़कीके मुँहमें कपड़ा ठूँस दिया। इससे संभव था कि खूनका आना बंद हो जाता या जहाँ का तहाँ रुक जाता। लेकिन खून नाकसे और अधिक मात्रामें बहने लगा और नाक बंद करना असंभव था। दिखाई कुछ दे नहीं रहा था। हमारे कई साथी रेतके नीचे दब चुके थे और उन्हें निकालनेके लिए खींचतान चल रही थी। सरदार, तुन्नोजी, मेहराजी और बाक़ी दोनों भाई एक दूसरेसे बहुत अलग थे, दूर थे।

"कुछ देर बाद लड़कीने सरदारकी कलाई कसकर पकड़ ली। उसकी पकड़से अनुभव होता था कि यह उसकी अंतिम शक्ति थी। और अंतमें

वह शक्तिशाली पकड़ ढीली पड़ गई। लड़कीका हाथ चेतनाहीन होकर नीचे लटकने लगा। वह मृत्युके असीम विश्रामकी शरणमें जा चुकी थी, जहाँ तूफ़ान नहीं था, शांति थी। उस सुन्दर कन्याने जीवनकी मधुरताका, यौवनकी मादकताका, मनकी चंचलताका एक भी क्षण अनुभव किये बिना मरुस्थलीके बालूको अपने प्राण भेंट कर दिये थे। उसे कुँआरी कहूँ, व्याही कहूँ या केवल वधू ही कहकर चुप हो जाऊँ, कुछ समझमें नहीं आता। केवल उसकी उस अंतिम पकड़का अनुभव आज भी कलाई पर रह-रहकर डंक मारता है।

"सही है कि सरदार सादूने सबसे पहले रेगिस्तानको पार करनेवाले की प्रसिद्धिका फल चखा है। किंतु उसके मनमें उस यात्राकी जो स्मृतियाँ एकत्र हैं वे उसे जीवन और मृत्युका अंतर समझनेमें बाधा दे रही हैं। सरदार आज जीवित ही मृत हैं। वह लड़ते हैं, तो जीवनका मोह छोड़कर और जीते हैं, तो सौ-सौ बार मर कर। न जाने कब उन्हें शांति और संतोषका स्वाद चखनेको मिलेगा!"

× × ×

कथावाचककी कथा समाप्त हो गई, फिर भी शांति और चुप्पीका एक अद्भुत वातावरण छा गया। कुछ देर तक वायु भी जैसे सुन्न हो गई। कहीं से किसी प्रकारकी ध्वनि, किसी प्रकारकी टिप्पणी, किसी प्रकारका स्वर सुनाई नहीं दे रहा था।

फिर मेघराजका नीचे झुका हुआ मस्तक ऊपर उठा। "कुँवरजी, कुछ और सुनाइए। आपने तो मन कड़वा कर दिया।"

सरदार सादू एक फीकी हँसी हँस कर बोला, "नहीं, कुँवर साहब, अब तो कुछ कहा नहीं जायगा। जितना कहा है उससे कहीं ज़्यादा आँखोंके आगे नाच गया है। जब आपका सुनने मात्रसे ही मन कड़वा हो गया, तो मुझ पर तो न जाने क्या बीत रहा होगा। अभी तो सरदार ठहरेंगे, कल फिर सुनाऊँगा।"

फिर सरदार सादूने चिककी ओर किसी प्रकारका निर्देश सुननेकी भावनासे देखा। कोरमदेवीने कहा, "आपकी बात सुनकर तो यही नहीं लगता कि आप पाहू जातिके नायक हैं।"

सरदारने घबराकर आँखें चौड़ी कीं कि कोरमदेवीने आगे कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि राजपूतानेका कोई कथावाचक अपना कौशल दिखा रहा है। क्या सचमुच ऐसा हुआ था ?"

सरदार सादू अपने आसनसे उठकर कक्षके बीचमें आ खड़ा हुआ। उसने अपने अँगरखेके भीतरसे कुछ पीली चूड़ियाँ निकालकर कहा, "देवी, मनुष्यकी भावनाओंके संघर्षसे मानव जीवनमें जो करुणा उत्पन्न होती है, उससे उसका आगे बढ़नेका उत्साह गिर जाता है। फिर भी करुणा तो मानव जीवनमें है और उसकी क़तई उपेक्षा भी नहीं की जा सकती। उसके दर्शन और अनुभव न करनेवाला मनुष्य प्रसन्नता और उत्साहकी भावनाओंको भी पूर्णरूपसे अनुभव नहीं कर पाता। करुणाको देखो, सुनो, देवी, फिर उसे झूठ समझ लो, तो भी मनुष्यका मन बहल जाता है। इसे झूठ समझकर यदि आप सब लोग स्वस्थ हो सकें, तो इसे झूठ ही समझें।" तब और आगे बढ़कर उसने अपने शब्दोंकी रवानीमें ही बहते हुए कहा, "क्या इस झूठी कथाके नायककी ओरसे मैं देवीके हाथोंमें यह छोटा-सा उपहार पहना सकता हूँ ?"

कोरमदेवीने चिकके पीछेसे ही चूड़ियोंको अपनी ओर बढ़ते हुए देख लिया। प्रयोग-ग्रस्त व्यक्तिकी तरह उसके हाथ चिकसे बाहर निकल आये और सरदार सादू उनमें चूड़ियाँ पहनानेके लिए आगे बढ़ा। किंतु हाथोंको देखकर वह जहाँ-का-तहाँ स्तब्ध खड़ा रह गया।

लाल मेंहदीसे रंजित करतलोंको थामे जैसे दो कमल-डंडियाँ पानीकी तरह लहराती हुई नीले रंगकी चिकसे बाहर निकल आई हों।

कुछ क्षणों उन हाथोंको देखकर सरदार चौंका और उसने उन चूड़ियोंको उन हाथोंमें पहना दिया, जिनका आकार उसके मन पर सदा-सदाके

लिए अंकित होकर रह गया था। कोरमदेवीके हाथ भीतर खींच लेने पर ही उसका स्वप्न भंग हुआ।

जब खड़े रहना असंभव ही हो गया, तो सरदारने पूछा, "अनुमति हो, तो अब जाऊँ, देवी ?"

भीतरसे फिर वे ही हाथ बाहर निकले। इस बार वे खाली नहीं थे। एकमें एक नक़्क़ाशीदार ढाल थी और दूसरेमें एक कामदार म्यान सहित तलवार थी। कोरमदेवीने कहा, "पुरस्कारमें हम तुम्हें इससे अच्छा और क्या उपहार दे सकते हैं ?"

सरदार सादूने वह ले लिया। उसने तलवारको होठोंसे लगाकर चूमा। फिर उन सुन्दर हाथोंको अपने सामनेसे लुप्त होते देखकर वह लौट पड़ा। एक लंबी साँस खींचकर वह मेवराजसे बोला, "चलिए, कुँवर जी।"

दोनों कुँवर कक्षसे बाहर निकल गये, किंतु फूलसिंह वहीं बैठा रह गया। उसका पुरस्कार शेष था और बिना उसे लिये उसका वहाँसे टलना असंभव था।

विस्तृत दहलीज़के चौकमें आकर कुँवर मेघराजकी चुप्पी टूटी। "कुँवरजी, वह तलवार तो दिखाओ, जो तुम्हें मिली है।"

आश्चर्य प्रकट करते हुए सरदार सादूने म्यान सहित तलवार निकालते हुए पूछा, "क्यों ? क्या यह अच्छा पुरस्कार नहीं है ?" और उसने म्यान उसके हाथोंमें दे दी।

मेघराजने तलवार म्यानसे खींचकर एकदम सरदार सादूकी छातीसे लगा दी। फिर सामने होते हुए उसने उसकी आँखोंमें आँखें डालकर कहा, "तुम जयतुंग नहीं हो, कुँवर। बताओ तुम कौन हो ?"

सादूके शरीरमें सनसनी दौड़ गई। कठिनाईसे स्थिर-चित्त होकर उसने कहा, "कौन हूँ ? तुम्हारा क्या अनुमान है ?"

"तुम स्वयं सरदार सादू हो," मेघराजने कहा। "मुझे तुम्हारा एक-

एक शब्द याद है। 'उस अंतिम पकड़का अनुभव आज भी कलाईपर रह-रहकर डंक मारता है।' इसका क्या मतलब है? क्या उस मरनेवाली लड़कीने सब भाटियोंको अपनी मृत्युके समय वह अनुभव कराया था?"

"यदि मैं स्वयं सरदार सादू हूँ, तो तुम क्या करोगे?" सरदारने पूछा।

"मैं तुम्हारे अपराधका दंड दूँगा। तुमने छद्म वेषमें मोहिलोंकी हवेली के भीतरी भागको देखा है। इससे तुम्हारा क्या अर्थ है?"

"ठीक है,' सरदारने कहा। "क्या दंड दोगे?"

"तुम्हें मेरे साथ द्वंद्व युद्ध करना पड़ेगा," मेघराजने तीव्र स्वरमें कहा।

"फिर तो न्यायाधीशका पद तुम्हारे लिए बहुत महँगा पड़ेगा।'

"अपराधीको दंड मिल जानेपर वह महँगा नहीं रहेगा," कुँवर मेघराज की आँखोंमें एक क्षणके लिए चमक कौंध गई।

"किंतु अपराधीको दंड कभी नहीं मिल सकेगा," सरदार सादूने कहा। "बचपनसे लेकर मैंने आज तक केवल तलवार चलाना ही सीखा है। इस लगातार अभ्याससे जो कौशल मेरे हाथमें आ गया है उससे तुम जीत नहीं सकोगे। अपमान अनुभव न करना। अभ्यासके सामने बड़े-बड़े गिर जाते हैं।"

"मुझे चिंता नहीं," कुँवर मेघराजने कहा। "अन्यायको हरा देना या स्वयं उसके सामनेसे लोप हो जाना दोनों एक ही बात है। एक राजपूत अन्यायके सामनेसे केवल मरकर ही लोप हो सकता है। तुम अपनी तलवार निकाल लो। निर्णय अभी हो जायेगा।"

सरदार सादू मुँह ऊपरकर ठट्ठा मारकर हँस पड़ा। चिढ़कर कुँवर मेघराजने उसकी छातीमें तलवार चुभाई। सादूने शांत होकर कहा, "भला, कुँवर साहब, यह तो सच ही तुम लोगोंमें हाथ पकड़कर छोड़ देनेकी बड़ी बढ़िया आदत है! अभी तो तुम्हारी पगड़ीने मेरे सिरका पसीना भी नहीं सोखा है। पगड़ीको ऐसे उछालोगे, तो सिरकी पगड़ी और पैरके जूते में क्या अंतर रह जायगा?"

क्षणमात्रमें कुँवर मेघराजका पारा पिघल गया। सादूकी छातीसे तलवार हटाकर उसने उसे म्यानमें छिपाते हुए कहा, "सादू सरदार, तुमने मेरे मर्मपर वार किया है। बहुत बुरा किया है तुमने!" उसने अपना मुँह नीचे झुका लिया।

सादूने उसकी ठोड़ीको अपने हाथसे ऊपर उठाया, तो देखा उसमें आँसू छलछला आये थे। दंड देनेका अभिमान, बदलेकी भावना, निकालनेकी कोई राह न पा सकनेके कारण जल बनकर आँखोंकी परतोंपर तैर आये थे।

सरदार सादूने उसे छातीसे चिपका लिया। इस बार मेघराजने छूटने की चेष्टा नहीं की। सरदारने कहा, "इसमें किसी प्रकारका छल नहीं था, भैया। हँसी-हँसीमें ही फूलसिंहको हाथ थमा दिया और मैं सादूसे जयतुंग बन गया। लेकिन अब लगता है कि भेद खुल गया, तो सभी मोहिलोंके मनको इससे चोट पहुँचेगी। संभव है भाटियों और मोहिलोंमें इस ज़रा-सी बातके ऊपर ठन जाय। कुछ भी न हुआ, तो कम-से-कम तुम्हारे पिताजी इस प्रकार मेरे आतिथ्य ग्रहण करनेसे बच जाने पर सदाके लिए बुरा मान जायँगे। इसलिए इस बातको हम जानें या तुम। बोलो, वचन देते हो?"

उसकी छातीसे अलग होकर मेघराजने कहा, "अब मैं किसी बातका वचन नहीं देता। फिर भी लगता है कि यह बात बिना छिपाये काम नहीं चलेगा।"

इतनेमें अपने पुरस्कारमें एक रेशमी चादरका जोड़ा लेकर फूलसिंह वहाँ आ गया। उन्हें इतने निकट ही पाकर वह बोला, "अरे, कुँवरजी, क्या आप मेरी प्रतीक्षामें थे? यह देखिए! मैंने बहुत मना किया कि मैं पुरस्कार लेकर क्या करूँगा, वह तो आपको मिल ही चुका है। लेकिन कुँवरीजी मानें तब न। यह चादरका जोड़ा मेरे कंधेपर रख ही दिया।"

सरदार सादूने उसकी साधू प्रवृत्तिको सराहा। मेघराज मन ही मन हँसा। फिर वे तीनों हवेलीसे बाहर निकल आये। मेघराजने जब वहाँ आकर बिदा ली, तो उसने सरदारके हाथको एक बार कसकर दबाया। इस

दबावमें सरदारके छद्म वेशकी मजबूरीके कारण और अधिक साथ न रह सकनेकी क्षमा-याचना थी।

अस्वीकार न कर सकनेकी विवशताके कारण जो पुरस्कार फूलसिंहको ग्रहण करना पड़ा था उसे अपने बदनसे मिलाते-जुलाते वह प्रसन्न-बदन सरदार के साथ अपने घरकी ओर चला जा रहा था। किंतु सरदार सादू चाहकर भी प्रसन्न न हो सका। कोरमदेवीके हाथोंको लेकर उसके हृदयमें मरुभूमि का तूफ़ान फिर करवटें लेने लगा था। सारे रास्ते सरदार सादू सोचता रहा कि जिस लड़कीके ये हाथ होंगे स्वयं वह कैसी होगी!

लेकिन इस उत्सुकताके पीछे कुछ और भी भाव थे। इन भावोंसे जीतना सदा ही मनुष्यके लिए कठिन रहा है।

× × ×

अतीतकी घटना सुनाकर जहाँ सरदार सादूने मोहिलोंके राज-परिवार को क्षण भरके लिए अभिभूत-सा कर दिया था, वहाँ वर्त्तमानका मूर्त्तरूप जयतुंग तीन दिनकी बादशाहतका पूरा-पूरा आनंद ले रहा था। उसका सदा मुसकराता गोल चेहरा, आवश्यकतासे कुछ अधिक भारी शरीर, इधर-उधर आनंदप्रद वस्तुओंको खोजती हुई तेज निगाहें, ये सब चीज़ें मिलकर अकसर लोगोंको उसके समीप बने रहनेके लिए बाध्य करती थीं।

मोहिलोंके वृद्ध सरदारने इस खिले हुए व्यक्तित्वको देखते ही पहचान लिया था। यह व्यक्ति, जो रात-दिन हिंसाके स्वप्न देखता था और लगभग नित्य ही मारकाटसे भरे आक्रमणोंका संयोजन करता था, और जिसकी कहानियाँ मरुदेशके मुरदा नौजवानोंको तलवार उठानेके लिए प्रेरित करती थीं, क्या सोचता है, कैसे सोचता है, यह जानना विचारोंकी अच्छी अदलाबदलीका साधन हो सकता है।

इसलिए उस सुबह राजमहलसे प्रीतिभोज लेकर जब जयतुंग अपने प्रभु व साथियोंके साथ बाहर निकला, तो वृद्ध मोहिले सरदारने कहा, "कुँवरजी, अमल भी साथ-साथ होगा।"

अफीमके प्रति जयतुंगकी अपार श्रद्धा थी। उसने खिलकर कहा,

"आपने इस समय यह प्रस्ताव बहुत सुन्दर रखा है, सरदार साहब । वास्तवमें इसके जैसा निरापद नशा इस संसारमें और कोई है इसमें संदेह ही है । मन किसी प्रकार भी बसमें न आ रहा हो, युद्धके लिए भुजाएँ फड़क रही हों, घोड़ेकी पीठपर बैठे-बैठे जाँघें अकड़ गई हों, तो चीनिया रानीका सेवन करे । देखनेवाला कह नहीं सकता कि जवान सो रहा है कि जाग रहा है । "

वृद्ध सरदार हो हो करके हँसा । "और कुछ सच हो न हो, लेकिन आपका तारीफ़ करनेका ढंग..." वह फिर जोरसे हँसते हुए बोला, "बहुत सुन्दर है...बहुत सही है कहा जाय, तो ठीक होगा । मालूम होता है कि उत्साहका सोता आपकी कल्पनामें मौजूद है ।"

और वे लोग अतिथि-गृहमें पहुँच गये । करीनेसे लगी मसनदपर चित्त लेटकर जयतुंगने कहा, "सरदार साहब, कभी-कभी तो मुझे ऐसा लगता है कि सब कल्पना ही कल्पना है, इस संसारमें कल्पनाके अतिरिक्त और कुछ नहीं है, बशर्ते कि कल्पना खूब स्वतंत्र हो—और आप जानते हैं कि कल्पना सबसे अधिक किस समय स्वतंत्र होती है ?" जयतुंगने मोहिले सरदारकी तरफ़ प्रश्न-सूचक दृष्टिसे देखा । जब वहाँसे भी प्रश्नसूचक दृष्टि मिली, तो उसने कहा, "जब बीहड़ शत्रुओंके बीचमें चार घड़ीसे आप बराबर दोनों हाथोंसे तलवार चला रहे हों और आपके हाथ यह अनुभव करना छोड़ दें कि वे आपकी आज्ञा-पालन कर रहे हैं, बल्कि खुद-ब-खुद अपनी गति पर घूमते रहें, तब कल्पना सबसे अधिक स्वतंत्र होती है ।"

"हे परमात्मा ! " वृद्ध सरदारने भौंह चढ़ाते हुए आश्चर्यपूर्ण मुद्रामें कहा । "तब आप कल्पना करते हैं !"

"क्यों ?" जयतुंग छतकी ओर देखता हुआ बोला, "मस्तिष्कको व्यस्त रखनेके लिए और कोई काम उस समय रहता ही नहीं । शरीरके जिन हिस्सोंको मस्तिष्क आज्ञा देता है वे कम्बख्त नाफरमाबरदार हो जाते हैं । बस चैनके साथ उस वक़्त ऐसी ही कल्पनाओंकी तरंगें मस्तिष्कमें उठने लगती हैं, जैसी अमल करनेके बाद उठती हैं । इसी लिए तो मैं अमलकी स्वर्गीय मादकताकी प्रशंसा कर रहा था ।"

"ओह !" इस विचित्र व्याख्यासे और भी चकित होते हुए मोहिले सरदारने कहा, "तो आपकी एकके बाद एक इतनी विजयोंका यह रहस्य है?"

"निःसंदेह," जयतुंगने कहा, "लेकिन मोहिलोंके पास कौन-सी रहस्यमय शक्ति है, मैं भी यह जानना चाहता हूँ ?"

मोहिले सरदारने अपने अँगरखेकी भीतरी जेबसे अफ़ीमकी एक सोनेकी बनी डिबिया निकाली। डिबिया पर जयपुरी नकाशी थी। उसमें से थोड़ी-सी अफ़ीम निकालकर वह अपनी स्वच्छ हथेलीपर अमलका नुस्खा तैयार करते हुए बोले, "हम देखते हैं शत्रु कैसा है, कितना है, कितने पानीमें है। यह सोचते हैं कि उसे पराजित करनेके लिए शक्ति कितनी, चातुर्य कितना और वीरता कितनी चाहिए। फिर सही परिणाममें सब वस्तुओंको सँजोकर हम अपने शत्रु पर टूट पड़ते हैं।"

"वाह, वाह !" जयतुंगने सचमुच प्रशंसा प्रकट करते हुए कहा, "आपके पास तो हारनेके अवसर ही नहीं रहते।"

"किंतु," मोहिले सरदार बोला, "यह आपकी युद्धप्रणालीसे बिल्कुल भिन्न है। आप केवल वीरताके भरोसे ही लड़ते हैं, पर वह वीरता अद्भुत है, विचित्र है। आप पहली ही चोटमें शत्रुका शीराज़ा बिखेर देते हैं। वह तिलमिला जाता है और आप तब तक दूसरी चोट कर बैठते हैं। आपके बारेमें मैंने यही सुना है। और तब तो गज़ब हो जाता होगा, जब आपके कुछ ही साथी—दोनों हाथोंसे तलवार चलाते हुए—कल्पनाओंमें खो जाते होंगे !" सरदारने हँसते हुए जयतुंगकी ओर देखा।

"जो आप कहना नहीं चाहते वह मैं कह दूँ।" जयतुंग सीधा होकर बोला, "आप दूसरे शब्दोंमें हमारे युद्ध-कौशलको मूर्खता कह सकते हैं। लेकिन यह बात न भूलिए कि जो जीवनके बारेमें जिस तरहके दृष्टिकोण रखता है उसी तरहके युद्ध-कौशलको वह अपनाता है। हम समझते हैं कि जितना ही मृत्युको पास बुलाया जाय उतना ही वह दूर भागती है। इसलिए हम मृत्युसे छेड़खानी करके जीते हैं। आप समझते हैं कि मृत्युको छल करके

जीता जा सकता है, और आप उसे छलनेमें सफल हो जाते हैं। लेकिन छलके इस खेलमें मृत्यु कभी-कभी भयानक रूपसे जीतती है। जिस व्यक्तिके प्राणोंको आप सबसे अधिक सुरक्षित समझते हैं, मृत्यु कभी उसे दयनीय रूपसे उठा लेती है. . .क्या अमल तैयार हो गया ?" जयतुंगने मोहिले सरदारकी हथेलीकी ओर देखा।

"ओह !" झटपट अपनी भूल सुधारते हुए मोहिले सरदारने तैयार हुआ अमल जयतुंगके हाथ पर रखा। फिर वह बोला, "आपकी बात आश्चर्य-जनक रूपसे सही मालूम होती है। साथ ही साथ यह भी सत्य है कि मृत्यु जब तक छेड़खानी सहन करती है, तो करती है, लेकिन जब वह जवाबमें ज़रा-सी छेड़खानी कर बैठती है, तो मनुष्यके लिए वह अंतिम होती है। उसके बाद उसमें चेतना ही नहीं रहती।" मोहिले सरदारने मुसकराकर अपना अमल मुँहमें रख लिया।

उसका अनुसरण करते हुए जयतुंग हँसता रहा। फिर होंठ दबाकर वह बोला, "वास्तवमें जीवन और मृत्युके बारेमें लोगोंके बड़े ही अलग-अलग और विचित्र विचार हैं। आप ढूँढ़े जाइए और छोर आपके हाथ नहीं आता। अपनी अवस्थाके अनुसार मनुष्य कोई भी विचारधारा पकड़ लेता है और चल पड़ता है। वह विजयी होता है, तो दुनिया उसके पीछे-पीछे चल पड़ती है। पराजित होता है, तो मूर्ख बनते भी उसे देर नहीं लगती।"

अपने-अपने अनुभवोंसे मँजे हुए राजपूत जातिके दो कबीलोंके ये वीर जिस प्रकार खुले दिलसे मृत्यु और जीवनके बारे में अपने विचार एक दूसरेके सामने व्यक्त कर रहे थे, उसी प्रकारके वास्तविक संघर्षको लेकर निकट भविष्यमें आनेवाली जो घटनाएँ उनके अस्तित्वके साथ खिलवाड़ करनेवाली थीं, उनका यदि उन्हें पता होता, तो शायद दुगुना अमल कर लेनेके बाद भी वे इस प्रकार पीनकका आनंद न ले पाते।

× × ×

अगली सुबह जब मोहिले सरदारकी पीनक टूटी, तो सामने ही उसका बेटा मेघराज चिंतित मुद्रामें प्रतीक्षा करता हुआ बैठा दिखाई दिया। जयतुंगको ज्योंका-त्यों पड़ा छोड़कर मोहिले सरदारने जलके लिए संकेत किया और मेघराज बाहर जाकर एक सेवकके हाथों जल लिवा लाया। मुँह हाथ अच्छी तरह धो चुकनेके बाद सेवक-द्वारा प्रस्तुत किये गये वस्त्रसे शरीर पोंछते हुए सरदारने कहा, "मेघराज, तेरे चेहरे पर मुरदनी छा रही है! क्या बात है?"

मेघराजने कहा, "अभी अभी मंदौरसे एक टुकड़ी आई है। भारी भेंटके साथ मंदौरके राजा साहबने कोरमदेवीकी पोशाक भेजी है। उन्होंने विवाहके लिए अगहन बदी दोयजका मुहूर्त्त भी सुझा भेजा है।"

"तो फिर खुशी मनाओ, बदलेकी भेंट भेजनेका इंतज़ाम करो। लेकिन नहीं, तुम्हारा मुँह क्यों उतर रहा है?" मोहिले सरदारने बेटेके मुँहको ध्यानसे देखते हुए पूछा।

मेघराज तनिक आगेकी ओर झुक गया। "पिताजी, कोरमदेवीने पोशाक लेनेसे इनकार कर दिया है।"

"ऐं!" मोहिले सरदार चौंका। "क्यों?"

"वह कहती है कि उसे यह विवाह ही स्वीकार नहीं है।" और मेघराजने पिताकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिए उनके मुँहकी ओर देखा।

इस बार मोहिले सरदार केवल आश्चर्यसे मेघराजके मुँहको निहारता रहा। फिर वह ज़रा चेतन होकर बोला, "तुम समझ तो रहे हो कि तुम्हारे मुँहसे क्या निकल रहा है?"

"मैं पूरे होशमें हूं, पिताजी," मेघराजने कहा। "कोरमदेवी भी उतनी ही गंभीर है। आप बाहर आइए, तो मैं बताऊँ।"

सरदार और मेघराज दोनों तुरंत बाहर निकल आये। वहाँ आते ही मेघराजने स्वरको अत्यंत धीमा करके कहा, "कोरम कह रही है कि उसका विवाह मंदौरके राजकुमारसे नहीं, भाटी सरदार सादूलसिंहके साथ होगा।"

"क्या बकते हो !" सरदार चिल्लाया ।

उत्तरमें मेघराज केवल चुप रहा।

इस चुप्पीसे जो अवकाश मिला उसके भीतर सरदारने समझ लिया कि स्थिति वास्तवमें वही थी, जो मेघराज कह रहा था। कोरमदेवीके लिए कुछ भी असंभव नहीं है। मोहिलोंके उन्मुक्त वातावरणमें पली वह उद्दंड लड़की किस समय किस प्रकारका विवाद खड़ा कर देगी इसका कभी किसी को पता नहीं रहता था। किसीको वह अपने सामने बोलने नहीं देती थी, और जब चाहती थी, तभी किसीकी भी बात सुननेसे इनकार कर देती थी। समय-समय पर वह अजीब-अजीब इच्छाएँ प्रकट करती थी और मोहिले सरदारकी समस्त शक्तियाँ आज तक लाड़ली बेटीकी प्रत्येक इच्छा पूर्ण करती चली आई थीं। अनायास और सहज ही मिल जाती इन इच्छा-पूर्तियों से कोरमदेवीको अपने आप ही वह अधिकार मिल गया था, जिससे किसीकी कैसी भी इच्छा अदम्य हो जाती है, और उसे पूरा करनेके अतिरिक्त और कोई चारा ही नहीं रह जाता। क्षण मात्रमें मोहिले सरदारकी आँखोंके सामने घूम गया कि विरोधका क्या परिणाम होगा और उस परिणामसे जो परिणाम निकलेंगे उससे कैसे-कैसे जहर खिल सकते हैं।

एक लंबी निःश्वास निकालते हुए सरदारने मुँह लटकाकर कहा, "मैं कोरमसे बातें करूँगा। तुम हम दोनोंके बैठनेका प्रबंध करो।"

मेघराज तुरत वहाँसे चला गया।

कुछ ही देर बाद पिता, पुत्र और पुत्री महलके एक एकांत कक्षमें त्रिकोणाकार बिछे हुए आसनोंपर बैठे थे। कोरमदेवी खड़ी ही रहना चाहती थी, किंतु मोहिले सरदार खड़े और बैठे हुए व्यक्तिकी विचारधारा का अंतर समझता था। वह उपस्थित समस्यासे जिस प्रकार भाग-भागकर प्रत्युत्तर दे सकता है, वह सुविधा बैठे हुए व्यक्तिको नहीं रहती। इसीलिए सरदारने बेटीको आज्ञा देकर आसन पर बैठ जानेके लिए बाध्य किया।

जब कोरमदेवी बैठ गई, तो पाँव नीचे किये बैठा हुआ मेघराज उठकर पिताकी पीठ पीछे जा खड़ा हुआ। कोरमदेवीने बैठकके इस परिवर्तनको देखा और वह समझ गई कि स्थितिकी गंभीरता भाईको पिताका पक्ष लेनेके लिए मजबूर कर गई।

कोरमदेवीके बैठते ही तकियेका सहारा लेते हुए वृद्धने कहा, "मैंने मेघराजसे जो कुछ सुना है, बेटी ! क्या वह सच है ?"

कोरमदेवी चुप रही। वह केवल सिर नीचा किये हुए पैरके अंगूठे को मसलती रही।

"तो वह सच ही है," सरदारने कहा। "और यह भी सच है कि भाटी सरदारकी ओर तुम्हारी दृष्टि है ?"

कोरमदेवीने इस बार भी चुप रहकर अपनी स्वीकारोक्ति प्रकट की।

"हूँ !" सरदारने कहा, "हम भाटी सरदारका आदर करते हैं। उसका व्यक्तित्व बड़ा है और वह महान् है। यह सच है कि आजका राजपूत नौजवान भाटी सरदारकी क़सम खाकर छाती ठोंकता है। हम-सा सौभाग्य-वान् और कौन होगा, जिसे स्वयं सरदार सादू-जैसा लोगोंका प्रिय नायक जमाईके रूपमें मिले। लेकिन मुझे बड़ा अफ़सोस होता है तुम्हारी बुद्धि पर कि तुम ज़रासे मोहमें आकर इतने बड़े वीर व्यक्तिकी जानकी ग्राहक बन बैठी हो !"

इस बार कोरमदेवीने चौंककर पिताकी तरफ़ देखा। "क्या मुझसे कोई अपराध हो गया है, पिता जी ?" और किसके प्रति अपराधका यह प्रश्न था यह प्रकट ही था।

"इसे अपराध नहीं, तो और क्या कहा जाए ?" सरदारने कहा, "बच्चों और बड़ोंमें और फ़रक ही क्या होता है ? मैं तुम्हारे सामने नीति और धर्मकी बात नहीं करता। किसीको वचन देकर तोड़ देना कितना बड़ा अधर्म है, मैं तुम्हारे बारेमें उसकी दुहाई नहीं देना चाहता। मैं जानता हूँ

कि तुम्हारे पास उसका जवाब है । तुम कह दोगी कि तुम्हारी आत्मा इसे स्वीकार नहीं करती । और मैं जानता हूँ कि जिस विवाह-संबंधको आत्मा स्वीकार नहीं करती वह पैशाच-विवाह होता है । लेकिन मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि जिस समय मंदौरके दस हज़ार राठौर हाथोंमें दुधारे लेकर उठ खड़े होंगे और तुमसे पूछेंगे कि कहाँ है वह जिसने तुम्हें उनसे छीन लिया है, तो तुम क्या जवाब दोगी, किस तरफ़ इशारा करके कहोगी कि यहाँ है वह भाटी सरदार ? कौन-सा वह लोहेका कवच है, जिसे पहनाकर तुम भाटी सरदारको राठौरोंके लपलपाते हुए खड्गोंके सामने खड़ा कर दोगी, और वह उनसे बच निकलेगा ?"

पिताकी यह हृदयको बेध देनेवाली बात सुनकर कोरमदेवी रोष, प्रेम और वेदनाके मिश्रणसे थरथर काँप रही थी, और जब मोहिले सरदार चुप हुआ, तो कोरमदेवी फूट-फूटकर रो पड़ी ।

मेघराज देख रहा था कि बहनके लौहनिश्चय पर करारी चोट पड़ी थी । किंतु वह यह भी जानता था कि कोरमदेवीको बहुत जल्दी निश्चय कर लेनेकी आदत थी, और जब वह एक बार निश्चय कर लेती थी, तो उससे उसे डिगाना जैसे पहाड़को अपने स्थानसे डिगाना था । फिर भी वह खड़ा-खड़ा इस चोटसे आहत हो रहा था । इसी कारण उसके गौर मुखपर हार्दिक कष्टकी लाली उभर आई थी । लेकिन वह चुप रहा ।

आखिर कोरमदेवीने कहा, "राठौर जानबूझकर आगमें नहीं कूदेंगे ।" कहनेको तो कह दिया, किंतु उसके शब्द कुछ अस्पष्ट थे ।

मोहिले सरदार तो उसकी सुनने और अपनी सुनाने आया ही था । उसने कोरमदेवीके शब्द कान लगाकर सुने । फिर वह बोला, "हूँ ! तो यही है तुम्हारा तर्क ? कितना कमजोर और फीका तर्क हो गया है तुम्हारा, बेटी !"

कोरमदेवी मानो भभक उठी । "भाटियोंने घास नहीं छीली है, पिता जी," उसने कहा । "मुझे भाटियोंसे छीननेके प्रयत्नमें राठौर अपना ही नाश कर बैठेंगे ।"

"मुझे खुशी होगी !" सरदारने शांत वाणीमें कहा, "तब भी खुशी होगी, जब हज़ारों वीर मरकर तुम्हारी एक इच्छा पूरी करेंगे ! तब भी मैं प्रसन्न ही हूँगा, जब हज़ारों स्त्रियोंकी गोद और हज़ारों ललनाओंका सुहाग तुम्हारे हाथोंको पीला करनेमें काम आ जायगा !" सरदारका कंठ अवरुद्ध हो गया। फिर भी थूक निगलकर वह कहते चले, "लेकिन तब मैं शायद खुशीसे पागल हो जाऊँगा, जब मेरी बेटीके पीले हाथोंपर बहादुर भाटियोंके लाल लहूकी धाराएँ बह रही होंगी !"

कोरमदेवी आँखें फाड़कर अपने पिताकी सूरतको देखती रही। यहाँ तक कि उसने देखा कि विपरीत और अटल भविष्यकी काली छायाओंसे पार न पा सकनेके कारण वृद्ध सरदार रो पड़ा। कोरमदेवीके कलेजेमें जैसे कुछ कहते-कहते अटक गया। फिर पिताको ज़रा चेतन होते देखकर ही उसने कहा, "पिता जी, मोहिलोंने कभी भविष्यके बारे इतना नहीं सोचा, जितना आज आप सोच रहे हैं। भाटियोंने कभी अपने प्राणोंको इतना नहीं सहेजा, जितनी चिंता आज आप उनके लिए कर रहे हैं। मुझे भाटी सरदार इसीलिए प्रिय है कि उसने खतरोंको सफलताके साथ पार किया है। वह अब भी खतरोंको पार कर सकता है। वह अगर नहीं कर सका, तो मोहिलोंकी बेटी अपना पथ पहचानती है।"

मोहिले सरदार अवाक् हो गया। उसके मस्तिष्कमें संचित समस्त तर्क कोरमदेवीके वचनोंके प्रभावमें विलीन हो गये। कोरमदेवीके पास कोई दलील नहीं थी, किंतु उसमें ओज था, और राजपूतोंमें शायद सबसे बड़ा यही एक दुर्गुण था। अंतमें जब कोई राह नहीं रही, तो वृद्ध सरदारने अपने जूते पहननेके लिए नीचे पाँव लटकाये। तब इतनी देरसे चुप खड़ा मेघराज सहसा हिला। उसके होंठ खुले और उसने कहा :

"एक बात मैं भी कहना चाहता हूँ, पिताजी।"

सरदार जूता पहनते-पहनते रुक गया। सिर पीछे फिरा कर उसने कहा, "मेघराज, मैं यहाँसे जाना चाहता हूँ !"

"मुझे बहुत बड़ी बात नहीं कहनी है, पिताजी । मैं तो सिर्फ़ यह सच्चाई कोरमके सामने रखना चाहता हूँ कि जिसे वह भाटी सरदार समझ बैठी है वह भाटी सरदार नहीं है । भाटी सरदार फूलसिंह चरवाहेके घर अतिथिके रूपमें टिका हुआ है ।"

सरदार जैसे बैठा-बैठा ही उछल पड़ा । कोरमदेवी मुँह बाये रह गई । वह अचकचाकर भाईकी आँखोंमें देखने लगी । कहीं उनमें कोई शैतानीका भाव तो नहीं है ?

"यह तुम क्या कह रहे हो, मेघराज !" मोहिले सरदार बोला, "क्या यह संभव है ?"

"हाँ, संभव है, पिताजी," मेघराजने कहा । "शायद लंबे सैनिक-जीवनने भाटी सरदारको असीम साहसी और विनोदी बना दिया है । लेकिन इस तरह उन्होंने मोहिलोंके आतिथ्य-सत्कारका मज़ाक बनाया है । मैंने उससे पगड़ी बदल ली थी, नहीं तो उसी दिन तलवार उठ चुकी थी, और फैसला भी तुरंत हो जाता ।"

वृद्ध सरदार बजाय मुरझानेके खिल उठा । उत्साहसे बेटीकी ओर देखकर उसने कहा, "लो, अब तो बाज़ी ही पलट गई, बेटी !"

कोरमदेवी अनखनाकर उठ गई । बड़े व्यथित और तीव्र स्वरमें उसने कहा, "मैं भाटी सरदारके शरीरको नहीं चाहती । मेरा मोह उसकी आत्मासे है, उसकी उस वीरतासे है, जिसने भयानक खतरोंमें अपनेको सचेत रखा है ।"

कोरमदेवी वहाँसे चली गई और मोहिल सरदार अवाक् होकर उसे जाते देखता रहा । फिर वह सिर पकड़कर उसी आसन पर तकियेके सहारे लेट गया । एक बार अपने बालों पर हाथ फेरते हुए वह बोला, "मेघराज, किसीको जल लानेके लिए कह दे ।"

मेघराज स्वयं ही जल लेकर आया । जब मोहिले सरदारने जल पी

लिया, तो वह फिर लेट गया। मेघराजने पिताके माथेपर अपना हाथ रखा। "एक राह अभी और रह गई है, पिता जी।"

नहीं, अब कोई राह नहीं रह गई है, बेटा!" सरदारका निराश स्वर निकला। जब कोरम कुछ निश्चय करती है, तब कोई राह नहीं रहती, आज तक नहीं रही।"

मेघराजने कहा, "भाटी सरदार यदि कोरमको अस्वीकार कर दें, तो राह अब भी खुली है, पिताजी। मुझे तो आशा है कि वह एक लड़कीके लिए अपने सात सौ साथियोंका खून बहानेके लिए तैयार नहीं होगा। क्या आप उससे एक बार पूछेंगे नहीं, पिता जी? आखिर उसीसे तो इस बातका सबसे बड़ा संबंध है।"

मोहिले सरदारकी आँखोंमें एक चमक आई, और वह उठ गया, "शायद भाटी सरदार अपनी ओर एक राजपूत लड़कीका बढ़ा हुआ हाथ अस्वीकार न कर सके। मैं पहले उसके साथीसे ही इसके लिए पूछूँगा। अब-कुछ उम्मीद जान पड़ती है। वे लोग कभी व्यर्थके रक्तपातको पसंद नहीं करेंगे। तब हम भाटी सरदारके सामने कोरमका हाथ और उसके साथियों की अनिच्छा एक साथ रखेंगे। उसे अपने साथियोंकी तरफ़ मजबूर होकर झुकना पड़ेगा, और कोरमको लेकर इस नाशका श्रीगणेश नहीं हो सकेगा।" सरदारने अपने जूते पहने और अपने साथ मेघराजको लिए वह महलसे निकल कर उसी अतिथि-गृहमें पहुँच गया, जहाँ अभी-अभी अफ़ीमकी मादकतासे उत्पन्न कल्पनाओंकी तिलांजलि देकर जयतुंग उठः बैठा था।

× × ×

सेवक चाँदीकी सुराहीसे जयतुंगके हाथोंपर जल उँडेल रहा था। निकट आकर मोहिले सरदारने कहा, 'जय भवानीकी, कुँवर जी।"

चुल्लूका पानी जमीनपर छोड़कर जयतुंगने हाथ जोड़ दिये। "भवानी माताकी जय, सरदार साहब। मालूम होता है आप बड़े सबेरे उठ गये।"

सरदारने पलटकर मेघराजसे कहा, "बेटा, कुँवरजी के लिए जलपान का प्रबंध करो। देखते नहीं अमलने कुँवरजीका चेहरा फ़ीका कर दिया है?"

मुँहपर पानीका चुल्लू डालते हुए जयतुंगने कहा, "कुँवर साहब, देखना जलपान ज़रा गरिष्ठ हो। हल्के जलपानसे मेरे चेहरेपर ताज़गी नहीं आती।"

किंतु जयतुंगकी इस बातसे किसीके मुख पर भी मुसकराहट नहीं आई। जब जयतुंग सेवकके हाथके वस्त्रका प्रयोग कर चुका, तो सरदारने सेवकको वहाँसे चले जानेका इशारा किया। उसके चले जाने पर वह बोला :

"कुँवरजी, जो प्रस्ताव मैं आपके सम्मुख रखने जा रहा हूँ, यदि आप उसे हज़म कर गये, तो फिर शायद गरिष्ठ जलपानकी ओर आपकी दृष्टि न उठ सके। मेवराज, तुम इनके लिए हल्के जलपानका ही प्रबंध करो।"

जयतुंगने मेज़बानके द्वारा अपनी बात इस प्रकार कटती देखकर आश्चर्यसे सरदारकी ओर देखा। फिर वह बोला, "अच्छा तो, कुँवर साहब, आप तनिक ठहर जाइए। पहले मैं सरदार साहबका प्रस्ताव सुन लूँ।"

सरदारने खड़े-खड़े ही प्रस्ताव रखा : "कुँवरजी, सविनय निवेदन है कि मैं अपनी बेटी कोरमदेवीका हाथ आपके हाथोंमें देना चाहता हूँ।"

जयतुंग जैसे आसमानसे ज़मीन पर आ गिरा। एक क्षण वाणीरहित होकर उसने बारी-बारीसे सरदार और मेवराजकी मुख-मुद्राओंको देखा, वहाँ असाधारण रूपसे गंभीरता विराज रही थी। फिर उसने कहा, "इतनी कृपाओंका बोझ मैं सम्हाल नहीं सकूँगा, सरदार साहब। मैं अपनी कृतज्ञता किस प्रकार प्रकट करूँ समझमें नहीं आता। आप जो कुछ कह रहे हैं क्या वह पूरी गंभीरतासे कह रहे हैं?"

"जितनी गंभीरतासे दिनमें सूरज निकलता है, कुँवर जी, मेरे मुँहके शब्द भी उतनी ही गंभीरतासे निकल रहे हैं। तो आप इसे स्वीकार करते हैं? ज़रा ठहरिए, आपका अपमान करना मेरा उद्देश्य नहीं है। आप स्थिति समझ लें, तब अपनी स्वीकारोक्ति दें। मंदौरके राठौरों से मेरी बेटीकी मँगनी हो चुकी है!"

जयतुंग हाथ-मुँह पोंछनेके बाद जिस मुद्रामें बैठा था उसी मुद्रामें बैठा

रहा। हिलने-डुलनेका उसे अवसर ही नहीं मिला। उसने कहा, "मंदौरके राठौरोंसे आपकी बेटीकी मँगनी हो चुकी है !"

"हाँ, कुँवर जी," सरदारने कहा। "जब मँगनी हुई थी, तब वह बच्ची थी। अरिनकंवल मंदौरका युवराज है। उसीसे मँगनी हुई थी। किंतु बाप बेटीके लिए सबसे अच्छा वर ढूँढ़ता है। हमें भाटी सरदारसे अच्छा वर इस समय सारे राजपूतानेमें दिखाई नहीं देता।"

"भाटी सरदारसे अच्छा वर आपको सारे राजपूतानेमें दिखाई नहीं देता !" जयतुंग मोहिले सरदारके शब्दोंका ज्यों-का-त्यों अनुसरण करता हुआ बोला।

जयतुंगकी स्वयंकी विचारशक्ति कुछ समयके लिए कुंठित हो गई थी या वह परिस्थितिकी विषमताको सिर झुकाये सोच रहा था, दोनों मोहिले इस बातको बड़े ध्यानसे देख रहे थे। सरदारने जयतुंगके कंधेपर हाथ रखते हुए कहा, "कुँवर जी, आप कुछ सोचमें पड़ गये हैं ?"

जयतुंगका सिर उठा। उसने कुछ निश्चय कर लिया था। दृढ़ स्वरमें वह बोला, "सरदार साहब, आपने परिणाम सोच लिया है ?"

मोहिले सरदारने अपने पुत्रकी ओर देखा—यह कैसा सवाल था ? इसका क्या अर्थ हो सकता था ? इस बार मेघराजने उत्तर दिया, "हाँ, कुँवर जी, हमने परिणाम अच्छी तरह सोच लिया है। अब जो कुछ सोचना बाक़ी रह गया है वह आपको रह गया है।"

जयतुंग हँसा। "मुझे परिणामके बारेमें कुछ नहीं सोचना है, कुँवर साहब। मैं एक दूसरी बात सोच रहा था। इस तरहकी योजनाओंका परिणाम तो सदा ही एक-सा होता है, और उससे भाटी सुलझना अच्छी तरह जानते हैं। मुझे यह संबंध स्वीकार है।"

जयतुंगका निश्चय सुनकर दोनों मोहिलोंके मुखपर कालिमा पुत गई। सरदारने विस्मयसे कहा, "आपको स्वीकार है !"

"क्यों ? आपको आश्चर्य हो रहा है ?" जयतुंगने पूछा ।

"ओह !" मोहिलोंका वृद्ध सरदार वापस लौट चला । जाते-जाते उसने कहा, "मेघराज, कुँवरजी के लिए जिस प्रकारका जलपान वह चाहें वैसा ही प्रबंध करो ।"

और मेघराज आज्ञा पालनके लिए पिताके साथ हो लिया ।

कुँवरजीके छद्म-वेषमें पाहुओंके राजा साहबने जो उत्तरदायित्व अपने सिर ले लिया था वह अनधिकृत था । किंतु वर्षोंके संसर्गसे जयतुंगने भाटी सरदारकी वीरता और साहसको जितना आँका था उसीके अनुसार उसने वह ज़िम्मेदारी अपने सिर ओट ली थी । फिर भी संदेहका निराकरण होना अनिवार्य था । इसलिए जलपानकी प्रतीक्षा न कर पाकर जयतुंग सीधा अपने साथियोंके निवास पर पहुँचा, और पंच-कल्याण पर सवार हो कर, फूलसिंह चरवाहेका पता बतानेके लिए उसने एक मोहिलेको साथ लिया । कुछ ही देरमें वह चरवाहेके घरके सामने उतरा ।

साथ आये मोहिलेने चरवाहेको पुकारा । वह तुरंत बाहर निकला । साक्षात् कुँवरजीको सामने देखकर वह एक बार तो हक्काबक्का रह गया । फिर भूमि पर झुककर उसने भाटीके पाँव छुए । "पाँव लागी, महाराज ।"

"सुखी रहो," भाटीने कहा । "भाटी सरदार कहाँ हैं ?"

चरवाहा समझा नहीं । वह अचकचा कर जयतुंगका मुँह देखने लगा । "भाटी सरदार तो आप ही हैं, महाराज !" उसने कहा ।

जयतुंग उत्तेजनामें पहली बार भूल कर गया था । उसे सुधारते हुए उसने कहा, "कुँवरजी कहाँ हैं ?"

"कुँवरजी भीतर हैं । घरके भीतर पधारो जी," चरवाहेने कहा ।

जयतुंग उसके पीछे-पीछे चला । भाटी सरदार भूमि पर बिछी हुई एक दरी पर बैठे सूत बँट रहे थे । जयतुंगको देखते ही उठ खड़े हुए । "जुहार, राजा साहब । आप यहाँ कैसे !"

"यह आप क्या कर रहे हैं, कुँवरजी ?" जयतुंगने कहा ।

"मैं अपने मेज़बानसे सबसे अधिक मज़बूत रस्सीको बँटनेका तरीक़ा सीख रहा था । मेरा सवाल ज्यों-का-त्यों है," भाटी सरदारने कहा ।

फूलसिंह अभी आश्चर्यान्वित हुआ पीछे ही खड़ा था । अपना नाम सुनते ही उसे स्थितिका बोध हुआ, और उसने झपटकर एक कोनेसे पीढ़ा उठाया । फिर उस पर अपने कंधे पर पड़ी चादर डालता हुआ वह बोला, "आसन लो, महाराज ।"

जयतुंगने फूलसिंहकी तरफ़ देखकर कहा, "तुम ताज़े जलका प्रबंध करो जी ।"

सुनते ही फूलसिंह पलटकर वहाँसे तीर हो गया । उसके जाते ही जयतुंगने कहा, "अब शायद यह अभिनय समाप्त कर देना पड़े । कुँवरजी, आपने मोहिलोंके राज-परिवारमें किसी कुँवारी लड़कीका नाम सुना है ?"

भाटी सरदार हँस पड़ा । "राजा साहब, आप बात कहना तो जल्दीमें चाहते हैं, लेकिन स्वयं ही उसे उलझा रहे हैं । मोहिलोंके राज-परिवारमें कुँवारी लड़कियोंकी कमी तो नहीं होनी चाहिए । क्या आपने अपने लिए कोई चुन ली है ?"

जयतुंगने दूसरी बार अपनी भूल सुधारी । "इस बातको छोड़िए । क्या आपने मोहिले सरदारकी लड़कीके बारेमें कभी कुछ सुना है ?"

"हाँ, सुना तो है," भाटी सरदारने कहा । "उसका नाम कोरमदेवी है ।"

"हूँ !" जयतुंगने कहा, "क्या यह भी सुना है कि उसकी मँगनी हो चुकी है ?"

"हाँ, राठौरोंके युवराजसे ।"

"क्या आपका अनुमान है कि वह भाटियोंको प्रशंसाकी दृष्टिसे देख सकती है ?" जयतुंगने कुछ आश्चर्यमिश्रित स्वरमें पूछा ।

"अनुमान नहीं, निश्चय है," भाटी सरदारने कहा । "वह निश्चय ही भाटियोंको प्रशंसाकी दृष्टिसे देखती है । वह उनकी वीरतापर मुग्ध है ।"

"कुँवरजी!" आश्चर्यसे अभिभूत होकर जयतुंग बोल उठा। "मालूम होता है आपको यहाँ बैठे-बैठे ही मुझसे कहीं अधिक जानकारी मिल गई है!"

सरदार सादू हँसा। "हाँ, राजा साहब, इस बारेमें मुझे आपसे अधिक जानकारी है। आप कहना क्या चाहते हैं?"

"मैं जो कहना चाहता हूँ उसकी जानकारी आपको नहीं होगी," जयतुंगने कहा, "इसका निश्चय है। आपने यह कभी नहीं सुना होगा कि मोहिले सरदार अपनी लड़कीका संबंध आपसे करना चाहते हैं।"

यह सरदार सादूके आश्चर्यान्वित होनेकी बारी थी। विस्मयसे भौंह चढ़ाकर उसने कहा, "राजा साहब, अभी तक पीनकमें ही हो क्या? मालूम होता है चीनिया रानी सिरपर चढ़कर बोल रही है!"

जयतुंगने उतनी ही गंभीरतासे कहा, "मैं चेतन ही हूँ, कुँवर जी। पर बात सच है। किसी कुमारीके पवित्र और अनछुए हाथ भाटी सरदारकी तरफ़ बढ़ चुके हैं। यही जिज्ञासा मुझे इतनी जल्दीमें यहाँ खींच लाई है कि स्वयं सरदार सादू इसे स्वीकार करते हैं या नहीं।"

क्षण मात्रमें सादू सरदारकी आँखोंके सामने वे गोरी और लचकदार कलाइयाँ घूम गईं, जिनके द्वारा उसे एक ढाल और एक तलवार उपहारमें मिली थी। मानो कोरमदेवी चिकके पीछेसे बोल रही हो: 'मेरा विवाह तुमसे होगा। जब तुम मुझे लेकर चलने लगोगे, तो सारा राजपूताना तुम्हें भूखी आँखोंसे देखेगा। उस समय कुल-सम्मानकी रक्षाके लिए मैं तुम्हें आज यह ढाल और तलवार दे रही हूँ। जिस तरह यह ढाल और तलवार कठिन से कठिन धातुके विरुद्ध टकरानेसे भी नहीं टूटेगी, उसी तरह आशा करती हूँ कि इन्हें रखनेवाला कठिन-से-कठिन परिस्थितिसे टकराने पर भी मेरी रक्षा करनेमें समर्थ होगा...'

बादमें भाटी सरदारने कहा, "आपका इतना बड़ा सच मुझे कितना बड़ा मज़ाक लग रहा है इसे आप नहीं जानते। इस तरहकी मज़ाक अच्छी

नहीं होती। मैं उस लड़कीको देख आया हूँ। वह स्वच्छ दूधकी तरह निष्कलंक है। उसके नामको लेकर हँसी नहीं चलनी चाहिए।"

जयतुंगने सादू सरदारके चेहरेकी ओर दृष्टिपात करके स्थिरतासे कहा, "यही सबसे बड़ी हँसी लगती है, कुँवरजी, कि यह बात सच है और प्रस्ताव स्वयं मोहिले सरदारके मुँहसे मेरे सामने निकला है। पर आपने उसे कब देख लिया ?"

"मैंने उसे नहीं देखा है, केवल उसके हाथ देखे हैं। देखकर उन हाथोंको अपनानेका मोह भी हुआ था, लेकिन मैंने प्रयास करके उसे दबा दिया। मैंने उसे आकाश-कुसुम समझा था, किंतु वह बड़ा खूबसूरत काँटा है, जो चलते-चलते पैरोंमें अपने आप चुभ गया। अगर आपकी बात सच है, तो अब यह काँटा नहीं निकलेगा, राजा साहब।"

जयतुंग प्रसन्नतासे उछल पड़ा। "आपने मुझे उबार लिया है, कुँवरजी ! आपके वेषमें मैं अपनी स्वीकृति मोहिलोंको दे आया हूँ।"

सरदार सादू मुसकराया। इस मुसकराहटमें सच्ची प्रसन्नता छिपी थी। उसने कहा, "फिर आप इसलिए जल्दी-जल्दी मेरे पास दौड़े आये कि कहीं मैं डर न जाऊँ। मेरे वेषमें आप—कुछ भी कर आते राजा साहब, चाहे दिल्लीपतिको अपना शत्रु बना आते—तो भी मैं पीछे न हटता।"

जयतुंगने आगे बढ़कर सरदार सादूको अपने विशाल शरीरसे चिपटा लिया। गद्गद होकर उसने कहा, "मैं आपको क्या बिलकुल भी नहीं पहचानता, कुँवर जी ?"

इतनेमें फूलसिंह ताज़े जलका लोटा और कटोरा दोनों हाथों पर रखे आ उपस्थित हुआ। विनम्रतासे झुककर उसने जयतुंगसे कहा, "जल, महाराज।"

जयतुंगने कहा, "वस्तु पहले बड़ोंको दी जाती है। तुम देखते नहीं पास ही स्वयं भाटी सरदार खड़े हैं।" उसने सरदार सादूकी ओर संकेत करके बताया।

फूलसिंह भौंचक्का बना खड़ाका-खड़ा रह गया। "हुजूर क्या कह रहे हैं, समझ नहीं पड़ा!" उसने कहा।

"म कह रहा हूँ कि भाटी सरदारको पहचानो। यह हैं भाटी सरदार। तुम पहले भी भूलकर आये थे और अब भी भूल कर रहे हो," जयतुंगने कहा।

"यह भाटी सरदार हैं! और आप कौन हैं?" चरवाहेने अचकचाकर पूछा।

"मैं कौन हूँ? मैं पाहुओंका राजा हूँ," जयतुंगने जोरसे खिलखिला कर कहा।

फूलसिंह चरवाहेके हाथसे जलका लोटा छूट कर भूमि पर लुढ़क पड़ा। वह मुँह वाये दोनों भाटियोंको देखता ही रह गया। फिर तुरंत ही चेतन होकर वह लोटा और कटोरा उठाकर ज्योंही बाहर भागने लगा, जयतुंगने उसे रोक दिया। "रहने दो, हमें प्यास नहीं है। कुँवरजी, आप तुरंत चलिए।" और वह कुँवर सादूलसिंहका हाथ पकड़कर उसी क्षण वहाँसे बाहर हो गया।

फूलसिंह हड़बड़ाकर बाहर निकल आया और भीतसे चिपका सादूलसिंह और जयतुंगको पंचकल्याणपर उड़ता हुआ देखता रहा।

× × ×

दो सेवकोंके हाथोंपर गरिष्ठ जलपान रखवाकर जब मेघराज फिर बैठकमें लौटा, तो सिर नीचे झुकाये हुए भाटी सरदारके सामने थाल रखवा कर वह हाथ जोड़ते हुए बोला, "और जो आज्ञा होगी वह तुरंत प्रस्तुत किया जाएगा।"

भाटी सरदारने थालोंके छाजन उघाड़कर मुँह ऊपर उठाते हुए कहा, "यह दालोंसे बनी हुई मिठाइयाँ, ये कचौड़ियाँ! मैं तो कभी इतना कड़ा भोजन नहीं करता, भाई मेघराज जी।"

मेघराजने अपना विनम्रता और ख्यालोंमें खोया हुआ सिर ऊपर उठाया, फिर आश्चर्यसे उछलता हुआ वह बोला, "अरे, कुँवरजी!"

इससे पहले कि कुँवर सादूलसिंह उसके आश्चर्यकी प्रतिक्रियामें कुछ कहें मेघराज वापस भागा। पिताको इस परिवर्तनकी सूचना देना आवश्यक था।

कुछ ही देरके बाद मोहिले सरदार मेघराजके साथ-साथ उस स्थानपर पहुँचा। उसने अपनी बाँहें उठाईं और कुँवर सादूलसिंह उसकी छातीसे चिपट गये।

धीमे किंतु गद्गद स्वरमें मोहिले सरदारने कहा, "धन्य हो, कुँवर जी, कि तुमने भूल ठीक समय पर सुधार ली है। मंदौरके संदेशवाहक अभी ठहरे हुए हैं, और मुझे उनको जल्दीसे जल्दी उत्तर देना है। कुँवर जयतुंगने सब बातें तुम्हें बता ही दी होंगी।"

मसनदोंकी ओर बढ़ते हुए भाटी सरदारने उत्तर दिया, "राजा साहबने मुझे सब बातें बता दी हैं। मुझे उनके निश्चय पर प्रसन्नता है।"

शांतिके साथ बैठकर मोहिले सरदारने गहरी निराशा भरी निःश्वास छोड़ी और बोला, "मेरा भी यही अनुमान था। मैं भाटियोंको जानता हूँ। फिर भी मनमें एक दुराशा थी कि राजा साहबकी जगह यदि सही व्यक्ति होता, तो मैं उसके साथ सदा रहनेवाली बुद्धिकी दुहाई दे सकता था। किंतु तुमने छलका परदा डाल रखा था, कुँवर जी। उसे मैं अपने आप कैसे तोड़ सकता था? यही संबंध मुझे सबसे ज़्यादा ख़ुशी देता और इसी पर मुझे सबसे ज़्यादा सोचना पड़ रहा है।"

"बहुत सोच-विचार ठीक नहीं रहता," कुँवर सादूलसिंहने कहा। "इससे होने वाले काममें मन आधा रह जाता है, और जिस काममें आधा मन रहता है वह कभी सफल नहीं होता। आपको इतना सोच-विचार करनेकी ज़रूरत हीं क्या है? यह पूरी तरहसे आपकी ही इच्छा पर है, संबंध करें या न करें। किंतु आपके पूछने पर राजा साहबने जो उत्तर दिया है, मैं भी वही उत्तर देता।"

मोहिले सरदारने तनिक कातर निगाहोंसे भाटी सरदारके मुँहकी ओर

देखा। उस तेजस्वी मुखसे जो कुछ निकल रहा था वह पूरे अभिमान और दृढ़ताके साथ। मानो उसने किसी उपस्थित समस्याके दूसरे पहलूको कभी देखा ही न हो।

"मेरी इच्छा पर क्या है, कुँवर जी? नहीं, मेरी इच्छा तो बँधी हुई है। मैं कोरमके विरुद्ध अपना हाथ नहीं उठा सकता। मैं भाटी सरदारको मजबूर नहीं कर सकता। मैं तो केवल यह पूछना चाहता हूँ कि क्या राठौरोंसे भिड़ना बुद्धिमानी होगी? तुम इस बातका जवाब दो, कुँवर जी।"

कुँवर सादूलसिंहने कहा, "इस बातका जवाब मैं भी नहीं दे सकूँगा, सरदार साहब। स्वयं न्याय जिस बातका उत्तर देता है उसका उत्तर वीर नहीं देते। मैं तो केवल एक बात जानता हूँ; आप अपनी बेटीका विवाह किसी विशेष वरसे करना चाहते हैं, बेटीकी इच्छा उसके साथ है, वर भी पीछे नहीं हट रहा है। फिर संसारके जो भी तत्त्व उनके विरुद्ध कमर कसते हैं वे अन्यायका पक्ष लेते हैं। प्रत्येक वीर न्यायके ऊपर अपनी जान दे देना अपना कर्त्तव्य समझता है। न्याय हमारी ओर है। जीत हमारी होगी।"

"मुझे भी न्यायकी शक्तिमें विश्वास है," मोहिले सरदारने उत्तरमें कहा। "किंतु न्यायकी भी अपनी क़ीमत होती है। जिस न्यायकी आवश्यकतासे अधिक क़ीमत देनी पड़ती है वह न्याय भी अन्यायके रूपमें परिवर्तित हो जाता है। भाटियों और मोहिलोंका सर्वनाश इस न्यायका बहुत अधिक मूल्य है, कुँवर जी।"

सरदार सादू उपेक्षासे हँसा। "कोई आपको न जानता होता, सरदार साहब, तो यही समझता कि आपके स्वरके पीछेसे भय बोल रहा है।" वह सीधा बैठ कर बोला, "जरा राठौरोंको मुक़ाबलेपर आने तो दीजिए। अभी तो यही निश्चय होना शेष है कि नाश भाटियों और मोहिलोंका होगा या राठौरोंका होगा। जिस न्यायकी आवश्यकतासे अधिक क़ीमत देनी पड़ती है वह फिर सामाजिक परंपरा बनकर अपनी क़ीमतसे भी कहीं ज़्यादा रंग देता है। इसीलिए न्यायकी कोई भी क़ीमत ज़्यादा नहीं होती।"

सिर नीचा किये मोहिले सरदार उठ गया। उसने भाटी सरदारके सिर पर अपना हाथ रखा। फिर वह बड़बड़ाया, "न जाने प्यारको तर्क कहाँसे मिल जाते हैं!"

जब मोहिले सरदार नजरोंसे ओझल हो गये, तो भाटी सरदारने मेघराजकी ओर मुसकराकर देखते हुए कहा, "हाँ तो, मैं कह रहा था कि मुझे इतना गरिष्ठ जलपान करनेकी बिलकुल भी आदत नहीं है, भैया। तुम्हें कष्ट न हो, तो..."

मेघराजने झपटकर स्वयं थाल उठा लिये और बोला, "क्षमा कीजिए। दूसरा समय हो गया है। अब आप जलपान नहीं, भोजन करेंगे।"

मेघराज चला गया और भाटी सरदारने कल्पनाओंके जाल बुनने आरंभ किये। उन कल्पनाओंके जालमें दो गोरे और कोमल हाथ थे, जिनके सामंजस्यसे किसी अत्यंत सुंदर, स्वच्छ और निष्कपट प्रेमसे पूरित मुखकी रचना होती थी।

मोहिले सरदारने वधूके लिए भेजी गई राठौरोंकी पोशाकको स्वयं अपने हाथोंसे संदेशवाहकोंको वापस करते हुए कहा:

"राठौरपतिसे कहना: जब हमारी बेटीकी मँगनी उनके बेटेसे हुई थी, तब हमने केवल दोनों कुलोंका सम्मान देखा था। लेकिन वह हमारी भूल थी। आज हमारी बेटी बड़ी हो गई है। मंदौरका राजकुमार भी बड़ा हो गया है। उस समयसे आज स्थिति बदल गई है। हमारा विचार है कि दोनों ही कुलपतियोंको फिर एक बार इस संबंध पर विचार कर लेना चाहिए, और इस विचारमें वर और वधूका आपसी लगाव प्रमुख है। हम अपनी बेटीका राजनीतिक विवाह नहीं करना चाहते।"

मंदौरके संदेशवाहक हक्केबक्के रह गये। एक बार उन्होंने मोहिलोंके सरदारको आश्चर्यकी मुद्रासे देखा-भाला और फिर अपना लाया हुआ सामान संगवाने लगे। किंतु काफ़ी तत्परतासे यह काम करते हुए भी उनकी दृष्टि

भाड़ियोंके उन डेरोंकी ओर उठ जाती थी, जहाँ मोहिलोंके नये मेहमान टिके हुए थे। उनके मस्तिष्क इस अचानक परिवर्तनका रहस्य भी साथ ही साथ उतनी ही तत्परतासे सोचनेमें लगे हुए थे। औरींतमें इससे आगे क्या होता है इसका समाचार मंदौर तुरंत पहुँचता रहे, यह प्रबंध करके जाना क्या बुद्धिमानी नहीं होगी ?

वे लोग इसका प्रबंध करके गये। पूरन नामका एक ब्राह्मण इसके लिए तैयार हो गया।

× × ×

एक सप्ताहके भीतर ही भीतर औरींतमें मंगलसूचक चँदोवे तन गये। अतिथियोंकी खातिरदारी अब और भी निकटतासे होने लगी। इस संबंधसे सब प्रसन्न थे, सब सुखी थे। कोरमके उछाहका तो अंत ही नहीं था। सारे औरींतकी कन्याएँ औरींतकी बड़ी हवेलीमें एकत्र हो गई थीं।

वृद्ध मोहिले सरदार चुपचाप अपना इंतजाम करते घूम रहे थे। उन्हें बेटीका दहेज देना था। उसके लिए उन्होंने दिनरात एक कर दिया। किंतु जब मेघराजने वह सब सामान अपनी माँके सामने रखा, तो वह नाकभौं-सिकोड़कर बोली, "बस ! क्या यही सामान मेरी बेटीके दहेजमें दिया जायगा ? मेघराज ! मेरी तो एक ही बेटी है।"

मोहिले सरदारने कहीं पाससे ही इन वचनोंको सुना। वह सीधा खड़े हो कर बोला, "घबराती क्यों हो ? देखना तो, मैं अपनी बेटीके दहेज़में क्या-क्या दूँगा ! इतना दूँगा कि आज तक किसीने नहीं दिया।"

और औरींतकी कन्याओंने कोरमदेवीको रत्नाभूषणोंसे सजा दिया। बाहुओंमें बाजूबन्द पहनाते हुए किसीने परिहास किया : "कोरम, इन बाहुओंको पत्थरके गलेमें भी डालोगी, तो वह पानी हो जायगा।"

सुनकर कोरमदेवीने उन बाहुओंमें अपना मुँह छिपा लिया।

फिर एक दिन शुभ घड़ीमें बापने बेटीके हाथोंमें हलदी लगा दी। औरींतका वायुमंडल जयजयकारोंसे गूँज उठा।

ससुरालकी हवेलीसे अंतिम विदा लेकर भाटी सरदार बाहर निकला। आगे-आगे थे मोहिले सरदार और मेघराज । बाहर निकलकर भाटी सरदार ने मुँहपरसे बनावटी फूलोंका रत्नजटित आवरण हटा दिया । तब वृद्धने कहा, "सामने देखो, कुँवर जी । यह मेरी बेटीका दहेज है ।"

भाटी सरदारकी दृष्टि ऊपर उठी और वह उस दहेज़को देखकर चकित रह गया । सीधी कतारोंमें लगभग दस हज़ार मोहिले नौजवान हाथोंमें नंगी तलवारें लिये खड़े थे ।

जमाईकी ओर बिना देखे ही मोहिले सरदार बोला, "ये दस हज़ार तलवारें तुम्हारी हैं, कुँवर जी । जो आदमी इन्हें लिये खड़े हैं ये पूगल तक इन्हें पहुँचाने जायँगे । जब मेरी बेटीका दहेज ठिकाने पर पहुँच जायगा, तब ये सब वापस आ जायँगे ।"

जयतुंग बिगड़ उठा । "यह हमारा अपमान है, सरदार साहब !"

"जो अपने जमाईका अपमान करता है उसका अपमान पहले होता है, राजा साहब," मेघराजने कहा । "हमने निश्छल भावसे यह दहेज़ दिया है । आप भी निश्छल भावसे इसे ग्रहण कीजिए ।"

मोहिले सरदारने घोषित किया, "जब तक एक भी मोहिला जीवित रहेगा, मरुभूमि पर भाटियोंका रक्त नहीं गिर सकता । हमने भाटियोंसे अपनी बेटी ब्याही है । हमने उन्हें अपना रक्तदान दिया है । अब यह लौट नहीं सकता ।"

"हम वचन देते हैं कि हम उस रक्तकी रक्षा करेंगे," भाटी सरदारने कहा । "दहेज भी अस्वीकार करनेका अधिकार हमें नहीं है । किंतु हमारे साथ ये तलवा ें ही जायँगी, इन्हें ले जाने वाले नहीं । अभी भाटियोंमें इतना दम है कि तलवारें उ ा सकें ।"

"कुँवरजी, इस तरह ये तलवारें कभी पूगल नहीं पहुँचेंगी," मोहिले सरदारने चेतावनी दी ।

"पहुँचेंगी, ज़रूर पहुँचेगी, सरदार साहब !" भाटी सरदारने कहा ।

"आप ज़रा सोचिए तो। देखनेवाले कहेंगे कि दहेज़में मिली तलवारें भाटिये दूसरोंके कन्धोंपर रख कर चल रहे हैं। हमने विवाह किया है अपनी भुजाओं के बल पर, आपकी भुजाओंके बल पर नहीं।" फिर वह जयतुंगकी ओर घूमकर बोला, "राजा साहब, इन तलवारोंको साथ ले जानेका प्रबंध कीजिए।"

मोहिले सरदार हताश हो गया।

अगले दिन सुबह रेगिस्तानके अंतरसे आनेवाला वह काफिला औरींतसे एक और खूबसूरत साथीको अपनेमें मिलाकर जब कूच करने लगा, तो भाटी सरदारको अपनी पगड़ीका ध्यान आया। पगड़ीका नहीं, उस व्यक्तिका ध्यान आया, जिसने उसके व्यक्तित्वसे अनजान होते हुए भी उससे पगड़ी बदल ली थी। किंतु बहुत खोज करानेपर भी मेघराजका कहीं पता नहीं चला।

औरींत दो कोस पीछे छूट गया था और भाटी सरदार कुछ दिनोंके इन नवीन संबंधोंको दिल और दिमाग़में समेटे साँडनीपर बैठा जा रहा था। काफिलेके बीचमें कोरमदेवीका डोला एक ऊँटनीकी पीठपर बँधा था। और वह सुखद स्वप्नोंके निश्चित चरितार्थके प्रभावसे हिलती-डुलती और सोती हुई आगे बढ़ रही थी। लेकिन काफ़िला कुछ दूर आगे चलकर रुक गया।

सामने लगभग पचास ऊँटोंकी एक पंक्ति रास्ता रोके खड़ी दिखाई दे रही थी।

जयतुंग पास आ गया। भाटी सरदारने कहा, "कौन हो सकते हैं ?"

"हो सकते हैं, तो दोस्त हो सकते हैं। दुश्मन होंगे, तो थोड़ी देर बाद ही वे ना-होत के बराबर हो जाएँगे," जयतुंगने कहा।

काफिला फिर आगे बढ़ा। अब दिखाई देनेवाले साफ़ दिखाई देने लगे। अचानक भाटी सरदारके मुँहसे निकला : "मेघराज !"

मेघराजकी ऊँटनी आगे बढ़कर ठीक भाटी सरदारके सामने खड़ी हो गई। मेघराजने न जुहार की और न वह ऊँटनीसे उतरा।

सरदार सादू हँस पड़ा। "तो तुम कन्नी काटकर यहाँ आ छिपे थे। मुँह कैसा बना रखा है, जैसे लड़ने आये हो!"

"हम औरींत वापस नहीं जाएँगे, हमारा निश्चय है," मेघराजने कहा।

"ओह, एक क़दम आगे! अच्छा, तो यहाँ बिना पानीके कब तक ठहरे रहोगे?" भाटी सरदारने पूछा।

"हम ठहरे नहीं रहेंगे," मेघराजने कहा। "हम साथ-साथ चलेंगे।"

"नहीं," जयतुंगने गरजकर कहा। 'हम मोहिलोंको अपने साथ नहीं ले जायँगे।"

मेघराज गंभीरताके साथ केवल भाटी सरदारकी आँखोंमें आँखें डाले चुपचाप बिना कुछ उत्तर दिये देखता रहा। उनमें कोई आग्रह नहीं था, कोई याचना नहीं थी उनमें। निश्चय था, कठोर निश्चय, जिसके सामने तर्क नहीं चलते।

सरदार सादूने पूछा, "तुम हमारे साथ क्यों जाना चाहते हो?"

मेघराजने कारण बताया: "यहाँसे पाँच कोसकी दूरी पर, तीन दिनसे दस हज़ार राठौर सैनिक हाथोंमें नंगी तलवारें लिये खड़े हैं। हमें यह मालूम हो चुका था। इसीलिए हमने दस हज़ार मोहिले तैयार किये थे। लेकिन आपने नहीं माना। ये पचास साथी मेरे अपने हैं। इनमेंसे किसीको भी एक सैनिकका वेतन नहीं मिलता। ये घरसे सिर पर कफ़न बाँध कर चले हैं। अब ये औरींत वापस नहीं जायँगे।"

कुछ देर तक भाटिये स्तब्ध रहे। फिर सिर उठाकर भाटी सरदारने अपनी ओर निरंतर ताकते हुए मेघराजसे कहा: "चलो।"

मोहिलोंमें हर्षकी लहर दौड़ गई। मेघराज दौड़कर बहनके डोलेपर पहुँचा। परदा हटाकर उसने बहनको अपनी उपस्थिति जतानी चाही। किंतु वह सो रही थी। मेघराजने परदा ज्यों-का-त्यों गिरा दिया।

× × ×

काफ़िला आगे बढ़ा । भाटियोंके ऊँट उस ओर अविराम गतिसे चलने लगे, जहाँ दस हज़ार राठौर अपनी खूनकी प्यास बुझानेके लिए चौकन्ने खड़े थे ।

राठौरोंसे एक कोसके अंतर पर भाटियोंने अपना पड़ाव डाल दिया । कई बार मेघराजने सोचा कि बहनको अपनी शक्ल दिखा दे, किंतु जयतुंग और भाटी सरदारके साथ व्यूह-रचना करनेमें फिर वह इतना तन्मय हो गया कि उसे बहनका भी ध्यान नहीं रहा ।

रात आई और सरदारने अपने साथियोंको पूर्ण विश्राम लेनेके लिए कहा । दो सौ गज़ आगे काफ़िलेकी मुख्य चौकी बनाई गई, जहाँ जयतुंग स्वयं जाकर डट गया । व्यूहके ठीक बीचमें कोरमदेवीका डोला रखा गया ।

अँधेरेने मरुभूमि पर अपना काला आवरण डाल दिया । रातके पहर अपनी करवटें लेने लगे । फिर चाँद निकला और उसकी पहली किरण के साथ ही साथ सादू अपने स्वप्नोंकी रानीके डोलेके निकट पहुँच गया । उसने डोलेका परदा उठाया और बोला : "अब जाग जाओ । थोड़ी देरमें सुबह हो जायगी ।"

"मैं तो जाग ही रही हूँ, कथावाचक जी," कोरमदेवीने उत्तर दिया ।

"जाग रही हो ! क्यों ?" सादूने पूछा ।

अफ़सोस कि नारी अपने स्नेहको कभी क़बूल नहीं करती । सादूको भी निराश होना पड़ा । कोरमदेवीने उत्तर दिया, "मैं दिन भर सोती जो रही हूँ । पर कथावाचक जी क्यों जाग रहे हैं, ज़रा सुनूँ तो ?"

"मुझे चाँद निकलनेकी आशा थी," सादूने उत्तर दिया । "अब चाँद निकल आया है, और मैं तुम्हारा मुँह चाँदके सामने करके देखना चाहता हूँ ।"

"क्यों, तुलना करोगे, जैसे सब करते हैं ?" कोरमदेवीने पूछा ।

"नहीं," सादूने उत्तर दिया । "तुलना करने योग्य वहाँ कुछ नहीं है ।" फिर उसका स्वर अत्यंत धीमा हो गया । "मैं उस स्वरकारको देखना

चाहता हूँ, जो चिकके पीछेसे वीणा बजाता था; उस स्वामिनीको देखना चाहता हूँ, जिसके सेवकोंने तलवार और ढालका उपहार दिया था—और इतना स्पष्ट देखना चाहता हूँ, जितना कि चाँद दिखा सकता है।"

कोरमदेवीने अपने अलंकारोंसे भरे हाथ डोलेके बाहर कर दिये। "ये ही थे न वे सेवक ?"

चंद्रमाकी किरणें हलदीसे पीले उन हाथोंपर तड़पकर पड़ीं और सादू सरदारने उन्हें झटसे पकड़कर चूम लिया। फिर उन्हें अपने गलेसे लगाते हुए उसकी दृष्टि ऊपर चाँदकी ओर उठी, जो वस्तु-वस्तुको शीतलता प्रदान कर रहा था। वह बोल उठा, "देवी, कोरम, नरको अधीर करके नारी कभी-कभी उसे खो बैठती है। मुझे अधीर न बनाओ। अपना मुँह बाहर निकालो। मैं उसे..." सहसा सरदार सादू चौंककर उ खड़ा हुआ।

चाँदकी ओर दृष्टि उठाते हुए उसकी नज़र बालूपर दूरतक फैली हुई चाँदनीपर निमिष भरके लिए दौड़ गई थी। उसकी अभ्यस्त आँखोंने दूर चाँदनीपर इसी ओरको बढ़ता हुआ एक काला धब्बा देख लिया था।

अपने प्रियतमकी अधीरताको शांत करनेके लिए जब कोरमदेवीने अपना मुँह बाहर चाँदनीमें निकाला, तो वह दूर जा चुका था। उसका लक्ष्य वही काला धब्बा था, जिसे उसने संशयपूर्ण दृष्टिसे देखा था।

कोरमदेवी आशंकासे भरी डोलेसे बाहर निकलकर खड़ी हो गई। वह देखती रह गई। यहाँ तक कि उसकी आँखें विस्तृत चाँदनीमें भी अपने पतिको नहीं खोज सकीं।

एक पेड़के सहारे जयतुंग घोड़ेकी ज़ीन बिछाये आरामसे सो रहा था। पंचकल्याण जाग्रत अवस्थामें चौकन्ना खड़ा था और उसकी रास जयतुङ्गके हाथोंमें लिपटी हुई थी। भाटी सरदार उसे पार करके पेड़की आड़में छिप गया।

उसने आनेवालेको पहचान लिया। वह शंखला महाराज थे। जयतुङ्गके पास आकर वह कुछ देर खड़े हुए उसे पहचानते रहे। फिर उनका हाथ अपनी

कमरपर गया। साथ ही सरदार सादूका हाथ भी अपनी तलवारकी मूठ-पर पहुँच गया।

लेकिन फिर शंखला महाराज लौट पड़े। पंचकल्याणने पहले रास हिलाकर जयतुङ्गको जगाना चाहा। फिर भी जब वह कलियुगी कुंभकर्ण नहीं जागा, तो उसने अपना खुर जयतुङ्गकी छातीपर रख दिया।

जयतुङ्ग राम-राम करता उठ खड़ा हुआ। "कहो, बेटा," उसने पंच-कल्याणको लक्ष्य करके कहा, "क्या लड़ाई शुरू हो गई?"

हिनहिनाकर पंचकल्याणने अपना मुँह जाते हुए शंखला महाराजकी ओर किया। किन्तु तबतक वह बहुत दूर जा चुके थे।

भाटी सरदार पेड़की आड़से निकल आया। "राजा साहब, चौकीदारी इसी तरह होती है?"

जयतुङ्ग हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ। "और नहीं तो कैसे होती है? हम विश्राम कर रहे थे और हमारा बेटा जाग रहा था।"

सरदार सादू हँस पड़ा। "जी हाँ, अभी आपका सोता हुआ सिर राठौरोंमें पहुँच जाता।"

'आप अपना काम कीजिए, कुँवरजी," जयतुङ्गने कहा। "हम और हमारा पुत्र अपना काम खूब अच्छी तरह जानते हैं।"

लेकिन भाटी सरदार जिसे अपनी प्रतीक्षामें निहारता छोड़ आया था, फिर उसके पासतक नहीं जा सका। उसने सोते हुए भाटी वीरोंको जगाया। दुश्मन सचेत हो गया है। भाटियोंको अविलम्ब सचेत हो जाना था।

सुबह हो गई। राठौरोंकी ओरसे एक संदेशवाहक अरिनकंवलका पत्र लिये जयतुङ्गके सामने आकर सांडनीसे उतरा। उस पत्रमें था: "...राठौर दस हज़ार हैं, भाटी सात सौ हैं। लेकिन हम संख्याका लाभ नहीं उठाएँगे। एक आदमी एक आदमीसे द्वंद्व करेगा। जीतनेवालेको विश्रामका अवसर दिया जायगा। फिर उसे दूसरा द्वंद्व लड़ना होगा। यह

सिलसिला तब समाप्त होगा, जब या तो दस हज़ार राठौर और तीन सौ शंखला समाप्त हो जाएँगे या सात सौ भाटी. . ."

पत्र सहित दोनों हाथ हवामें उठाकर जयतुङ्गने एक लंबी अँगड़ाई ली और संदेशवाहकसे कहा : "अजी, जाकर अपने युवराज साहबसे कहना कि हमारा अमल खत्म हो गया है । थोड़ा-सा भिजवा दें, ताकि हम उनके प्रस्ताव पर अच्छी तरह अमल कर सकें ।"

संदेशवाहकने नकेल फिराई और जयतुङ्गका विचित्र व निर्भीक संदेश लिये राठौरोंकी ओर दौड़ गया ।

पत्र भाटी सरदारके पास पहुँच गया । पढ़कर वह बुदबुदाया : "अफ़-सोस कि यह वीर युवराज कभी राजा नहीं होगा !"

राठौर युवराजने ढेर-सी अफ़ीम जयतुङ्गके पास भिजवा दी और उसे अमल करनेके लिए एक पहरका समय और दिया गया । अमल करनेके बाद दूसरा अमल करने तकके लिए पाहुओंका राजा सो गया ।

× × ×

दूसरे पहरकी चिलचिलाती धूपमें युद्धके लिए तत्पर भाटियों और राठौरोंका द्वंद्व-संग्राम आरंभ हुआ । सबसे पहले वीर शंखला महाराज अपना खड्ग घुमाते हुए जयतुङ्गके सामने आये । जयतुङ्गने हाथ जोड़कर नमस्कार किया ।

शंखला महाराजने कहा, "उस दिन मरुभूमिमें क्षणभरके लिए तुम्हें देखा था या आज देख रहा हूँ । तूफ़ान न आ जाता, तो उसी दिन निबटारा हो जाता । क्या मालूम था कि न्यायमें समय भी अन्तर नहीं डाल सकता ।"

"लेकिन तलवार डाल देती है," जयतुङ्गनें न्यायकें नामसे चिढ़कर कहा । "वार सँभालो, महाराज. . ." और खड्ग बज उठे ।

निमिष मात्रमें शंखला महाराजका सिर सारे मान-अपमान और न्याय की भावना संजोये, बालूके कणोंमें लुप्त हो गया ।

जयतुङ्ग चिल्लाया : "आगे बढ़ो, और कौन आता है ?"

राठौरोंकी पंक्तियोंमें सन्नाटा छा गया। शंखलासे बढ़कर कोई नहीं था।

"अच्छा, मैं ही आता हूँ," और जबतक भाटी सरदार उसके निश्चयको समझे वह दोनों हाथोंमें तलवार घुमाता हुआ राठौरोंकी पंक्तियोंके बीचमें धँसा चला गया। उसकी कल्पनाएँ जाग उठीं थीं !

"आगे बढ़ो!" भाटी सरदारने अपने साथियोंको ललकारा और द्वंद्व युद्ध बड़े पैमानेपर आरंभ हो गया। एक-एक राठौर, एक-एक भाटी। एक-एक हाथमें मोहिलोंके दहेजकी तलवारें और एक-एक हाथमें भाटियों-की तलवारें।

एक घड़ीके भीतर-भीतर अपने अपमानकी प्यास बुझानेके लिए आये तीन सौ शंखलाओंमेंसे एक भी जीवित नहीं बचा। एक भी भाटी विश्राम करनेके लिए नहीं लौट रहा था। वे बाज़ी जीत लेते थे और तुरंत दूसरी पकड़ लेते थे।

भाटी सरदार डोलेके पास जा खड़ा हुआ। "कोरम!" उसका स्थितिके कारण कठोर होता हुआ स्वर निकला। "कोरम, सूरजकी रोशनीमें ही अपना मुँह दिखा दो।"

डोलेका परदा कोरमने जल्दीमें खींचकर फाड़ दिया। उसमेंसे उसने देखा भाटी सरदार रणके सुन्दरतम वेषमें, दोनों हाथोंमें एक-एक लंबी तलवार सँभाले, घोड़ेकी पीठपर वीर मुद्रासे बैठा एकटक उसकी ओर देख रहा था।

देखते ही भाटी सरदारकी भौंह आश्चर्यसे चढ़ गई और उसके मुँहसे बेतहाशा निकला : "सुन्दर!" साथ ही उसका घोड़ा उछला और सरपट राठौरोंकी पंक्तिकी ओर तीरकी तरह छूट गया।

कोरमदेवी दूसरी बार डोला छोड़कर बाहर निकल आई।

कुछ देरमें अपने मृत स्वामियोंको पीठपर लिये घोड़े लौटने शुरू हुए। कोरमने सेवामें खड़े एक भाटी सेवकको संकेत किया और वह एक घोड़ेको

पकड़कर अपने साथ लाया। अश्वकी पीठपर हाथ-पैर लटकाये पड़े मृत वीरकी पोशाकने ही कोरमको आकर्षित किया था। वह मोहिलोंकी पोशाक थी। सेवकने शवको उतारा और उसका मुँह ऊपर किया।

"भैया!" और कोरम एक दहाड़ मारकर मेघराजके शवपर गिर पड़ी।

तबतक भाटी सरदार राठौरोंकी पंक्तियोंको तितर-बितर करता हुआ दूसरी ओर निकल गया था। वहाँसे उसका अश्व फिर लौटा। 'जय भवानी' के रणघोषके साथ वह एक बार फिर उन पंक्तियोंके बीचमें अपनी प्रियतमाकी दिशा लक्ष्य करके बढ़ा और बीसियों राठौरोंको बाल चटाता हुआ दूसरी ओर निकल गया।

"सरदार आ रहे हैं, देवी," सेवकने झुककर अत्यंत सहानुभूतिपूर्ण स्वरमें कहा, और कोरमदेवी पतिका स्वागत करनेके लिए खड़ी हो गई। भाटी सरदारका अश्व पास आकर रुका और उसने कोरमदेवीका हँसता आ मुँह देखा। किन्तु साथ ही उसकी दृष्टि मेघराजके शवपर पड़ी और उसकी आँखें कठोर होकर ऊपर उठ गईं "जय भवानी!"

कोरम देख रही थी। सूरजकी किरणोंसे आँखमिचौलीका खेल खेलती हुई भाटी सरदारकी लपलपाती हुई तलवारें, तीव्रगामी रथके पहियोंकी तरह घूमती हुई, फिर शत्रुके सैन्य शरीरमें धँसती चली गईं और उसके देखते-देखते फिर बाहर निकल आईं।

लेकिन तबतक कोरमदेवीके सामने एक और शव आ पड़ा था। उस शवके पास पंचकल्याण आँखोंमें विषम जगत्की समस्त करुणाएँ लिये खड़ा था और उसके नेत्र गरमीके कारण लाल हो गये थे।

उसके पास ही भाटी सरदारका अश्व रुका, और कोरम इसबार गंभीर थी। वह पतिकी प्रतिक्रिया निरखनेके लिये एकटक उसकी ओर देख रही थी।

सरदार सादूने एकबार पंचकल्याणपर, एक बार जयतुङ्ग पर, और एक बार अपनी सबसे बड़ी प्रशंसकपर निगाह डाली और उसकी आँखोंमें

रणका खून उतर आया। वह चिल्लाया, "कोरम, इस कथाको याद रखना। जय भवानी!"

राठौरोंके सामने पहुँचकर सादूकी तलवारें उठ गईं। "बंद करो, बंद करो...बंद करो इस खूनकी होलीको।"

धीरे-धीरे करके युद्ध डूबते हुए सूरजके साथ बंद हो गया। सादूका घोड़ा मचल रहा था। सरदार चिल्लाया, "अब युद्धका निबटारा होगा। कहाँ है अरिनकंवल?"

अरिनकंवल तुरन्त सामने आ गया। हल्की-हल्की मूंछें, रोबदार राजपूती चेहरा, मुश्की घोड़ा, भाटी सरदारने उसे देखा और जयतुङ्गकी सौम्य मूर्ति उसके सामने घूम गई। वह जयतुङ्ग, जो मृत्युसे छेड़खानी करके जीना जानता था और उसी खेलमें उसने अपने जीवनको होम दिया था। वह जयतुङ्ग जो हज़ारोंकी संख्यामें अड़े हुए शत्रुओंके बीचमें दोनों हाथोंसे तलवार चलाता हुआ कल्पनाओंके संसारमें विचरण करता था। उस जयतुङ्गकी याद करके भाटी सरदार चिल्ला उठा: "अब निबटारा होगा!"

"स्वागत है," अरिनकंवलने कहा। "प्रणाम भाटी, सरदार। मैं चाहता हूँ तुम थोड़ी देर विश्राम कर लो। हमारे हज़ारों जवान तुम्हारी तलवारके घाट उतर चुके हैं। तुमने अकेले ही अपने साथियोंकी संख्या पूरी कर ली है। हम थके हुए शेरको मारना नहीं चाहते।"

"जीता रहा, तो इस लोकमें, मर गया, तो स्वर्ग लोकमें मैं तुम्हारी दिलदारीकी कहानी सुनाऊँगा, युवराज। किन्तु निबटारा अभी होगा, इसी क्षण होगा। खड्ग उठाकर पहला वार करो," भाटी सरदारने कहा।

"यह नहीं होगा, भाटी सरदार। तुम थके हुए हो। यदि लड़ना ही चाहते हो, तो पहला वार तुम करो," अरिनकंवलने कहा।

इस पहल-पहलमें वीर राठौरने भाटी सरदारको कुछ साँसोंका विश्राम दिया। इसके बाद दोनोंकी तलवारें एक साथ उठीं, और बिना कुछ ऊहा-

पोहके एक-दूसरेके सिरोंपर बिजलियाँ बनकर गिर पड़ीं। भाटी सरदारकी बाहुओंमें केवल इस खेलका ही दम शेष रह गया था।

दूर खड़ी कोरम पछाड़ खाकर मरुभूमिकी रेतपर गिर पड़ी।

जब कोरमदेवीको चेतना आई, तो सब ओर शांति छा गई थी। चाँद निकल आया था और उसकी किरणें उसके अलंकृत हाथोंपर पड़ रही थीं। नीचे नरम बिछौना था और ऊपर वह आकाश था, जहाँ उसकी कल्पना अपने प्रिय नायकको खोज रही थी। वह तड़पकर उठ बैठी। फिर खड़ी हो गई।

केवल पचास जीवित भाटी उसके चारों ओर हाथ बाँधे खड़े थे। कराहट और दर्दके स्वर चारों ओर हवामें गूँज रहे थे। कोरमने चिल्लाकर कहा, "लाओ, एक तलवार दो!"

एक सेवकने अपनी तलवार प्रस्तुत कर दी।

कोरमने दायें हाथमें तलवार लेकर एक बार आकाशके चाँदको देखा और उसकी तलवार जैसे उस चाँदको चिढ़ानेके लिए उठी। फिर एक किरण की तरह उसके बायें हाथ पर टूटी और वह हाथ गदीले बिछौनेपर रक्त चुहचुहाता हुआ उसके शरीरके अलग होकर गिर पड़ा।

कोरमने धीमे किन्तु स्थिर स्वरमें कहा, "यह हाथ मेरे ससुरजीको देना, और कहना कि उनकी वधू उनके पैर छूनेके लिए पूगल नहीं आ सकी, लेकिन उसका चिह्न अवश्य आना था।"

फिर उसने सेवकको संकेत किया और उसने तलवार कोरमके हाथसे पकड़ ली। दूसरा हाथ आगे करके कोरमने कहा, "इसे भी, इसे भी, जल्दी!"

सेवक हक्काबक्का बना खड़ा रहा।

कोरमने कहा, "जल्दी करो! फिर मुझे मूर्च्छा आजायगी।"

और कोरमदेवीका दूसरा हाथ भी कटकर गिर पड़ा, थोड़ी देर पहले जिसका पीलापन चाँदनीके रंगको शरमा रहा था।

"यह हाथ मोहिलोंके चारणको देना। उससे कहना कि उसके देशकी बेटी ऐसी थी। अब...अब चिता...लगाओ..." और वह मूर्च्छित होकर खूनसे सने रेतके गदेले पर गिर पड़ी।

एक पहर बाद पतिके शवको गोदमें लेकर कोरम अग्निकी शिखाओंमें खो गई, क्योंकि वह एक ही साथ कुँवारी थी, वधू थी, और विधवा थी, और संसार कभी इतनी विचित्रताएँ एक साथ नहीं संभाल पाता।

पूगलके बृद्ध रावने उसके हाथको जलवा दिया और उसके स्थानपर एक झील बनवाई, जिसका नाम कोरमदेवीकी झील है। सन् १४०७ ई० में निर्मित यह झील आज भी गरमीके मारे राजपूतोंको शीतलता प्रदान करती है।

स्नेहकी शर्त

प्रसिद्ध मुग़ल आक्रमणकारी बाबरके छक्के छुड़ा देनेवाला महावीर राणा साँगा शायद कभी इतिहासमें याद न किया जाता, शायद कभी मुग़लों-का वंश हिंदुस्तानमें न फलता-फूलता, यदि उसीकी माँ झाली रानीसे उत्पन्न पृथ्वीराज स्नेहकी एक बड़ी विचित्र बाजीमें अपना सर्वस्व न लुटा बैठता, तब शायद दिल्लीके पृथ्वीराज चौहानके नामको लोग पृथ्वीराज सीसौदियाके नामसे याद किया करते ।

यह बाजी सोलंकी सरदार शिवरतन सिंहकी कन्या ताराबाईके साथ लगी थी ।

शिवरतनसिंहके पूर्वज अन्हिलवाड़ाके प्रतापी राजा थे । मध्यभारतसे निकाले जाकर बादमें थोदा रियासतसे भी अफ़गान सरदार लिल्लाह द्वारा भगा दिये गये थे । थोदा शिवरतनसे छीना गया था । अब वह अपने परिवार सहित बड़नौरमें आ गये थे । थोदाके छिन जानेकी कलक शिवरतन-सिंहके मनमें काँटेकी तरह चुभ रही थी ।

परिवारके संघर्षोंके बीच पली ताराबाई सहजमें ही शस्त्र-संचालनमें निपुण हो गई थी । बपौतीकी कलक ताराबाईके हृदयमें भी उतर आई थी । इसीलिए एक दिन सहसा राणा रायमलका तीसरा पुत्र, साँगा और पृथ्वीराजका सौतेला भाई, जयमल अपने कुछ साथियोंके साथ जब बड़नौर पहुँचा, और शिवरतनसिंहसे ताराके [illegible] माँग की, तो ताराबाईने कहला भेजा था, "थोदा वापस ला दो, तारा मिल जायेगी । नहीं तो जो हमारा थोदा हमें वापस लाकर देगा, तारा उसे बरेगी ।"

मेवाड़के राजकुमारके सामने मेवाड़के शरणागतका यह साहस ! जयमलने चलते-चलते शिवरतनसिंहको चेतावनी दी, "थोदा लेनेके लिए

तुम्हें मेवाड़से भिड़ना पड़ेगा, लेकिन इससे भी पहले तारा जयमलकी अंकशायिनी बनेगी।"

इस विकट अपमानसे शिवरतनसिंहका अंतर झुलस गया। ताव न रोक पाकर वह बोल उठा, "पहले उसका बाप यह देखना चाहता है कि उस अंकमें कितनी गरमाई है। जो तलवार ताराको ले जायेगी उसकी चमक तो दिखाओ, नन्हें राजकुमार..." और तलवारें खिच गईं।

कुछ ही देरकी कशमकशके बाद जयमलका शरीर भूमि पर फड़फड़ाने लगा।

× × ×

हफ़्तों तक बाप-बेटी बुर्जपर चढ़े चित्तौड़की ओरसे आता हुआ पथ निहारते रहे, जैसे पकी फसलपर किसान खड़ा काले-काले मेघोंका आगमन निरख रहा हो।

वे आये। दूरसे उड़ते हुए रेतके कण दिखाई पड़े। बाप-बेटी जल्दी-जल्दी बुर्जसे नीचे उतरे। सारी गढ़ी क्षणमात्रमें व्यस्त हो गई। फ़ाटक बंद कर दिये गये। थोड़ी-सी देरमें जीवनका मोह छोड़कर बाँके तैयार हो गये।

तबतक आनेवाली सेना फाटकके सामने पहुँच चुकी थी। उनमेंसे एक ने आगे बढ़कर बुर्जपर मुस्तैद खड़े प्रहरीसे कहा, "अरे, तुम लोग कैसे आदमी हो कि आनेवालेको देखकर दरवाजा बन्द कर लेते हो!"

"तुम लोग कौन हो, क्यों आये हो?" [illegible]।

"देखते नहीं हो, मेवाड़के युवराज राव पृथ्वीराजजी खड़े हैं।"

"रावजीको हमारी जुहार। पर पहले बताओ, रावजी क्यों आये हैं, तब द्वार खुलेगा?" प्रहरीने तनकर कहा।

"क्यों आये हैं, कैसी बातें करते हो? अरे, ऐसे ही आये हैं। अब तुम्हें क्या बताया जाये कि कैसे आये हैं? बोलो, खोलते हो कि नहीं?"

शिवरतनसिंह ओटमें प्रहरीके पास ही खड़े थे। प्रहरीने उनकी ओर उत्तरके लिए देखा। उन्होंने कहा, "कहो कि ऐसे ही आये हैं, तो अकेले गढ़ी-में आ जायँ, सेना बाहर ही छोड़ दें।"

प्रहरीने वही बात दोहरा दी ।

स्वामीसे पूछकर आगन्तुकने उत्तरमें कहा, "अच्छा, अच्छा, अकेले ही आ जायेंगे । हम कोई तुम्हारी मढ़ैयाको खा नहीं जायेंगे ।"

पृथ्वीराज और उनके साथ उनका चारण गढ़ीके भीतर ले लिये गये । सेनाने गढ़ीके बाहर ही पड़ाव डाला ।

जब तक मेवाड़का यह प्रसिद्ध योद्धा स्नान-ध्यानसे छुट्टी पाकर शिवरतनसिंहकी बैठकमें न आ गया, सबके दिल धक्धक् करते रहे । आते ही शिवरतनसिंहने फलाहार अपने हाथसे प्रस्तुत करते हुए पूछा—"कहिए तो रसोई अभी उपस्थित की जाये ?"

इसका अर्थ था कि यदि पृथ्वीराज रसोईको हाँ कर लेते हैं, तो शिवरतनका अन्न खानेको हाँ कर लेते हैं, और अन्न ग्रहण कर लेनेके अर्थ हैं कि पृथ्वीराज कम-से-कम भाईका बदला लेने नहीं आये हैं ।

"रास्ते भर ये लोग हमें चराते रहे हैं, इसलिए अन्न तो अभी नहीं पचेगा ।"

शिवरतनसिंहकी कनौतियाँ खड़ी हो गईं, कि अन्नका नाम अपने मुँहसे लेते ही पृथ्वीराजको कुछ भूखका अनुभव हुआ और उन्होंने स्वयं ही कहा, "लेकिन आपके आग्रहको टाला भी कैसे जाये ? ख़ैर, इसके बाद रसोई जीमेंगे ।"

काला बादल बिल्कुल साफ़ हो गया था । किसान अपनी मूँछों ही मूँछोंमें हँसा ।

रसोई जीम लेनेके बाद बात चली । जयमलका जिक्र न तो अब तक कहीं आया था, और न अब आ रहा था । पृथ्वीराजने कहा, "रावजी, सुना है आप बहुत अच्छे गुरु भी हैं । हमने एकसे नहीं, गाँव-गाँवसे यह बात सुनी है ।"

शिवरतनसिंह बातकी तह तक पहुँचकर ज़रा कुलमुलाये । "मैं जो

कुछ जानता हूँ अपने साथियोंको सिखा देता हूँ, किन्तु अपनी प्रसिद्धिकी बात मैंने पहलेपहल ही श्रीमान्‌के मुखसे सुनी है ।"

"बहुत विनम्र हैं आप," पृथ्वीराजने ज़रा गरदन टेढ़ी करके कहा । फिर मुसकराकर बोले—"जी तो यह चाहता है कि इस गढ़ीमें कुछ दिन रहकर हम भी आपसे कुछ सीखें । आखिर हमारी उमर ही क्या है, यही कोई बीस वर्ष । आप..."

शिवरतनसिंह पानी-पानी हो गये । जिसने सारे मेवाड़को एक सूत्रमें बाँध रखा था, जिसके नामसे मेवाड़की सरहदें काँपती थीं, वह पृथ्वीराज और बड़नौरके गढ़पतिसे कुछ सीखे, इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती थी ? शिवरतनसिंह बोले, "यदि बकरी शेरको कुछ सिखा सकती है, तो सेवक तैयार है । जो कुछ युवराज कहना चाहते हैं, उसे खोल कर कहनेकी कृपा की जाये, तो सेवक बड़ा अनुगृहीत हो ।"

पीठ शिवरतनसिंहकी ओर करते हुए सहास वाणीमें पृथ्वीराजने कहा—"हमें आप यह सिखाइये कि किस प्रकारके शब्द प्रयोग करके आपसे आपकी लड़की माँगी जाये । हमने सुना है कि जो आपसे आपकी लड़की माँगता है उसकी छातीमें आपकी आधी तलवार घुस जाती है !"

शिवरतनसिंह अचानक चौंक पड़े । एक क्षण सोचकर उन्होंने कहा, "यही बात थी, जिसे श्रीमान्‌ने एकसे नहीं, गाँव-गाँवके मुँहसे सुनी है ?"

"नहीं ।" पृथ्वीराजने कहा, "गाँव-गाँवसे हमने सुना है कि आपने ताराबाईको तो सब कुछ सिखा दिया है । हमने सोचा कि कुछ हम भी सीखें, तो फिर बराबरकी सतह पर आकर हम वह हाथ पकड़नेका दावा कर सकते हैं ।"

अब शिवरतनसिंहकी जानमें जान आई । तो अन्तमें वह विवाहका प्रस्ताव था । सारा भय दूर होते ही शिवरतनसिंहका जी चाहा कि पृथ्वीराज-को उठाकर अपनी छातीसे लगा लें । प्रकटमें उन्होंने कहा, "युवराज, प्रत्येक

लड़कीके बापको अपनी लड़की किसी-न-किसी को देनी ही होती है। मुझे यह सौभाग्य प्राप्त है कि जूतोंके तले घिसनेसे पहले ही भविष्य मेरे घर आया है। माँगनेवालेकी छातीमें वह तलवार नहीं घुसी थी, जंगलकी भयभीत हिरणीका सींग घुसा था। जब उसे बचनेकी राह न रही, तो वह क्या करती ?"

पृथ्वीराज एकदम घूमकर खिलखिला उठे। "तब तो हमारा पक्ष प्रबल है।"

"निश्चय ही आप हमें सबसे अधिक प्रिय हैं, युवराज। किंतु कुमारीकी एक शर्त है, और वह यह कि हमें अपनानेवाला भी हमसे उतना ही स्नेह करता है, जितना हम उससे करते हैं," शिवरतनसिंहने कहा।

प्रसन्न होकर पृथ्वीराज बोले, "यह तो प्रकट ही है कि वह न होता, तो हम क्यों सरहदें छोड़कर बड़नौर आते।"

"ठीक है, युवराज।" शिवरतनसिंहने कहा, "तो इस स्नेहकी गहराई का प्रमाण है थोदाकी वापसी।"

"ओह !" पृथ्वीराज भी गंभीर हो गये। "तो आप दोनों पिता-पुत्रीने स्नेहको किसी शर्तमें भी बाँध रखा है। लेकिन हमारा चारण, जो हमारे साथ आया है, कहता है कि स्नेहकी गति और धारा तो अबाध होती है। उसे किसी विशेष नियम और बन्धनमें नहीं बाँधा जा सकता। हमारा भी यही विश्वास है। यदि हमें स्नेह होगा तो हम थोदा क्या आकाशके तारे भी आपके लिए तोड़ कर ला सकते हैं। नहीं तो स्नेह करनेके लिए कोई किसीको मजबूर नहीं कर सकता, चाहे विवाह हो या न हो। हमारा चारण कहता है कि स्नेहरहित विवाह व्यभिचार होता है।"

"सेवक युवराजके विचारोंकी कद्र करते हुए नम्र निवेदन करना चाहता है कि हारा जुआरी स्नेहियोंपरसे भी अपना विश्वास खो बैठता है। श्रीमान् यदि प्रयत्न कर सकते हैं, तो दो दिन आगे या पीछे सब समान है। नहीं

तो ताराबाई पहले बेटा बनकर थोदा वापस लेगी, फिर बेटी बनकर बिदा होगी। उसमें इतना बल है।"

पृथ्वीराजने कुछ क्षण स्थितिपर विचार किया। फिर सिर उठाकर उन्होंने कहा, "रावजी, हम स्नेह करना जानते हैं। मेवाड़ जानता है कि हम सच्चे राजपूत हैं, और राजपूत जैसे अपनी शत्रुता नहीं भूलता, अपना स्नेह भी नहीं भूलता। किन्तु यदि हमारे स्नेहपात्र हमारा विश्वास नहीं कर सकते, तो हमारे पास उनको देनेके लिए स्नेहके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। हम स्नेहकी शर्तमें नहीं बँधेंगे, यह हमारा दृढ़ निश्चय है। यदि स्नेहबंधन हुआ, तो इसके बाद स्थितिके ज़रा भी अनुकूल होते ही हम आपकी इच्छा अवश्य पूरी कर देंगे। यदि स्थिति न हुई तो वह आपके सामने देखनेके लिए खुली होगी। तब कम-से-कम हम अपने वचनोंके परितापसे स्वयं ही तो न जलते रहेंगे, हमारा अंतर तो दोषरहित रहेगा। आप इसपर दो घड़ी सोच सकते हैं।"

शिवरतनसिंहको सोचते हुए छोड़कर पृथ्वीराज नाहर जैसे कंधोंको हिलाते हुए मस्त चालसे बैठकके बाहर चले गये। शिवरतनसिंहके लौह निश्चयको इस अपूर्व योद्धाने अपने सहज सिद्धान्तके दो ही प्रहारोंसे चलायमान कर दिया था। बादमें भीतर जानेपर पता चला कि ताराबाईने भी यह समस्त वार्त्तालाप पीछेके कक्षमें बैठकर सुना था। उससे पूछनेपर तो शिवरतनसिंह और भी विस्मित हुए। न जाने क्यों और कैसे वह पृथ्वीराज की बातोंसे पूर्णतया सहमत हो गई थी। उसकी माँने भी इसकी हाँमें हाँ मिलाई। उसका कहना था कि कन्यापक्षकी ओरसे बहुत अधिक शर्तें लगानी अच्छी नहीं होतीं। यदि लड़कीको अपने घरका ख्याल है, तो वह ससुराल जाकर भी रहेगा, और तब वह पृथ्वीराज जैसी महान् शक्तिसे कोई काम करानेके लिए अबसे कहीं अधिक अच्छी स्थितिमें होगी।

आखिर जिस शर्तके कारण जयमलकी जान गई, वह इस रूपमें परिवर्तित हो गई: यदि विवाहके बाद पृथ्वीराजने अपना वचन पूरा नहीं

किया, तो उन्हें राजपूत नहीं कहा जाएगा...और पृथ्वीराजका विवाह ताराबाईके साथ हो गया।

पृथ्वीराजके निवास-स्थान कोमलमेरमें आ जानेके बाद बहुत दिनों तक तारबाईको पतिदर्शन प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिला। इसका कारण था पृथ्वीराजकी राजनीतिक स्थिति। वास्तवमें वह युवराज नहीं थे। युवराज थे संग्रामसिंह या भावी राणा साँगा। राज्य किसे मिलेगा, एक दिन इसी बातपर तीनों भाइयोंमें संघर्ष हो गया था, और इसीके फलस्वरूप संग्रामसिंहकी एक आँख तीर लग जानेके कारण जाती रही थी। अपने घावोंकी पीड़ासे व्याकुल संग्रामसिंह अपने दोनों भाइयोंसे छिपे-छिपे जहाँ-तहाँ अपने दिन काट रहे थे। पृथ्वीराजसे सम्बन्धित लोग उनकी सर्वोपरि शक्तिको जानते हुए ही उन्हें युवराज कहा करते थे। इस शक्तिका मान पिताकी मृत्यु तक बनाये रखनेके लिए उन्हें रात-दिन सशस्त्र संघर्षोंमें जुटे रहना पड़ता था।

इन सबसे एकदिन शांति पाकर जब पृथ्वीराज कोमलमेर आये, तो सबसे पहले उन्हें तारबाईकी सुधि आई। इस व्याकुलतामें रणके वस्त्रोंसे सजे-सजाये ही पृथ्वीराज तारबाईके महलमें पहुँचे।

पतिका आगमन सुनकर तारबाई स्वयं महलसे बाहर आ गई। द्वारपर ही उसने उनके पग छुए। पृथ्वीराजने उसे कंधोंसे पकड़कर उठा लिया, फिर उसकी ठोढ़ीको ऊपर उठाकर पूछा, "अच्छी तो हो रानी?" कितना सुदीर्घ विरह था और कितना पराया-सा प्रश्न था!

तारबाई लज्जाके मारे चुप रही, और वह आगे-आगे उन्हें स्वयं ही महलमें लिवा ले गयी। दासियाँ सब खड़ी मुँह ही ताकती रहीं। राजा-रानीके दृष्टिसे ओझल होते ही उनमेंसे कई मुँहमें पल्ला दबाकर हँसी—रानी रँगीली है!

पलंगपर बैठाकर तारबाईने स्वयं ही उनके लिए जल प्रस्तुत किया। पृथ्वीराजने सब मुसकराते हुए ग्रहण किया। फल और बीड़े खाये, और तब

उन्होंने बातचीत आरंभ की : "तुम सोचती होगी, हम बड़े लापरवाह हैं। सोची हो न ?"

"अभी तक तो नहीं सोचा," ताराबाईने सलज्ज और नटखट उत्तर दिया।

"ऐं, अब तक नहीं सोचा ?" पृथ्वीराजने बनावटी आश्चर्यके साथ पूछा, "ख़ैर, तो धीरे-धीरे सोचने लगोगी।"

"मुझे आपसे ऐसी आशा नहीं है," रानीने कहा। "मेरा विचार है, आप कभी किसी चीज़को नहीं भूलते।"

पृथ्वीराजकी हँसी आई। "यह तो तुम्हारी बहुत अधिक आशा है हमसे। भूल ही तो मनुष्यका जीवन है। न भूलें, तो इतनी शत्रुताएँ इकट्ठी हो जायँ कि जन्म भर पिंड न छूटे, और इतना प्रेम एकत्र हो जाये कि उसके बोझसे मनुष्य दब जाए।"

ताराबाई भी हँसी। लेकिन न जाने क्यों उसके मनमें यह बात सुनकर कुछ बहुत उल्लास उत्पन्न नहीं हुआ। फिर भी उसने दबी ज़बानसे कहा, "किन्तु आप तो राजपूत हैं ?"

"सो तो हम हैं," पृथ्वीराजने अपने स्वभावके अनुसार उसी सहास मुद्रामें कहा—"लो, तुमने राजपूतकी बात याद दिला दी। सिरोहीके सरदार प्रभुसिंह राव हमारे बहनोई हैं। वह भी अपनेको राजपूत कहते हैं। लेकिन जानती हो वह हमारी बहनसे कितना बुरा सलूक करते हैं ? राजा होकर भी उन्होंने भीलोंको मात कर रखा है। वह उसे गालियाँ देते हैं। हम कन्या-पक्षसे हैं, नहीं तो, हमें दी गई एक गालीका मूल्य एक सिर होता है। कभी हमारे वंशमें इसीलिए लड़कियाँ होते ही दफ़न कर दी जाती थीं।"

बातके सिलसिलेमें दबी हुई इच्छाके प्रसंगपर न आ पानेके कारण ताराबाईने ज़बरबस्ती इसीमें रस लिया। "फिर आपने क्या किया ?"

"हमने अपनी बहनको ही समझाया कि स्त्रीका परमेश्वर उसका पति ही होता है। यदि वह अत्याचार करता है, तो उसे सह लेना होता है। नहीं तो राजरानी और साधारण कोल-भीलोंमें कोई अंतर......"

पतिकी बातको अंतिम सिरेके निकट ही काटकर ताराबाईने कहा, "आपको भीलोंसे इतना द्वेष क्यों है? वे भी अच्छे आदमी होते हैं। उनकी स्त्रियाँ अपने स्वामीके सभी कामोंमें हाथ बँटाती हैं। यहाँ तक कि लड़ाइयों आदिमें भी वह बराबरकी मेहनत करती हैं। मैंने उन लोगोंका जीवन निकटसे देखा है।"

पृथ्वीराजने दो क्षण रानीको आँखोंमें देखा। "तुम चाहती हो कि मेरे साथ तुम भी लड़ाइयोंपर जाया करो?"

"मैंने लड़ाइयाँ लड़ी हैं। मैं सदा अपने पिताका दाहिना हाथ रही हूँ। आप भी ले जायेंगे तो पीछे नहीं रहूँगी," ताराबाईने कहा।

"तब तो लगता है कि तुम्हें निकट रखे बिना काम ही नहीं चलेगा?' कहते हुए पृथ्वीराजने ताराबाईका हाथ पकड़कर निकट खींचा, किन्तु कुछ निकट आकर उसने हाथ छुड़ा लिया।

"आप तो राजपूत हैं," उसने तनिक गंभीर स्वरमें कहा, "और राजपूतोंको अपना वचन याद रहता है।"

दो बार राजपूत होनेकी चेतावनी पाकर पृथ्वीराजकी चेतना सजग हो गई। कुछ देर बातकी तहतक पहुँचनेमें लगाकर उन्होंने हाथ छातीपर बाँध लिये।

"रानी!" पृथ्वीराजने कहा, "तुमने फूलकी ओर बढ़ते हुए हमारे हाथमें काँटा चुभा दिया है। बड़ा सुरक्षित रख रखा था तुमने यह काँटा! हमने उस बातको याद रखनेका वचन दिया था, लेकिन इसलिए नहीं कि तुम कभी उलाहना देनेके लिए उसका उपयोग करो। हमें अपना वचन याद था, और याद है, किन्तु हमने तुम्हारे पितासे यह भी कहा था कि हम स्नेहके व्यापारमें किसी प्रकारकी शर्त उचित नहीं समझते।"

किन्तु रानी साधारण महलोंकी रानी नहीं थी, जो इतनी आसानीसे दब जाती। वह जंगलकी हिरणी थी, निर्वन्ध और मुक्त। जब तक मनकी कलक नहीं मिटेगी वह सभी तरहके विलाससे वंचित रहेगी। यही उसका निश्चय था। उसने कहा :

"मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। जब तक थोदा वापस नहीं मिलेगा, तब तक मेरे मनका चैन मुझे नहीं मिलेगा। किसी और चिन्तासे ग्रस्त मन कभी स्वस्थ स्नेह प्रदान नहीं कर सकता। इसीलिए मैंने इतनी बड़ी धृष्टता की थी—" और रानीकी आँखोंमें जल दिखाई देने लगा।

पृथ्वीराज एक फीकी-सी हँसी हँसे। "मन अस्वस्थ है, क्योंकि मनमें पहले पति-प्रेम नहीं है, पहले थोदा है। विवाहसे पहलेकी शर्त अभी ज्यों-की-त्यों है। केवल उसका रूप बदल गया है। पहले हमारी इच्छा थी कि हम बन्धनमें बँधे या न बँधें। विवाह करके हमारा वह मार्ग भी बन्द कर दिया गया है। हम पहले थोदा विजय करें, तो तारा हमारी है, नहीं तो दूर आकाशमें टिमटिमाते हुए तारेमें और हमारे तारेमें कोई अन्तर नहीं है। रानी, हमने आजतक जो कुछ चाहा है, वह नहीं हुआ, तो उसे हमने अपने बाहुबलसे प्राप्त कर लिया है। हम बन्धनसे घृणा करते हैं। शर्त हारका पहला चिह्न है। तुम्हारे लिए हम अपने बाहुबलका प्रयोग नहीं कर सकते। हम तुम्हारी शर्त्त भी पूरी करेंगे, लेकिन उसके बादकी अवस्था शायद तुम सहन न कर सको।"

पतिके मनम क्या है इसका तुरन्त अनुमान न कर सकनेके कारण ताराबाई आशंकासे काँप गई। पृथ्वीराज उठ गये। ताराबाईने उनका हाथ पकड़ लिया।

"मेरे मनकी दुर्बलता पर इतना क्रोध!" और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें बड़े ही करुण व दीन भावसे पतिके मुखपर जम गईं।

"क्रोध?" पृथ्वीराज फिर वही फीकी मुसकराहट चेहरेपर ले आये। "नहीं-नहीं, रानी, तुमने अपने मनकी बात कही है, और हमने अपने मन

की। तुम जीत गई। हम तो हारे हुए खिलाड़ी हैं। हम इसी समय थोदाके लिए प्रस्थान करेंगे।"

एक युगसे संचित अभिलाषाकी अकस्मात् पूर्ति! रानीका सारा दीन भाव, सारी करुणा, और भविष्यकी सारी चिंता, इस एक घोषणासे क्षणमात्र में तिरोहित हो गये। प्रसन्नताके उद्वेगसे उसका समस्त मुख लाल हो गया। मुँहसे निकला, "सच?"

एक लम्बी साँस लेकर पृथ्वीराजने केवल द्वारकी ओर देखते हुए कहा, "हाँ, सच ही।"

अनजानेमें ही रानीके हाथोंसे पृथ्वीराजका हाथ छूट गया था। वह तुरन्त रानीके कक्षसे बाहर हो गये।

× × ×

थोड़ी ही देरमें कोमलमेर सैनिक पदचापोंसे मुखरित हो गया। पृथ्वीराजके रणके वस्त्र जैसे उनके बदनपर पसीनेसे चिपके हुए थे, वैसेके वैसे ही चिपके रहे।

विशेष रूपसे पतिकी अनुमति मँगाकर ताराबाई भी मरदाने वस्त्रोंमें सज गई। कोमलमेरसे पृथ्वीराजकी रणवाहिनी थोदा पर आक्रमण करनेके लिए रवाना हो गई।

जिस दिन पाँचसौ जवानोंका यह काफ़िला थोदा पहुँचा, वह मुहर्रमका दिन था। थोदाके निकट ही शेष साथियोंको छोड़कर पृथ्वीराज और ताराबाई गढ़के भीतर पहुँच गये। बीच चौकमें अली भाइयोंके ताजिये उठ रहे थे।

"लोग जब धार्मिक जोशमें होते हैं, तब सबसे अधिक बेवकूफ होते हैं," पृथ्वीराजने ताराबाईके अश्वके साथ अपना अश्व भिड़ाते हुए कहा। "पीछेकी ओरसे आकर तुम इस भीड़में मिल जाओ। फिर मैं आता हूँ।"

ताराबाईका अश्व पीछेकी ओर दौड़ गया। तभी हसन-हुसैनके मातम-के नारोंके साथ ताजिये उठे और अफ़गान सरदारके निवास-स्थानकी ओर चले। अटारी पर खड़ा अफ़गान जलूसमें शामिल होनेके लिए भड़कदार वस्त्र पहन रहा था। उसने आते हुए जलूसके साथ दो सूरतें बिलकुल अलग-अलग-सी देखीं। निश्चित होनेके लिए वह ठहर गया। कुछ ही देरमें जलूस अटारीके नीचे आ गया, और अफ़गान सरदारने चिल्लाकर पास ही खड़े वज़ीरसे पूछा, "कौन हैं वे लोग ?"

लेकिन सरदारको उसका उत्तर कभी नहीं मिला। नीची अटारीके सामने आते ही पृथ्वीराजने अपना नेजा सीधा करके तेजीके साथ अफ़गान-की ओर फेंका। ताराबाईका तीर और पृथ्वीराजका नेजा एक साथ अफ़गान सरदार लिल्लाहकी छातीमें पेवस्त हो गये। एक चीख भी उसके मुँहसे न निकल सकी।

जबतक लोग चौंकें, दोनों घोड़े बेतहाशा सदर दरवाजेकी ओर दौड़े। चारण सदर दरवाजेके आसपास घूम रहा था। दोनों अश्वोंको आते देखकर वह पहले ही दरवाजेकी राह बाहर हो गया। तुरही बज उठी, और पृथ्वी-राजके गिने-चुने पाँचसौ जवान गढ़में पिल पड़े।

ताराबाईको भागनेका पहला अवसर मिला था। वह आगे-आगे थी। लेकिन द्वारके निकट ही अफ़गानका हाथी भी जलूसमें शरीक होनेके लिए मौजूद था। फीलवानने जब इस तरह दोनोंको इसी ओर आते और उनके पीछे अफ़गानोंको भागते देखा, तो उसने अक़्लका प्रयोग करके हाथी को ठेल दिया, और वह जीवित पर्वत ठीक सदर दरवाजेके आगे आकर खड़ा हो गया।

हाथीके निकट आकर ताराबाईका अश्व एक क्षणके लिए रुकता-सा प्रतीत हुआ, किन्तु तुरन्त ही वह उछला और उसके हाथके नेजेने हाथीकी सूंड़के दो टुकड़े कर दिये। वह विशालकाय जानवर चिंघाड़ता हुआ एक ओरको भागा, और साथ ही वे राजपूत सेनापति अपने सैनिकोंसे मिल गये।

कुछ ही घंटोंमें थोदा अफ़गानोंसे साफ़ हो गया ।

लड़ाई खत्म होते ही ताराबाईने इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई । कभी उसे पृथ्वीराजका सफ़ेद घोड़ा इधर-उधर दौड़ता प्रतीत होता, और कभी आँखोंसे ओझल हो जाता । पृथ्वीराज गढ़को लाशोंसे साफ़ करा रहे थे, और इसी प्रबन्धमें उस दिन वह ताराबाईसे नहीं मिल सके । उसी दिन उन्होंने बड़नौर समाचार भेजा, और रात होते न होते शिवरतनसिंह थोदा आ गये । आते ही उन्होंने पूछा, "कहाँ हैं रावजी ?"

चारणने इस प्रश्नका उत्तर दिया, "बलवेकी आशंकाका समाचार पाकर राव पृथ्वीराजजी रात ही कोमलमेरके लिए दौड़ गये थे ।"

पिताकी अगवानीके लिए आती हुई ताराबाईने यह हाल सुना । सुनकर वह सन्न रह गई । क्या वह अब इस योग्य भी नहीं रही कि उसका योद्धा पति कहीं जाये और उसे बताकर भी न जाये ?

पिताको भलीभाँति गढ़ थोदामें प्रतिष्ठित करके दोपहरसे पहले ही चारण और उसके साथियोंके साथ ताराबाई कोमलमेरके लिए चल दी । वहाँ पहुँचने पर पता चला कि कोमलमेरमें कोई बलवा नहीं हुआ था, और पृथ्वीराज अपने बाग़ी काका सूरजमलके पीछे-पीछे सरहदकी ओर जंगलोंमें निकल गये हैं ।

ताराबाई एकांत कक्षमें जाकर अपना सिर हाथोंमें पकड़कर बैठ गई । उसे याद आने लगे इसी कक्षमें पृथ्वीराजके वे अन्तिम शब्द, 'हम तुम्हारी शर्त्त पूरी करेंगे, किन्तु उसके बादकी अवस्था शायद तुम सहन न कर सको ।' कहीं उस अवस्थाका आरम्भ तो नहीं हो गया ।

ताराबाई सही अनुमान पर पहुँची थी, लेकिन पानी सिरसे गुजर जानेके बाद । आगे आये हुए दो साल तक राजपूत पृथ्वीराजको अपने बाग़ी चाचासे फ़ुरसत न मिली ! दोनों योद्धा थे, और दोनों हँसोड़ थे । जब कभी

थोड़ा-सा विश्राम लेने पृथ्वीराज कोमलमेर आते, तो रानीको पता लगते न लगते फिर वापस लौट जाते।

ताराबाईने ये लम्बे ढाई साल सुहागके वैधव्यमें काटे।

☒ ☒ ☒

लेकिन पृथ्वीराजको भी इस बीच चैन नहीं मिला। उन्हें अपनी हार पर क्षोभ था। लेकिन कभी-कभी मन विद्रोही हो उठता। इसी प्रकारके एक प्रबल विद्रोहसे प्रेरित होकर वह एक दिन लम्बे समयके लिए कोमलमेर में रहनेका इरादा करके आये, और इस बार मैकेसे ताराबाईके साथ आई दासीने उन्हें दीवानखानेमें पकड़ लिया।

"रानीजी कहती हैं कि पिंजरेमें बन्द मैनाको इस प्रकार घुला-घुलाकर क्यों मारते हैं? एक दाना ज़हरसे बुझा हुआ भेज दें कि मैना तड़पना छोड़-कर आरामसे सो जाये।"

पृथ्वीराजने शांतिके साथ रानीका भिजवाया उलाहना सुना। फिर मसनदसे उठकर उन्होंने उत्तर दिया, "रानीसे जाकर कह कि मैना तो जीत गई है। उसे सोनेकी ज़रूरत क्या है? हाँ स्नेह हारा हुआ सुग्गा अपना दर्द छिपा सके, वह जगह रानी बता सकें, तो सुग्गा अपने दिन ज्यों-त्यों करके काट तो लेगा।"

दासीने जाकर पृथ्वीराजकी बात जैसीकी तैसी ताराबाईको सुना दी। सुनकर ताराबाई पहले तो खूब रोई फिर उसने दासीसे कहलवाया, "जा, उनसे कहना कि उस दर्दको छिपानेकी जगह तो बेचारी मैनाके मनमें है। पर सुग्गाकी सूरत भी देखनेको न मिले, तो ग़रीब मैना अपना सिर पिंजरेकी तीलियोंमें ही मार-मार कर जान दे देगी। उनसे पूछना कि जब स्नेहमें शर्त्त नहीं होती, तो हार-जीत कैसे होती है?"

इस बार जब दासी उत्तर लेकर गई, चारण सूरजमलका पता न लगने-का समाचार लेकर पृथ्वीराजके पास आ बैठा था। दासीने उसीके सामने रानीकी बात कह सुनाई।

चारण पहले बोला, "मैं कुछ कहूँ, अन्नदाता ?"

"कहो," पृथ्वीराजने भौंह ऊँची करके कहा ।

चारण बिना हिचक बोला, "रानीजी सच कहती हैं । जो व्यक्ति स्नेहमें शर्त्त स्वीकार नहीं करता, वह हार-जीत भी नहीं मानता । स्नेह सदा एक पवित्र धारा है, जो मनकी वायुसे टकरा-टकराकर स्वच्छन्द और अबाध गतिसे बहती है । जब उसकी गति रुक जाती है, या ज़बरदस्ती रोक दी जाती है, तो स्नेहका निर्मल जल सड़ने लगता है, और वह दोनों पक्षोंमें से किसीको भी लाभ नहीं पहुँचा सकता ।"

"ठीक है," पृथ्वीराजने कक्षकी कड़ियोंकी ओर देखते हुए मानो अपना अतीत झाँककर कहा, "हम तुम्हारे इस कथनको मानते थे । लेकिन लोगोंने हमें मानने नहीं दिया । हमें शर्त्त स्वीकार करनी पड़ी, क्योंकि हम बँध चुके थे । लेकिन एक राजपूत अपने विश्वासका हनन होते कैसे देखे ? हम संयम साध कर अपने मनको सांत्वना दे रहे हैं ।"

"लेकिन वह नहीं मिल रही है" चारण तुरन्त बोल उठा । "न मिल सकती है, अन्नदाता । जिस समयका कोई सुखद उद्देश्य नहीं होता, वह स्वयं साधनेवालेको भस्म कर देता है । आप भी इसमें भस्म हो रहे हैं ।"

मुँह लगे चारणके सिद्धान्तका कोई उत्तर पृथ्वीराजके पास नहीं था । उसने पृथ्वीराजकी मानसिक स्थितिका सही दिग्दर्शन किया था । उनकी ओर अपलक दृष्टिसे निहारती हुई दासी किसी सुखद संवादकी प्रतीक्षामें सीधी खड़ी थी । नीची गरदन किये पृथ्वीराजने सरल और सीधे शब्दोंमें कहा, "चारण, तुम हमारे मनके भावको नहीं समझते । हमें चोट खानेकी आदत नहीं है....किंतु हम आज रानीके मंदिरमें जायँगे ।"

सुनते ही दासीने शीश नवाया, और नौ-दोग्यारह हो गई । चारण भी उठ गया, "अब मुझे आज्ञा हो, अन्नदाता । आपने सही औषधि निश्चित कर ली है । उसके परिणाम पर मुझे पूरा-पूरा विश्वास है ।"

"जाओ," पृथ्वीराजने उसे अनुमति दे दी। जब तक उसकी पीठ दिखाई देती रही, वह उसे देखते रहे। उसकी पीठपर मानो उनके मन के द्वंद्वके अमिट अक्षर लिखे हुए थे।

दासीके मुखसे पृथ्वीराजका निश्चय सुनकर ताराबाई हर्षसे नाच उठी। आज उसके बिछड़े हुए कंत आयेंगे। उसने सेविकाओंको एकत्र किया। "मेरा सिंगार करो। नई चूड़ियाँ पहनाओ। महावर लगाओ। मुझे सजा दो। ऐसी सजा दो कि फिर चाँद तारेको छोड़कर अँधेरा न कर जाये।"

लेकिन भावीका विधान ताराबाईके लिए कुछ और लेकर आ रहा था। संध्या समय जब दीपक जल उठे, और ताराबाई प्रज्वलित और निर्धूम तारा बनी ड्योढ़ी पर प्रतीक्षामें जाकर खड़ी हुई, चारण दिखाई दिया।

उसके निकट आते ही रानीने पूछा, "तुम! युवराज कहाँ हैं?"

"युवराज?" चारण खोया-खोया-सा बोला। फिर आँखें नीचे भूमि पर टिकाकर उसने स्वयं ही अपने खोये-से प्रश्नका उत्तर दिया,

"मनकी लड़ाईके दूसरे पक्षको सहारा देनेके लिए एक कुमुक आ गई, और वह उन्हें ले गई। आज वह नहीं आयेंगे।"

"आज वह नहीं आयेंगे!" रानी आश्चर्य और शोकसे अभिभूत होकर चिल्लाई। "क्या कह रहे हो? कौन आया, कौन ले गया? साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहते?"

"सिरोहीसे रानी बहनकी एक बड़ी दर्द भरी चिट्ठी आई थी। सरदार साहबने उनपर इतना जुल्म ढाया है कि मुँहसे कहा नहीं जा सकता। वह कुसुम्बा पीकर उन्हें मारते-पीटते हैं। उन्हें पलंगके नीचे ज़मीनपर सोनेके लिए विवश करते हैं। वह रात-दिन उन्हें यह भुलानेकी कोशिश करते रहते हैं कि वह राव पृथ्वीराजकी बहन हैं। रावजी सरदार प्रभुराव को सीख देनेके लिए उतावले हो उठे थे।"

सुनकर ताराबाई जहाँकी तहाँ, स्थिर जड़की तरह खड़ी रह गई। उसकी आँखें अन्तरिक्षमें स्थिर हो गईं। चारणने वह दशा नहीं देखी।

चुपचाप भूमि पर दृष्टि गड़ाये वह फिर बोला, "जानेको तो रावजी सुबह जा सकते थे, किंतु हारको बहुत अधिक अनुभव करने वाला भावुक खिलाड़ी जरा-सा बहाना पाते ही मैदानसे भाग लेता है।"

"चारण !" सहसा रानी चिल्लाई। चारण चौंक गया। नज़रें ऊपर उठा कर उसने देखा कि रानी रोती हुई पीछे मुड़ी और महलके अंतरीय भागकी ओर भाग चली। ओटसे भी कितने ही क्षणों तक रानीकी दूर होती हुई रुदन-ध्वनि सुनाई पड़ती रही।

× × ×

दूसरा पक्ष सहारा पाकर पृथ्वीराजको प्रेयसी पत्नीसे होनेवाले प्रथम मिलनसे सहसा दूर खींच कर तो ले गया, किंतु स्नेहकी भावनासे ओतप्रोत पहला पक्ष भी उनके पार्थिव मनमें बैठा-बैठा साथ-साथ गया। इससे जो क्षोभ और क्रोध उदय हुआ वह तीव्र और अपूर्व था। शेर और झुँझलाया हुआ ! तीरकी तरह पृथ्वीराज बहनोईके दरबारमें पहुँचे, और जाते ही चित्तौड़ी तलवार उसके गलेसे लगा दी।

पतिके संभावित अन्तकी सूचना पाते ही बहन दरबारकी ओर दौड़ी, पति-प्रेम फिर आड़े आया, और वह भाईके चरणोंपर गिर पड़ी। उसके सुहागकी रक्षा हो।

बाधापर बाधासे क्षुब्ध पृथ्वीराजने कहा, "दुष्ट, यह चित्तौड़की साध्वी ललना है। इसके जूते अपने सिर पर रख और इसके पैरोंपर गिरकर गिड़गिड़ा। तेरे प्राण बच जायेंगे।"

और सिरोहीके अभिमानी सरदार प्रभुरावने अपनी जीवनरक्षाके लिए यह भी किया। पृथ्वीराजने उसे क्षमा कर दिया।

स्नेहके अभिमानी पृथ्वीराजके सम्मुख इस बुरी तरह एक विरोधीके झुक जानेके कारण मन तनिक हलका हो गया, और उनके मुँह पर तबतक हास छाया रहा, जब तक कि वह सिरोहीमें ठहरे रहे। पाँच दिन तक वह बहनोईके सम्मानित, गले-मिले, अतिथि रहे। पाँचवें दिन जब वह चलने

लगे, तो बहनोईने उन्हें प्रीतिभोज दिया, अपने अपराधोंकी फिर क्षमा चाही, और आग्रह करके खिलाया-पिलाया। उसे अभयदान देकर पृथ्वीराज सिरोहीसे अपने स्नेह-मिलनकी यात्रा और तीव्र आकांक्षा पूरी करनेके लिए तेज घोड़ेपर सवार होकर कोमलमेरकी ओर उड़ चले।

किन्तु मामादेवीकी समाधिसे आगे उनके पग न बढ़ सके। आग्रह करके खिलाये-पिलाये प्रीतिभोजमें दिया गया विष इतना तीव्र था कि पृथ्वीराज अश्वसे गिर पड़े। दीवानने उठाकर वृक्षकी छायामें लेटाया। "क्या बात है, अन्नदाता ?"

धीमे स्वरमें पृथ्वीराजने कहा, "प्रभुरावने विष दिया है। देर न करो। कोमलमेर जाओ, तुरन्त तेजीसे...रानीसे कहना..."

बिना आगेकी बात सुने, घबराये सैनिकोंके हाथों पथ्वीराजको सौंप कर दीवान उन्हींके अश्वपर चढ़कर हवाकी तरह कोमलमेर पहुँचा। समाचार सुनते ही अभागिनी मूर्च्छित हो गई।

वृद्ध राजवैद्यको घोड़ेपर चढ़ा और रानीको उनकी कमरमें बँधवाकर दीवान और चारण आशंकित हृदय लिये हुए वापस समाधि पर पहुँचे। हवा लगनेसे रानी राहमें ही चेतन हो गई थी। किन्तु इतने अन्तरमें उसके नेत्रों से अपार जल बह चुका था।

डुपट्टेका बन्द खुलते ही ताराबाई दौड़कर पतिके चरणोंपर गिर पड़ी। कराहते हुए पृथ्वीराजने कहा, "वहाँ नहीं, यहाँ।"

रानी तुरन्त उठकर उनके मुँहके पास जाकर एकटकसे उन्हें करुण दृष्टिसे निहारने लगी। राजवैद्य जो नाड़ी पकड़कर बैठा, तो फिर बैठाका बैठा ही रह गया था। उसकी ओर एक क्षण देखकर कष्टसे पृथ्वीराजने मुँह ताराबाईकी ओर किया और हल्की आभासे मुसकराये, "रानी, इस शर्तमें तो हम दोनों ही हार गये...;"

लेकिन रानी न कुछ सुन सकती न कह सकती थी। वह तो मानो निपट जड़ हो गई थी।

संध्या समय एक चिता मामादेवीकी समाधिके पास और जल उठी, जिसमें ताराबाई, पतिका सिर गोदीमें लिये, अपना पावन तन और विरही मन फूँक रही थी ।

सिरोहीसे कोमलमेर वाली राह पर, मामादेवीकी समाधिके बिलकुल निकट, राजस्थानके पथिक आज भी एक छोटी-सी आडम्बरहीन समाधि देखते हुए गुजर जाते हैं ।

—:०:—

हाथियोंकी चोरी

अपने देशवासियोंसे करारी हार खाकर बाबर हिंदुस्तान आया। पानीपतकी रणस्थलीमें उसने लाखों आदमियोंको शहीद बनाकर, उनकी शहादतके फलस्वरूप अपने आप ग़ाज़ीका पद ग्रहण किया और सुलतानकी जगह बादशाह कहलानेकी व्यवस्था दी। लेकिन उसे हिंदुस्तान किसी भी ओरसे अच्छा न लगा।

"यहाँकी नदियोंमें वे मौजें नहीं हैं, यहाँके बाग़ोंमें वह बहार नहीं है, यहाँके पहाड़ोंमें वह रंग नहीं है, जिसके लिए काबुल मशहूर है। यहाँके आदमी कलावंत नहीं हैं," लाशोंके ढेरके बीचसे गुज़रते हुए बाबरने शाही सेनापति उस्तादअलीसे कहा।

"जी, जहाँपनाह! लेकिन यहाँके आदमी अपने देशको प्यार करते हैं। उन्हें भी अपनी नदियों और पहाड़ोंसे प्रेम है। वे अपने मनोरंजनके लिए बाग़ लगाते हैं, और यहाँकी मिट्टी सोना उगलती है। लोग कहते हैं कि हिन्दुस्तान जादूका देश है। खुदा आपकी हकूमतको हिन्दुस्तान पर बनाये रखे, आनेवाली शाही पीढ़ियाँ शायद जहाँपनाहसे सहमत न हो सकें।"

बाबर उपेक्षासे हँसा। उसी दिन उसने अपने संस्मरणोंमें अपनी उस क़ीमती रायको टाँक दिया। तभी चोबदारने उपस्थित होकर विनय की, "हाथियोंका एक सौदागर हुजूर जहाँपनाहकी कदमबोसी चाहता है।"

"दरबारमें हाज़िर किया जाय!" आज्ञा हुई।

दोपहरको दरबार लगा। सौदागरने आगे बढ़कर झुकते हुए कहा, "श्रीमान्की प्रतिभा दिनदूनी रात-चौगुनी बढ़े।"

"क्या अर्ज़ है?" वज़ीरने पूछा।

"श्रीमान्," सौदागरने कहा, "यह अकिंचन हाथियोंका व्यापारी है। श्रीमान्‌की इस दीन प्रजाके पास दो हाथी ऐसे हैं, जिनकी तुलना केवल इंद्रके ऐरावतसे की जा सकती है, जिसकी प्रशंसा बहुतोंने सुनी है, देखा किसीने नहीं है। इस तुच्छ दासकी इच्छा है कि वे दोनों हाथी शाही हाथीख़ानेको सुशोभित करें।"

वज़ीरने कहा, "जहाँपनाह उन्हें देखना चाहेंगे।"

"दासके सिर आँखोंपर। सेवक प्रस्तुत है," हाथियोंके सौदागरने स्वीकारोक्तिमें विनय की।

"शामके समय दोनों हाथी दरबारके सामनेवाले मैदानमें पेश किये जायँ!" वज़ीरने आज्ञा दी।

"यह अधम क्षमा चाहता है," व्यापारीने नमते हुए फिर विनय की। "सेवकने कहा है कि इंद्रके ऐरावतको आज तक किसीने देखा नहीं है। दासने ऐरावतके साथ उन हाथियोंकी तुलना अक्षर-अक्षर सही की है। नाशवान् मनुष्यमें इतनी शक्ति नहीं है कि वह उन्हें देख सके। यह किंकर भी जब उनके पास जाता है तो आँखोंपर पट्टी बाँधकर जाता है। उन्हें केवल वही देख सकता है, जो पादशाह हो और गाज़ी हो। सेवक अपनी धृष्टताकी फिर क्षमा चाहता है।"

इस पर सारे दरबारमें सन्नाटा छा गया। ऐसा आजतक न किसीने देखा था, न सुना था। गर्वसे बाबरका हाथ अपनी मूँछ और दाढ़ीपर फिर गया। वह पादशाह था और गाज़ी था। एकमात्र उसीमें इतनी क्षमता थी कि जिस वस्तुको संसार देखनेकी शक्ति नहीं रखता था, उसे वह और केवल वह देख सकता था।

आज्ञा हुई कि संध्या समय बादशाह सलामतका सम्मानित व्यक्तित्व स्वयं उन हाथियोंका निरीक्षण करेगा।

संध्या हुई, दीपक जल उठे। अहंकार और उल्लाससे भरा बाबर केवल वज़ीरको साथ लेकर अपने गाज़ी और पादशाह होनेके दैवी

प्रमाणको निरखने चला। नगरसे बाहर निकलकर सौदागरका विशाल तंबू दृष्टिगोचर हुआ, जिसके पीछे सौदागरने व्यापारके लिए एक-से-एक बढ़िया नसलके हाथी रख छोड़े होंगे।

तंबूके निकट पहुँचकर सौदागर वज़ीरकी ओर देखता हुआ खड़ा रह गया। बादशाहने इशारा किया और वज़ीर दो क़दम पीछे हट गया। बादशाह और सौदागर अकेले तंबूकी ओर चले।

इसी बीच सौदागरने अपने मालकी प्रशंसाकी झड़ी लगा दी: "उन हाथियोंकी सूंड़ें इतनी लंबी हैं कि वे एक साधारण हाथीको अपनेमें पूरा लपेट सकती हैं। उनका क़द पर्वतके समान है। उनकी सूंड़ोंसे हर समय साँसोंके साथ एक अद्‌भुत सुगंध निकलकर चारों ओर छाई रहती है। उनके साँस लेनेकी हलकी-हलकी ध्वनि ऐसी लगती है जैसे दूरपर सुहावने ढोल बज रहे हों। उनकी पीठ इतनी चौड़ी है कि उनपर दो-दो घोड़े आसानीसे बैठ सकते हैं।"

बाबर हैरतमें आगे बढ़ता चला गया। तभी उसके दिमाग़में एक अनोखी खुशबू भरनी आरंभ हो गई। कानोंमें ढोलका एक ऐसा राग सुनाई देने लगा जो उसने कभी काबुलमें स्वप्नमें भी नहीं सुना था। अभी वह इसका आनंद ले ही रहा था और उसका मस्तिष्क तथाकथित हाथियोंका नक़्शा खींचनेमें मस्त था कि सौदागरने तंबूके सामनेका परदा खींचकर अलग कर दिया और अपनी आँखोंपर पट्टी बाँध ली।

आँख फाड़कर बादशाहने हाथियोंके झुण्डपर दृष्टि दौड़ाई।

सौदागरने कहा, "जहाँपनाह, गाज़ी, पादशाह बाबर, उधर कोनेमें, वे दो हाथी...जिनकी सूँड़ें इतनी लंबी हैं..."

बाबर उछल पड़ा। उसके सामने दो हाथी, ऐन सौदागरके वर्णनके अनुसार इस तरह किलोलें कर रहे थे जैसे उनमें कुछ भी भार न हो। सुगंधसे उनका दिमाग़ तर हो चला था और कानोंमें उनकी साँसोंकी मद्धिम ध्वनि गूँज रही थी। बादशाह विभोर हो गये। पूछा, "इनकी क़ीमत?"

"सेवकको शाही महावतकी पदवी और नक़द एक करोड़ सोनेकी दीनारें।"

"मंजूर है," बाबरने प्रसन्नतासे कहा।

नये शाही महावतने दोनों हाथी शाही हाथीखानेमें बंद होनेकी सूचना दी। नित्यप्रति अनिश्चित परिमाणमें घी और आटा हाथियोंकी ख़ूराकके लिए भंडारसे जाने लगा। शाही हाथीखानेके फाटक प्रत्येक ऐरेग़ैरेके लिए बंद कर दिये गये।

कुछ दिनोंतक बादशाह बाबर रोज़ झरोखेसे उन हाथियोंको देखने जाते और उस नैसर्गिक सुगंध और रागका रस लेते, जो उन हाथियोंसे उत्पन्न होती थी। हाथियोंको देखना ही सौ तमाशे देखनेके बराबर था, और सबसे बड़ा संतोष यह था कि गाज़ी और पादशाह होनेके नाते केवल उन्हें ही यह अधिकार था कि वह उस स्वर्गीय छटाका उपभोग कर सके।

× × ×

एक दिन बादशाह दरबारमें उन हाथियोंका रूप वर्णन कर रहे थे कि दरबानने सूचना दी, "जहाँपनाह, एक चोर श्रीमान्के सम्मुख उपस्थित होना चाहता है।"

"उपस्थित किया जाय!" वज़ीरने आज्ञा दी।

चोरने आते ही जयकारसे दरबारको गुँजा दिया और बोला, "श्रीमान्की राजव्यवस्था इतनी उच्चकोटिकी है कि चोरोंको चोरी करनेकी आवश्यकता नहीं रह गई है। किन्तु [illegible] गई है कि उनकी कला यों ही बिना प्रदर्शनके छटपटा कर मर जायगी।"

बादशाह और दूसरे दरबारियोंको इससे बहुत आश्चर्य हुआ। काबुलमें चोरीको घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता था। बाबरने वज़ीरसे पूछा, "क्या हिंदुस्तानमें चोरीको भी एक कला समझा जाता है? हमारा विचार है कि यह कायरोंकी वृत्ति है।"

वज़ीरने कहा, "जहाँपनाहने फ़रमाया था कि हिंदुस्तानमें कलाकार नहीं हैं। शायद यह व्यक्ति इसी चीज़को कलाके रूपमें प्रस्तुत करे।"

पूछा गया कि चोर क्या चाहता है ।

उस व्यक्तिने कहा, "मैं अपनी कलाका प्रदर्शन चाहता हूँ । श्रीमान्के राज्यमें जो वस्तुएँ सबसे अधिक मूल्यवान् समझी जाती हैं, यह कलाकार उनकी भी चोरी कर सकता है ।"

स्पष्टतः उसका संकेत हाथियोंकी ओर था । यह कैसे संभव था कि कोई व्यक्ति हाथियोंको चुरा सके ? वे जेबमें नहीं डाले जा सकते थे कि कोई उठाये और लेकर भाग जाय । उन्हें पादशाह और गाज़ीके अतिरिक्त साधारण मनुष्य देख भी नहीं सकता था । फिर भी, यदि कोई इसका दम भरता है, तो यह बड़ी अद्भुत चोरी होगी ! लेकिन क्या इतनी क़ीमती और अनोखी वस्तु चोरी करने दी जाय ? सारी असंभावनाओंके होते हुए भी हो सकता है यह व्यक्ति सफल हो जाय । यह हिन्दुस्तान बड़ा अद्भुत और मनोरंजक प्रतीत होता जा रहा है ! यहाँ जब ऐसे हाथी हो सकते हैं, तो ऐसे चोर भी हो सकते हैं ।

बाबरने कहा, "अच्छी बात है, नौजवान, तुम्हें एक शाही हाथी चुरानेकी इजाज़त है ।"

तुरंत फ़रमान जारी हो गया : "हाथीख़ानेके चारों ओर सेनाका पहरा लगा दिया जाय । उसका मजबूत लोहेका फाटक तालेबंद कर दिया जाय ।"

यह सब प्रबंध देखकर नया शाही महावत ठट्ठे मारकर हँसा । उसके हाथियोंको मनुष्य नहीं चुरा सकता, क्योंकि वे ऐसी जगह रहते थे, जहाँ किसीकी पहुँच असंभव है !

सारी रात पेड़का पत्ता तक नहीं खड़का । चोरके लिए यह रात क़यामतकी रात थी । एक सिपाहीका वेश धरकर वह पहरेदारोंमें मिल गया । एक चक्कर लगाता और फाटकमें लगी एक हिलती हुई कीलको एक झटका दे देता । बारह बजे घड़ियाल बजने लगा और उसके हाथकी नन्हीं हथौड़ीकी ग्यारह चोटें कीलपर पड़ीं—कील उखड़कर अलग जा पड़ी ।

एक कील निकल जानेसे फाटकमें हुए सूराखकी राह उसने भीतर देखा ;

हाथियोंकी स्थिति देखनी आवश्यक थी। उसी क्षण वह चकराकर भूमिपर बैठ गया। "यह क्या! यह भारी सेना किसकी रक्षा कर रही है? क्यों इतना कष्ट उठाया जा रहा है?" उसने अपना निश्चय बदल दिया और हँसता हुआ नया प्रबंध करनेके लिए चला गया।

सेनानायकने दरबारमें सूचना दी, "सारी रात एक चिड़ियाने भी पर नहीं मारे। एक कुत्ता तक सेनाके भीतर नहीं घुसा। किसीने कोई मक्कारी साधनेकी चेष्टा नहीं की। श्रीमान्, चोरी नहीं की गई।"

उसके पीछे आकर उपस्थित हुए चोरने विनय की, "श्रीमान्, दासने एक हाथी चोरी कर लिया है।"

सेनानायक, दरबारी और स्वयं बाबर चोरका मुँह ताकते रह गये। शाही महावतको बुलाकर वास्तविकता पूछी गई। उसने कहा, "यह व्यक्ति झूठ बोलता है। हाथीखानेमें दोनों हाथी ज्यों-के-त्यों हैं।"

चोरने सिर झुकाया, "सेवकका काम केवल चोरी करना है। चोरीका काम निबटानेके बीचमें मैंने अवश्य कई बार झूठ बोला है, लेकिन चोरी कर चुकने पर मैं न आजतक पकड़ा गया और न झूठ बोला।"

बादशाह बहुत बिगड़े। "हम स्वयं हाथीखानेका निरीक्षण करेंगे।"

चोरने कहा, "दासकी विनय है कि निरीक्षणके समय यह महावत श्रीमान्के साथ न रहे, बल्कि सेवकको यह अधिकार प्रदान किया जाय।

महावतके विरोध प्रकट करनेसे पहले ही बाबरने कहा, "स्वीकार है।"

अमीरउमराओंको एक स्थानपर छोड़कर बादशाह चोरके साथ हाथीखानेको देखनेके लिए झरोखेकी ओर चले। चोर विनय करता चला, "देखिए, श्रीमान्, शाही महावतने कितना बड़ा झूठ बोला था! पचास लाख सोनेकी दीनारोंका वह सुन्दर हाथी ग़ायब हो गया और अभी वह इतनी बड़ी हानिको छुलावेमें डाल रहा था। उसने कलाका अपमान करना चाहा था। वह तो कहिए कि हाथीको कलाकारने श्रीमान्की अनुमतिसे

चोरी किया था; नहीं तो यदि और कोई कलापारंगत उसे उड़ा लेता तो क्या होता !"

उसके वर्णनका ढंग और कलापर अधिकारके अहंकारकी अभिव्यक्ति इतनी दृढ़ थी कि बादशाहको अनुभव हुआ कि एक हाथी चला गया है। और इस अनूठे कलाकारकी बातोंमें कुछ वज़न है।

सहसा तुरही और ताक़तवर ढपड़ोंकी आवाज़ें कानोंमें पड़नी आरंभ हुईं। इनमें हाथियोंकी साँसोंकी मधुर ध्वनि लुप्त होकर सुनाई नहीं पड़ रही थी। केवल सुगंध अपनी मस्ती बिखेर रही थी।

चिलमन हटा दी गई। उत्सुकतापूर्ण दृष्टि सीधी हाथियोंपर पड़ी। वहाँ केवल एक हाथी गुमसुम खड़ा था। वह न हिलता था, न डुलता था। मालूम होता था कि साथीके चले जानेसे क्षुब्ध है।

बादशाहने चोरको शाबाशी दी, "सचमुच तुम कलाकार हो।" उसने रत्नोंका हार गलेसे उतारकर कलाकारके गलेमें पहना दिया। "आज दरबारमें तुम्हें सम्मानित किया जायगा।"

बादशाह चले गये और कुछ देर पीछे, झरोखेकी राह बंद करता हुआ, चोर कलाकार बाहर निकला। दरवाज़ेपर महावत तनकर खड़ा हुआ था और उसके मुखपर तीव्र घृणाका भाव प्रस्फुटित हो रहा था। चोरको देखते ही उसने होंठ सिकोड़कर कहा, "देशद्रोही !"

चोरने शान्तिसे कहा, "मैं देशद्रोही ?" आगेकी आवाज़ बहलीकी खड़खड़में विलीन हो गई।

× × ×

उसी दिन दरबार लगा। शाही महावतको झूठ बोलनेके अपराधमें कठघरेमें खड़ा किया गया। उसकी आँखें आत्मविश्वाससे चमक रही थीं। उसके गुरुभाईने स्वार्थके वशीभूत होकर अपने देश और बंधुसे दग़ा की थी। लेकिन वह उसे भेद नहीं खोलने देगा। यदि उसने ऐसा किया तो उसकी मृत्यु निश्चित है। अभियोगके उत्तरमें उसने कहा, "यदि वह चोर चुराये

हुए हाथीको वापस उसी रास्तेसे ले आये, जहाँसे ले गया था, तो इस झूठकी सज़ामें मैं अपनी एक करोड़ दीनारें हार जानेके लिए तैयार हूँ।"

चोर घबराया। उसकी विद्या अधूरी थी। वह हाथीको वापस नहीं ला सकता था। महावतने यही समझकर यह बेढब शर्त रखी थी। उसने सफ़ाई दी, "चुराई हुई चीज़पर चोरोंकी बिरादरी अपना हक समझती है।"

बाबर चिल्लाया, "लेकिन यह शाही इजाज़तसे केवल प्रदर्शनके लिए चुराने दिया गया था। तुम्हें तुम्हारा इनाम मिल चुका है। शाही हाथी वापस किया जाय!"

महावतकी आँखें एक बार चमकीं। चोरके मुखपर स्वेदकण चमक उठे। उसने हाथ जोड़कर बहाना किया, "श्रीमान्, सेवक अपनी कलामें पारंगत है, किन्तु वह अपनी बिरादरीके रीति-रिवाज़ तोड़नेमें असमर्थ है। दास एक तुच्छ चमत्कार फिर दिखा सकता है यदि उसे हाथी माफ़ कर दिया जाय। यह कलाकार दूसरा हाथी बादशाह सलामतकी नज़रोंके सामनेसे उड़ानेके लिए तैयार..."

सहसा उसकी दृष्टि महावतकी दृष्टिसे मिली और उसने काँपकर अपने नेत्र बंद कर लिये।

उसकी बात सुनकर सबकी बोलती बंद हो गई। वास्तवमें यह कलाकी पराकाष्ठा थी। जोशसे बाबर चिल्लाया, "ख़ुदाकी क़सम, हम इस कलाकारकी कद्र करते हैं। हमें यह प्रस्ताव भी स्वीकार है।"

उपयुक्त समयपर चोर बादशाहको उसी झरोखेतक ले गया। तुरही और ढपड़ोंकी तेज़ आवाज़ें आ रही थीं। सुगंध मस्त थी। चोरने चिलमन हटा दी। हाथी उसी मुद्रामें खड़ा था, जैसे एक निश्चल शिखर हो।

बाबरने कहा, "ठीक है, हम देख रहे हैं। तुम्हें शायद बहुत कुछ करना होगा। तुम अपना काम शुरू करो।"

"बहुत कुछ नहीं, श्रीमान्।" चोरने कुछ कोयले सुलगाये। जेबसे एक पुड़िया निकाली और उसका मसाला जलते हुए कोयलेपर छोड़ दिया।

हाथीकी तथाकथित साँसकी सुगंधपर एक नई सुगंध छानी आरंभ हो गई । ज्यों-ज्यों पहली सुगंध लोप होती रही, बादशाहके सामनेसे हाथी का आकार लोप होता रहा और अंतमें जहाँ इतना दीर्घाकार हाथी खड़ा था, वहाँ अदृश्य वायुके अतिरिक्त और कुछ शेष न रहा ।

बादशाह भौंचक्का-सा खड़ा रह गया । आश्चर्यसे उसकी चीख निकल गई । हाथ गलेके दूसरे कंठेपर पहुँचा और मुँहसे निकला, "कमाल ! यह क्या माजरा है ?"

चोरने बादशाहके हाथोंसे दूसरा रत्नोंका कंठा सँभालते हुए बतलाया, "ये हाथी काल्पनिक थे । आपके दिमाग़में पहलेसे ही इनकी सूरत-शकल बैठा दी गई थी । सुगंध और ढोलके रागने आपके मस्तिष्कको बहकनेसे रोक दिया । तुरही और ढपड़ोंने ढोलके रागको दबा दिया और इस मसाले की गंधने उस पहली सुगंधपर विजय पा ली । कल्पना विचारमें बदल गई और तर्कके परिणामने सत्यको प्रकट कर दिया । यह नज़रबन्दीका एक छोटा-सा चमत्कार था ।"

× × ×

कुछ दिनों बाद ही बाबरने राणा पर चढ़ाई की । अपार धन-जनकी हानि देखकर बाबर चकित हो गया । उसने राणाकी शक्तिका ग़लत अनुमान लगाया था । उसे आश्चर्य था कि इतनी रसद और इतने आदमियोंको भरती करनेके लिए राणाके पास इतना धन कहाँसे आया !

पानीपतकी भूमि रक्तसे प्लावित हो उठी । बाबरको बहुतसे अनूठे चेहरे देखनेको मिले । उनमें सबसे अनूठा जो था, वह उसकी तलवारका वार रोकते हुए उसे दिखाई पड़ा, और वह विस्मयसे चिल्ला उठा "महावत !"

एक करोड़ सोनेकी दीनारें, रसद—उसके सामने सैकड़ों ख्याली हाथी झूलने लगे ।

———

शतरंजकी बाज़ी

मुग़ल-शासनके प्रवर्त्तक बाबरका काल समाप्त हो चुका था; उसका उत्तराधिकारी हुमायूँ एक-एक करके अपने राज्यके प्रदेश हारे हुए खिलाड़ी की तरह खोता जा रहा था। लगता था कि चुग़ताई वंशका वैभव नष्ट हो चला है।

हिन्दुस्तानकी भूमि शतरंजकी एक बड़ी बिसातकी तरह थी, जिसपर निगाह जमाकर चलनेमें बाबरका यह उदार वंशज अपनेको असमर्थ पा रहा था और जंगलोंकी खाक छानता फिर रहा था।

चंपानीर राज्यके एक छोटेसे गाँवमें भूतपूर्व मुग़ल-सम्राट् बाबरके शाही शातिर, वृद्ध उस्ताद हसनअली एक कच्चे-पक्के घरमें, अपनी विगत प्रतिष्ठाके सुख-स्वप्नोंके साथ अपनी तत्कालीन दीनताका समन्वय करनेकी चेष्टा करते हुए दिन काट रहे थे।

रस्सी जल चुकी थी, लेकिन उसके बल नहीं खुले थे। मीनाकारी-के साथ सोनेके पक्के झोलके मोहरे अभी शेष थे, काली कड़ियोंकी छतमें पुराना विशाल झाड़-फानूस अब भी टँगा हुआ था, किन्तु क्रमशः दर्शकोंकी संख्या घट जानेके कारण उसकी सफ़ाईकी खबरदारी भी धीरे-धीरे घट गई थी और वह घरकी स्थितिके साथ अपने रूपको एकाकार कर रहा था।

चंपानीर राज्य प्रौढ़ायु बहादुरशाहके हाथोंमें था। अरसा हुआ वह हुमायूँको खिराज भेजना बन्द कर चुका था। दक्षिणमें एकमात्र वही मुग़लोंके विनाशका सबसे बड़ा उत्तरदायी था। इस राजनीतिक अवस्थासे भली प्रकार अवगत, बूढ़ा उस्ताद शातिर अपने गत सौरभको लौटा लेनेके लिए चारों ओर ताकता था और उसे मिलती थी निराशा और विषम परिस्थितियोंका सघन अन्धकार।

उन्हीं दिनों जाड़ेकी एक संध्याको घोड़ेपर चढ़ा हुआ एक युवक उस्ताद हसनअलीके घरका पता पूछता हुआ उनके द्वारपर आया। मिचमिचाई आँखोंसे उसे घूरते हुए वृद्धने उस गतवैभव घरके दरवाज़ेके बाहर सिर निकालते हुए एक साथ दो प्रश्न पूछे—"कौन है ? क्या चाहता है ?"

"क्या यही उस्ताद हसनअलीका मकान है, जो शतरंजके खेलमें अपना सानी नहीं रखते ?" युवकने घोड़े पर चढ़े-चढ़े पूछा।

युवकके पूछनेके ढंगसे उस्तादके चेहरेपर दीनताके पिटे हुए गुरुत्वकी भावना आज फिर अपना रंग ले आई। "आओ बेटा," वृद्धने कहा। "कहाँसे आ रहे हो ?"

"मैं अहमदनगरसे चला आ रहा हूँ," युवक घोड़ेसे उतरते हुए बोला। "बड़े भाग्यसे आपके दर्शन हुए !" वह भावावेशमें वृद्धके पैर छूनेके लिए आगे बढ़ा।

"हँ, हँ !" करते हुए वृद्धने अपने पैर पीछे हटा लिये। बड़ प्रेमसे उन्होंने नवागन्तुकके घोड़ेकी रास पकड़ी और घरकी दुवारीमें बाँध आये।

युवकको आरामसे टूटे तख्तपर नई दरी बिछाकर बैठाते हुए उन्होंने कहा, "क्या नाम है तुम्हारा, बेटा ?"

"मेरा नाम जयवर्मा है," युवकने कहा। "अहमदनगरसे ही यह तमन्ना लेकर चला हूँ कि उस्तादसे शतरंज सीखूँगा और उनका नाम जहानमें रोशन करूँगा।"

"हँ, हँ, हँ !" बूढ़ा हँसा। "वह ज़माने गये, बेटा, जब इस चीज़की क़दर थी। अब तो धरती खुद बिसात बन गई है, जहाँ अपने मोहरोंको टिकाना तो दरकिनार, खुद टिकना मुश्किल हो रहा है। आजकल तो शतरंज-जैसे शाही खेलमें वही पड़ सकता है, जिसके आगे-पीछे कबीलेदारी न हो।"

"उस्ताद !" इस बार युवकने सचमुच वृद्धके पैर पकड़ लिये। "मैं इन्कार सुनने नहीं आया हूँ।"

वृद्ध अपने शिष्यत्व-कालके संस्मरण याद करके विभोर हो उठा।

उसने युवकको उठाकर छातीसे लगा लिया । "जो कुछ मुझे आता है उसे सिखानेमें कोई कसर उठा न रखूँगा," वृद्धने कहा ।

अन्दर घरमें जानेके लिए बैठकमें जो खिड़की थी, बन्द हो गई और बैठकमें ही बाजियाँ जमने लगीं । वृद्धने देखा कि युवक पहलेसे ही शतरंजमें निकला हुआ था । उन्होंने उसे नक़्शोंके सहारे खेलना सिखाया ।

दुनियाकी सभी बातोंसे विलग होकर जयवर्मा नामके उस युवकने छः मास जमकर शतरंजके दाँव-पेंच सीखे । उसे पता नहीं रहा कि आज उसने रूखी खाई कि तर, खाई भी कि नहीं खाई, और यदि खिलाई तो किसने ।

अब बाज़ियाँ जमतीं, किन्तु शिष्य और गुरुकी भावनासे नहीं, दो प्रबल विरोधियोंकी भावनासे । बिसातसे हटकर शिष्यके मनमें सेवा-भाव आ जाता और गुरुके मनमें पितृ-भावना ।

इस बीचमें यद्यपि जयवर्माने एक भी बाज़ी नहीं जीती, किन्तु धीरे-धीरे उसपर प्रकट होने लगा कि किसी दिन उसका बाज़ी जीतना गुरु और शिष्यके बीचका कोमल तार टूक-टूक कर देगा । बहुत नाजुक मौक़े आ पड़ने पर उस्तादका मुँह क्यों पीला पड़ जाता है ! उस समय वह उसकी ओर विचित्र दृष्टिसे क्यों देखने लगते हैं ! इस प्रकार कि जैसे कोई विशाल भवन खड़ा करके उस परसे अपने स्वामित्वका अधिकार खो रहा हो ।

बहुत दिनों बाद एक दिन उस्ताद हसनअलीकी बाज़ी इसी तरह फँस गई । वृद्धने उस्तादी नुकता छोड़ा—"घोड़े पिटवाकर मात देना, तारीफ़ तो समें है ।"

"मैं भी घोड़े नहीं रखूँगा," युवकने वृद्धके पिटे हुए घोड़ोंके पास अपने घोड़े रख दिये ।

जयवर्मा अब भी ज़बर था । कितनी देर बीत गई, वृद्धको इसका पता नहीं चला । 'चाल चलो' कहनेकी मनाही थी । शतरंज मस्तिष्कका खेल है और मस्तिष्कके अनुकूल तन्तु न जाने कितनी देरमें आकर एकत्र हों ।

जयवर्माकी बाज़ी निश्चित थी, इसलिए जबसे उसने शतरंज सीखनी

आरम्भ की थी, आज उसे पहला अवसर मिला था कि वह अपने वातावरण-से इधर-उधर दृष्टि पसार सके, सन्तोप और इतमीनानके साथ।

उस्तादके पीछे जो बन्द खिड़की थी, उसकी दरारपर अचानक उसकी नज़र जा पहुँची और वहींपर अटक गई। जिस राह पर भीतरके प्रकाशकी एक रेखा दीख पड़नी चाहिए थी, वहींसे किन्हीं सुन्दर नेत्रोंकी अतृप्त दृष्टि न जाने कितनी देरसे, न जाने कितने दिनोंसे, एकपक्षीय भावनाओंका भार लिये अपनी प्यास बुझानेका प्रयत्न कर रही थी।

यदि आँखोंसे स्नेह परिलक्षित हो सकता है, तो जयवर्माने उसे लक्ष्य किया। बहुत कालसे अपने ध्येयकी पूर्तिमें रत उसका सुप्त युवक हृदय आज अँगड़ाई लेकर उठ बैठा और उसकी दृष्टि फिर-फिराकर फिर उसी ओर जा टिकी।

उस समय वृद्ध शायद काबुलमें घोड़े बेच रहा था। उसके मुँहसे अनायास ही एक बड़बड़ाहट निकलनी आरम्भ हो गई: "प्यादे वज़ीर बन गये, बादशाहतें मिटकर फिरसे बन गईं। ज़माना एक-सा किसीका नहीं रहा..." वृद्धका मस्तिष्क अन्दर ही अन्दर पेंच-ताव खा रहा था। "...कभी न कभी दिन फिरेंगे। फिर एक दिन वैसे ही शाही कालीनोंपर मसनदके सहारे शतरंज खिलेगी। चारों ओर प्यादेपल्टन दौड़ते फिरेंगे और सम्मानमें तोपोंकी सलामियाँ दग रही होंगी..." क्या-क्या बकता जा रहा है, वृद्धने सहसा ही इसका भान करके, अपनी सुप्त भावनाओंके इस प्रकार प्रदर्शित होनेसे लज्जित होकर जयवर्माकी ओर ताका।

अचानक ही वृद्धकी भौंह संकुचित हो गई। उसने जयवर्माकी ओर तीव्र दृष्टिसे देखा, पीछे फिरकर खिड़कीकी ओर देखा और दृढ़ निश्चयके साथ उठकर खिड़की और जयवर्माके बीच जा खड़ा हुआ।

इस अचानक व्याघातसे चौंककर जयवर्मा तुरन्त प्रकृतिस्थ हो गया।

"अब यह बाज़ी फिर कभी खिलेगी," "बूढ़ेने व्यंग्यसे कहा। "इसके दो नक़्शे बना लो। एक तुम्हारे पास रहे और एक मेरे। जब हम और तुम

'एकचित्त' होंगे, तब फिर यह बाज़ी खिलेगी । शतरंजमें वक़्तकी बंदिश नहीं होती ।"

गुरु और शिष्यके बीच तनाव उत्पन्न हो गया । जयवर्माने मनमें कहा कि यह बाज़ीकी स्थितिसे उत्पन्न खीझ है, लेकिन उसके भीतरसे ही किसीने उसे झुठला दिया ।

फिर उसने सोचा कि कौन हो सकता है खिड़कीपर ? उस्तादकी पत्नी नहीं थी । वह कई बार चर्चा कर चुके थे । लकिन कभी उस्तादने इस बातकी चर्चा नहीं की कि उनके कोई लड़की भी है । छः मास घरमें रखकर भी उन्होंने उसे ज़नानखानेकी हवा न लगने दी थी ।

उस रात जयवर्मा पड़ोसीके घरमें सोया । रात ही रातमें उसने कुछ निश्चय किया और सुबह उठते ही नहा-धोकर वह उस्तादके पैर छूनेके लिए पहुँचा । बैठकमें प्रवेश करते ही उसने देखा कि सामने खिड़कीके किवाड़में जो दरारें थीं, उन्हें बड़े अटपटे तरीक़ेसे रातमें बूढ़ेने लगकर गारे मिट्टीसे बन्द कर दिया था ।

करुणाके आवेशसे गुरुकी ओर देखकर वह उसके चरणोंपर गिर पड़ा । वृद्धने शान्त भावसे उसे आशीर्वाद दिया । किसीने उसकी राह नहीं रोकी, किसीने उससे जानेका सबब नहीं पूछा । कुछ काल पहले जिस प्रकार वह अज्ञात युवक इस गाँवमें घोड़ेपर चढ़कर आया था, उसी प्रकार छः मास बाद पीठ मोड़कर गाँवसे बिदा हो गया । अन्तर था, तो केवल इतना कि जिस मुखपर आते समय कुछ सीखनेकी चाह, कुछ कर गुजरनेकी महत्त्वाकांक्षा थी, आज उसपर कुछ जान लेनेकी गम्भीरता और प्रताड़ित हृदय की उत्तेजना थी ।

समयके प्रभावसे तिनके छिटक-छिटककर न जाने कहाँके कहाँ पहुँचते हैं । नई-नई चिड़ियाँएँ नये-नये घोंसले उनसे बनाती हैं ।

× × ×

इस घटनासे कुछ समय बादकी बात है । दो महीनेसे हुमायूँ चम्पानीर का घेरा डाले पड़ा था । बाहरसे रसद-पानी जाना उसने बन्द कर दिया था

और अनुमान था कि भीतरके लोग अधिक दिनों तक इस अवरोधका सामना नहीं कर पायेंगे। आज पूरी आशा थी कि या तो बहादुरशाह आत्म-समर्पण कर देगा या क़िलेके निवासी जीवन-मरणकी आख़िरी बाज़ी लगाने के लिए क़िलेका द्वार खोलकर बाहर आ जायेंगे।

तभी क़िलेके फाटकमें बनी छोटी राहसे एक अश्वारोही बाहर निक-लता दिखाई दिया। उसके हाथमें सफेद झण्डी थी, जिससे प्रतीत होता था कि वह या तो सन्देशवाहक है या बहादुरशाहकी ओरसे आत्मसमर्पण करनेका प्रस्ताव लेकर आ रहा है।

शाही ख़ेमेमें उसने एक फ़रमान हुमायूँके सामने पेश किया। लेकिन उसके भीतर जो सन्देश था उसे सुनकर हुमायूँके प्रमुख सेनानायक बड़े ज़ोरोंसे ठठाकर हँस पड़े।

फ़रमानमें हुमायूँकी ओरसे बड़ी आशा बाँधी गई थी। बहादुरशाह-की तरफ़से उसके नाम शतरंज खेलनेका निमंत्रण था। शतरंजमें हारने पर हुमायूँके लिए शर्त थी कि वह क़िलेका घेरा उठाकर वापस लौट जाये और उसके जीतनेपर बहादुरशाह उसके लिए क़िला खाली कर देगा।

भीषण अट्टहासोंके बीच जब इस अद्भुत प्रस्तावके कारण उत्पन्न हास्य कुछ धीमा पड़ा, तो बहादुरशाहके दूतने गम्भीरताके साथ फ़रमान-को एक बार फिर पढ़ा और बोला, "व्यर्थके रक्तपातको रोकनेके लिए यह अपूर्व अवसर है। आख़िर वास्तविक युद्ध भी तो बहुत कुछ भाग्यपर निर्भर करता है। अन्तर इतना ही है कि यह युद्ध द्वंद्वयुद्ध न होकर बुद्धि-युद्ध होगा...!"

एक सेनानायकने आगे बढ़कर निवेदन किया, "यह मौक़ा और वक़्त हासिल करनेकी एक चाल है।"

दूतने कहा, "हम लोग भूखसे निढाल हो रहे हैं, आप जीते हुए हैं। मौक़ा और वक़्त हासिल करके भी हमारी और आपकी स्थिति वही रहेगी। यदि आप इस प्रस्तावको नहीं मानेंगे, तो हम सिरोंपर कफ़न बाँधकर मरने-

के लिए बाहर निकल पड़ेंगे और जब हम मरेंगे, तो मारेंगे भी। क्या आप लोगोंको अपने सिपाहियोंकी जानें क़ीमती मालूम नहीं होतीं ?"

हुमायूँके बराबरमें खड़े एक युवकने उसके कानमें कुछ कहा। हुमायूँ-ने आज्ञा दी, "युद्ध बन्द कर दिया जाय। यह खेल हमारी थकी हुई सेनाका मनोरंजन करेगा।"

सारी फ़ौजोंमें इस अपूर्व अनहोनीपर कहकहे लगने लगे। युद्धका बड़ा मोर्चा सिमटकर हुमायूँके ख़ेमेमें एक बड़ी चौकीपर केन्द्रित हो गया। उस युद्धका सबसे बड़ा सिपहसालार था हुमायूँका सहचर वह युवक।

नई-नई और अपूर्व चालोंके नक़्शे रेशमी थैलियोंमें बन्द होकर एकके बाद एक क़िलेसे ख़ेमे और ख़ेमेसे क़िलेमें जाने लगे। तत्कालीन राज-नीतिक इतिहासमें शतरंजकी यह बाज़ी अपूर्व भी थी और असाधारण भी थी, जिसकी चालोंके नक़्शे पूरी-पूरी बाज़ी खेलकर परिणाम देख लेने-पर विरोधीके पास भेजे जाते थे।

हुमायूँ इस बाज़ीको शान्त मुखमुद्रा और उथल-पुथलयुक्त हृदयसे निरख रहा था। वह अपने जीवनमें अब और अधिक जुआ खेलना नहीं चाहता था। अन्तमें उसने एक चाल सोची।

तीसरी चाल लेकर पहुँचा हुआ हुमायूँका क़ासिद वापस लौटकर नहीं आया। बहादुरशाहके दरबारमें नक़्शा सौंपकर बाहर आते ही उसके पैरोंमें अचानक बड़े ज़ोरका दर्द उठा और थोड़ी सी ही देरमें उसके पैर सूज-कर हाथीके पैरोंके बराबर हो गये। वह भूमिपर गिर पड़ा और पीड़ाके मारे लोटने लगा। तत्काल दरबारमें सूचना दी गई। नई चालमें उलझे बहादुरशाहने उसे शाही हकीमकी रक्षामें सौंप देनेकी आज्ञा दी और हुमायूँको इस दुर्घटनाकी सूचना भेज दी गई।

यदि सिलसिला यहीं टूट जाता, तो भी कोई बात नहीं थी। लेकिन इस घटनाके बाद कोई भी सन्देशवाहक अपना काम समाप्त करके वापस नहीं लौटा। किसीकी आँखें इतनी सूज गईं कि उसे दिखाई ही देना बन्द

हो गया, तो किसीके हाथोंकी उँगलियाँ मोटी होकर कलाईके बराबर हो गईं।

नियमानुसार हुमायूँकी ओरसे शिकायत की गई कि क्या कारण है कि दूत वापस नहीं आ रहे हैं ? बहादुरशाहके लिए यह अब चिंताका विषय बन गया। मालूम होता था कि कोई प्रकांड राजभक्त गुप्त रूपसे हुमायूँके दूतोंको विष दे रहा था। लेकिन उसे सामने आना चाहिए था।

हुमायूँका नौजवान शातिर निर्णायक चालें लेकर दो सन्देशवाहकोंके साथ स्वयं दरबारमें आया। इन लोगोंको शाही शातिरके घरपर ठहरनेकी आज्ञा दी गई।

तीनों आदमी बैठकमें बैठे आपसमें सलाहमशवरा कर रहे थे। "अगर यह चाल सफल हो जाय तो क़िला हाथमें आया समझो," कहते-कहते युवक शातिरने दरवाज़ेपर एक परछाईं देखी और उसकी नजरें ऊपर उठीं। दरवाज़ेके बीचोंबीच एक वृद्ध सीना ताने खड़ा था।

"उस्ताद !" युवक आश्चर्यसे चिल्लाया।

"अच्छा, तो तुम हो, जयवर्मा !" वृद्ध हसनअलीने भौंह चढ़ाकर कहा। "मुझे भी ताज्जुब था कि ये अनूठी चालें कौन चल रहा है !"

युवक उसके पैर छूनेके लिए आगे बढ़ा। वृद्धने कोई हीलहुज्जत नहीं की। उसने शान्त भावसे कहा, "बेटा, तुम्हारी यह आख़िरी चाल सफल नहीं होगी। बहादुरशाहका शाही हकीम और कोई नहीं, खुद मसीह-उल-मुल्क रहमत इलाही साहब हैं, जो सम्राट् बाबरके साथ-साथ हिन्दुस्तानमें वैद्यकका अध्ययन करनेके लिए आये थे। उन्होंने बताया है कि भिलावेंकी सूइयाँ चुभो-चुभोकर बदनको जगह-जगहसे सुजा लेना, आँखोंमें चोंटली घिसकर लगा लेना भारतीय अपराधियोंकी बहुत पुरानी चालें हैं। तुम्हारे सभी सन्देशवाहक पहचान लिये गये हैं। क़िलेके अन्दर तोड़फोड़ करके हुमायूँको भीतरसे रास्ता देनेके लिए उसने अपने सेनानायकोंको सन्देशवाहकोंके रूपमें भीतर भेजा है। अब आप लोग अपनेको क़ैद समझें।"

पासा पलट चुका था। युवक जयवर्माने स्थिति भली प्रकार समझ ली। वह साधारण बातों पर आता हुआ बोला, "लेकिन, उस्ताद, आप बहादुरशाहके यहाँ कैसे ?"

प्रसन्न मुद्रासे बूढ़ेने गर्दन हिलाते हुए कहा, "अब दिन फिर चुके हैं। ख़ुद बहादुरशाहने हमारा दामाद बनना क़बूल किया है।"

जयवर्माके हृदयपर जैसे किसीने सौ मनका पत्थर रख दिया हो। फिर भी वह बोला, "उस्ताद, धोखा न खाना।"

"जब तुमसे धोखा नहीं खाया, तो किसीसे भी नहीं खाऊँगा," वृद्धने व्यंग्यके साथ कहा।

जयवर्मा तिलमिला गया। उसकी तिलमिलाहटमें योग देते हुए बैठक-की मजबूत जोड़ी चरमराकर खटाक्से बन्द हो गई।

धीरे-धीरे रात बीतती जा रही थी। बड़ी उत्कण्ठासे जयवर्मा घड़ियालके घण्टे सुन रहा था। अर्द्धरात्रितक उसके वापस न लौटनेकी सूरतमें हुमायूँने जो कार्यक्रम निश्चित किया था, उसके अनुसार जब घड़ियालने बारहकी सूचना दी, उसी समय हुमायूँकी एक तोपने आग उगली और उसके बाद तोपोंकी गड़गड़ाहटने क़िलेको हिला दिया।

जयवर्मा खुशीके मारे साथियोंके कंधे झिझोड़कर चिल्ला उठा—"अहा, हमारी फ़ौजोंने धावा बोल दिया है !" उसने आवेशमें आकर किवाड़ पीट डाले।

अकस्मात् आश्चर्यसे तीनों व्यक्ति मुँह बाये रह गये। धक्के लगनेसे किवाड़ोंकी जोड़ी ऐसे खुल गई, जैसे बन्द ही न हो। जयवर्माने कहा, "मालूम होता है किसीने चुपचाप इसे बाहरसे खोला और सूचना देनेका अवसर न पा सका।" उस्तादके घरमें ऐसा कौन हो सकता है ? सहसा उसे किसीकी आँखोंका स्मरण हो आया।

बाहरसे ज़ोरका हल्ला सुनाई दे रहा था। हाथियोंके माथे लहूलुहान हुए क़िलेके फाटकसे बँधी जंजीरों पर अपने ज़ोर आजमा रहे थे। चारों ओर चीख-चिल्लाहट मची हुई थी।

तीनों व्यक्ति तेजीके साथ महलकी ओर दौड़े। अचानक बीच रास्तेमें खड़े होकर जयवर्मा अपने साथियोंसे बोला, "तुम लोग क़ैदखानेकी ओर जाओ। होशियारीसे जाना। बहादुरशाह पकड़े जानेके लिए क़िलेमें नहीं ठहरेगा। वह चोर रास्तेसे भागेगा। मैं इस क़िलेके भूत-पूर्व सूबेदारके साथ वह राह देख चुका हूँ। मैं उसे रोकूँगा.....।"

समय खोनेका अवसर नहीं था। साथियोंको क़ैदखानेकी ओर लपकता छोड़कर वह तीव्र गतिसे दूसरी राहपर दौड़ गया।

× × ×

कुछ समय बाद बल-पूर्वक एक लड़कीको घसीटते हुए बहादुरशाह और उसके तीन-चार अनुचर गुप्त मार्ग तय कर रहे थे। सिरे पर पहुँच-कर वह अचानक ठिठक गया। द्वाररक्षक मुर्दा पड़ा था और उसकी कमरसे चाबियोंका गुच्छा ग़ायब था। पिंजरेमें फँसे पक्षीकी तरह सहमकर बहादुरशाहने अपने अनुचरोंकी ओर देखा।

ऊपरके रोशनदानसे एक हँसीकी आवाज़ सुनाई पड़ी। उन्होंने ऊपर देखा। जयवर्मा चाबी उन्हें दिखा-दिखाकर चिढ़ाते हुए कह रहा था, "अरे, तुम लोग कहाँ जा रहे हो? शहंशाहे हिन्द हुमायूँकी फ़ौजें तुम्हारी मेहमान बनकर आ रही हैं, और मेज़बान दुम दबाकर भागा जा रहा है...खूब; बहुत खूब!"

तभी भयत्रस्त लड़कीकी बन्द आँखें खुलीं और वह जयवर्माकी ओर देखकर चिल्ला उठी। जयवर्माने उन आँखोंकी ओर देखा और उसका स्मृतिचक्र तेजीके साथ पीछेकी ओर घूम गया।

बहादुरशाहकी अनुभवी आँखें उन लोगोंकी नज़रोंको बड़ी बारीकीसे नाप रही थीं। यह माजरा देखकर वह बड़े जोरसे हँसा। "अरे, लड़के, तू शायद इस लड़कीको पहलेसे ही जानता है..."फिर उसने अपने अनुचरों को आज्ञा दी—"इस लड़कीके सीनेसे खंजर पार कर दो!"

लड़की चिल्लाई, "हाँ, हाँ, कर दो। मैं अब मर जाना ही चाहती हूँ।"

जयवर्माकी ओर लक्ष्य करके बहादुरशाहने कहा, "तुम चाबी फेंकते हो या नहीं? अगर इस लड़कीको बचाना चाहते हो, तो..."

"होशकी दवा करो," जयवर्माने कहा, "तुम्हारी जान खुद खतरेमें है ।"

"बहादुरशाहके मरनेसे भी यह लड़की ज़िन्दा नहीं हो सकती । क्या इतनी कमसिनीमें ही यह मर जाने लायक हो गई !" उसने लड़कीकी चोटी पकड़कर उसका मुँह ऊपरकी ओर उठा दिया ।

"अच्छी बात है," जयवर्माने कहा । "मैं चाबी धीरे-धीरे नीचे लटकाता हूँ । तुम इस लड़कीको उस पिछले दरवाज़ेके पार पहुँचाकर वापस आओ, ताकि वह उसके भीतर जाकर उसे बन्द कर ले । उसके तुम लोगोंसे सुरक्षित होते ही चाबी भी तुम्हारे पास पहुँच जायेगी ।"

बहादुरशाहने विलास और प्राणोंके चुनावमें प्राणोंको चुना और उसने अपने अनुचरोंको जयवर्माके कथनके अनुसार कार्य करनेकी आज्ञा दी ।

धीरे-धीरे उतरती हुई चाबीकी डोरको देखते हुए अनुचर पिछले द्वारकी ओर लड़कीको लेकर चले और जयवर्माकी डोरीमें बँधी गुप्त द्वारकी चाबी उसी गतिसे नीचे उतरती रही । जयवर्माने चेतावनी दी—"ध्यान रखना, अगर ज़रा भी धोखा हुआ, तो जितनी आहिस्तासे चाबी नीचे जा रही है, उतनी ही तेज़ीसे ऊपर आ जायेगी ।"

अनुचर बिना किसी ओर निगाह किये आगे बढ़ते गये और उन्होंने झल्लाकर लड़कीको द्वारके बाहर धकेल दिया । तभी बहादुरशाह चिल्लाया "रुक जाओ ! वापस ले आओ, चाबी मिल गई !"

उसी क्षण पिछला द्वार दोनों अनुचरोंके शीघ्रतासे आगे बढ़े हुए मस्तकोंसे टकराता हुआ बन्द हो गया । ऊपरसे जयवर्माकी हँसी बहादुरशाह-को सुनाई दी ।

जिस समय सँकरे मार्गसे दोनों अपने-अपने भविष्यके स्वप्न सँजोते बाहर निकले, उनके सामने बाधा सशरीर खड़ी थी ।

द्वारके बीच खड़ा बूढ़ा हसनअली रोषके साथ चिल्लाया—"नरीना ! जयवर्मा !"

भौंचक्के बने दोनोंके दोनों खड़े रह गये। हसनअलीने कहा, "नरीना दुनियामें सिर्फ़ उसके पास जा सकती है, जो पहले हसनअलीको फ़तह कर ले।" फिर उसने क्रोधसे काँपते हुए हाथोंसे तलवार खींच ली।

जयवर्मा कुछ क्षणों अवाक् खड़ा रहा। बूढ़ा फिर चिल्लाया, "निकालो तलवार!"

युवकने अपनी मिरजईके भीतरी खोलमेंसे एक कागज़का पुर्ज़ा बाहर निकाला। "ठहरो, उस्ताद," उसने कहा। "अभी तुम्हारी और हमारी एक बाजी अधूरी है। पहले उसे पूरी हो जाने दो।" उसने कागज़का पुर्ज़ा उसके सामने करके खोल दिया। यह वही नक़्शा था, जिसकी एक नकल अभी तक बूढ़ेके कपड़ोंमें सुरक्षित थी। वह उसे देखकर चौंक पड़ा।

वृद्धने तलवार म्यानमें कर ली। असंतोष और आशंका मिश्रित दृष्टिसे उसने कहा, "अच्छा!"

क़ालीनपर अब भी सोनेके मीनाकारीवाले मोहरे बिसातपर जमे थे। दोनों विरोधी आमने-सामने डट गये और नरीना द्वार पर खड़ी हो गई।

एक-दो चालके बाद बूढ़ेको तन्मय देखकर युवक सुराहीसे पानी पीनेके लिए उठा। पानीसे भरा चाँदीका गिलास मुँहसे लगाकर उसने कहना आरम्भ किया—"अब उस्तादके दिन फिर गये हैं! फिर वैसे ही शाही क़ालीनोंपर मसनदके सहारे उठंगकर शतरंज खिल रही है! चारों तरफ़ प्यादापलटन दौड़ती फिर रही है! और तोपोंकी सलामियाँ दग रही हैं!"

इसपर भी बूढ़ेका ध्यान बँटता न देखकर युवकने नरीनाकी कलाई पकड़कर संकेत किया और दोनों चुपकेसे वहाँसे खिसक गये।

क़िलेका फाटक चरमराकर टूट गया और हुमायूँकी विजयी सेना नारे लगाती हुई अंदर घुस पड़ी।

दाँई ओर नरीना और जयवर्माको लिये बहुत देर बाद हुमायूँने क़िलेके महलमें प्रवेश किया। वह ख़ुश था। अपनी विजित वस्तुओंकी शान

निरखता हुआ वह बालाखानेमें आया, किंतु वहाँ पहुँचकर वह ठिठककर खड़ा हो गया ।

सामने ही मसनदका सहारा लिये, क़ालीनके ऊपर रखी चौकीपर बिछी बिसातपर मोहरें लगे थे और बूढ़ा उस्ताद हसनअली चिंताकी मुद्रासे आँखें बिसातपर जमाये, हथेलीपर ठोड़ी रखे, स्थिर हुआ ज्यों-का-त्यों बै ा था ।

शतरंजके इस अद्भुत और विचित्र शौक़ीनको देखकर हुमायूँने उसे पहचाननेकी चेष्टा की और जिज्ञासासे जयवर्माकी ओर देखा ।

हँसते हुए जयवर्माने परिचय दिया—"ज़िल्ले-सुभानी मरहूमके दरबारके लासानी और मशहूर शातिर उस्ताद हसनअली खाँ ।" फिर वह उस्तादकी ओर मुड़ा । "अब ख़तम भी करो, उस्ताद । यह ज़िंदगी ख़ुद एक खेल है और इसमें हार जीत दोनों ही आती हैं ।"

नरीनाने पिताका कंधा पकड़कर हिलाया और वह चीख उठी । उस्ताद मिट्टीके पुतलेकी भाँति ढह पड़े । उनके प्राण इस कायाके पिंजरेको छोड़कर अनंतकी ओर उड़ चुके थे ।

—×—

उलझन

मुग़ल सम्राट् अकबरके धायपरिवारकी एक अच्छी खासी पलटन थी। माहम अनग उनमें सर्वोपरि थी। बीस वर्षका, नया नया सिंहासन पर बैठा, अकबर उसके स्नेहपाशमें पूर्णरूपसे बँधा हुआ था।

कालग्रसित हुमायूँके जिस कुशल सेनानायक बैरमखाँने उसका साथ दीनता व दुर्भाग्यमें परछाईंकी तरह दिया था, जिसने उसके पुत्र अकबरके लिए साहसी वणिक् सेनापति हेमूसे दिल्ली छीनी थी, वही बैरमखाँ इस सीधीसादी वृद्धा नारीकी महत्त्वाकांक्षाओंके मार्गमें पड़कर, राज्यकी बिसातसे शतरंजके मोहरेकी तरह उठा लिया गया। माहम अनगकी ये महत्त्वाकांक्षाएँ उसके एक मात्र पुत्र आदमखाँके लिए थीं, जो उस समयके भारतीय इतिहासमें प्रथम पंक्तिका खलनायक गिना जाता है।

उस समय अकबरकी दिनचर्या सैरशिकार और साहसी खेलों तक ही सीमित थी। उसके भीतर राजनीतिक रूपसे केवल एक भावना थी कि वह एक विस्तृत और विशाल भारतीय भूभागका स्वामी था और उसका यह स्वामित्व उसके पूर्वजोंके स्वप्नका सफल और साकार रूप था। बैरमखाँके विरुद्ध उसके पतनमें माहम अनग और उससे संबंधित अन्य व्यक्तियों द्वारा यही स्वामित्वकी भावना कोंच-कोंचकर हरी की गई थी।

किंतु माहम अनगके कारण ही जो भावना अकबरके मनपर उभर चुकी थी, वही उसके पुत्रकी राहका काँटा बनकर खड़ी हो गई। राजकीय मामलोंमें माहमके संबलसे संचालित आदमखाँकी स्वेच्छाचारिता अकबरको असह्नीय लगने लगी। बेहिसाब खर्च, रिश्वत, अत्याचारसे भरी आदमखाँकी चेष्टाओंके कितने ही समाचार उसे नित्यप्रति सुननेको मिलते; किंतु दूसरी ओर माहम थी, जो अपने स्नेह और सौजन्यके कारण एक उलझन बनकर अकबरके मानसके चारों ओर लिपट गई थी।

आदमखाँको नज़रोंसे दूर करनेका प्रयत्न किया गया। उसे एक विशाल सेनाका सेनापति बनाकर मालवापर चढ़ाई करनेके लिए भेजा गया। वह भी स्वयं बहुत दिनोंसे किसी ऐसे ही अवसरकी खोजमें था। आज्ञा सुनकर उसके पैर धरतीपर सीधे नहीं पड़े।

उसका आकर्षण थी मालवाके सुलतान बाज़बहादुरकी प्रधान बेगम रूपमती, जो अपने रूपके कारण आसपासके लोकगीतोंकी नायिका बनी हुई थी। भावी तानसेनका गुरुभाई, सुलतान बाज़बहादुर स्वयं भी प्रसिद्ध संगीतज्ञ और रसिक था। बाज़बहादुर और रूपमतीकी प्रेम-कथाएँ उस समयके जनकवियोंके लिए चुनेचुनाये विषय थे। आदमखाँने उन दो प्रेमियोंके सुनहले स्वप्नोंकी यह दुनिया उजाड़ दी। भीषण युद्धके पश्चात् बाज़बहादुरको हारकर भाग जाना पड़ा।

आदमखाँ उत्साह और हर्षके साथ पराजित सुलतानके हरममें घुसा। वहाँ उसका स्वागत हुआ बेगमोंकी सिसकती हुई लाशोंसे—बाज़बहादुर अनिवार्य पराजयके लिए युद्धमें जाते समय जिनके लिए आत्महत्याकी व्यवस्था कर गया था।

"रूपमती!" आदमखाँ रौद्र स्वरमें चिल्लाया, "रूपमती कहाँ है?"

उत्तर देनेके लिए हरममें कोई शेष नहीं था, केवल रूपमती ही थी; कटार खानेके बाद भी जो आनेवाली मृत्युकी बाट जोह रही थी। यह घाव-की वेदनासे तड़पती हुई हरमके एक वीरान कोनेमें मिली। उसमें केवल एक चेतना शेष थी कि आदमखाँको प्रसन्नता और लालचभरी दृष्टिसे अपनी ओर बढ़ते देखकर अपनी अँगूठीका हीरा निगल सके। उसने यही किया और वह भी आदमखाँके हाथों-ही-हाथोंमें ठंढी हो गई।

कमंदके इस प्रकार अंतिम हाथपर टूटनेसे आदमखाँ बौखला गया। "मारो, जो सामने आये!" उसने चिल्लाकर सैनिकोंको आज्ञा दी, "बची हुई बेगमोंको क़ैद कर लो। बस्तीकी एक-एक ईंटको उखाड़कर उसपर आदमखाँका नाम लिख दो, ताकि यादगार रहे।"

और विनाशमें निर्माणकी अपेक्षा बहुत कम समय लगता है।

× × ×

कुछ दिनों बाद शाहंशाह अकबरकी सेवामें मालवा-विजयकी भेंट पराजित सुलतानके कुछ सैनिकोंके हाथों भेजी गई।

भेंटको ग्रहण करनेके लिए दीवानखासमें भारी दरबार लगा। तख्तपर शानसे बैठे अकबरके सामने आदमखाँके दूत उपस्थित किये गये।

"भेंट नज़रसानीके लिए शाही हुजूरमें पेश की जाय!" अकबरने आज्ञा दी।

वज़ीर सिटपिटाया। उसने बताया कि भेंटमें केवल कुछ हाथी थे, जिन्हें दीवानखासमें नहीं लाया जा सकता।

"यह क्या मज़ाक है!" अकबरने क्रुद्ध होकर संदेशवाहकोंकी ओर देखा—"इतनी बड़ी मालवा-विजयमें सिर्फ़ कुछ हाथी ही मिले हैं! घटनाएँ खोलकर बयान की जायँ।"

दूत चुप रहे। शहंशाहके सब्रका प्याला भरता जा रहा था। कड़े स्वरमें अकबरने पुनः कहा, "माबदौलतके सवालका जवाब दिया जाय!"

फटी-सी आँखोंसे क़ासिद तख्तको घूरते रहे।

अकबर कुपित होकर खड़ा हो गया। "आखिर तुम लोग बोलते क्यों नहीं?"

सारा दरबार काँप गया। सहमकर संबोधित व्यक्तियोंने अपने-अपने मुँह खोल दिये। सब लोग विस्मय और आतंकसे स्तंभित हो गये।

बाजबहादुरके आदमखाँ द्वारा भेजे हुए उन सैनिकोंकी ज़बानें कटी हुई थीं। उन्होंने बिना बोले ही अपनी कहानी कह दी।

अकबरका मुख क्रोधसे तमतमा गया। "अंगरक्षकोंका दस्ता तैयार कराया जाये। हम इसी वक़्त मालवाको कूच करेंगे।"

किसीको इस रोषके सामने बोलनेका साहस नहीं था। तुरंत आज्ञाका

पालन हुआ। बिना हरमसराकी ओर मुख किये ही, एक छोटेसे अश्वारोही सैनिकदलके साथ अकबर क़िलेसे निकल गया।

शहंशाहका आकस्मिक आगमन देखकर आदमख़ाँके हाथोंके तोते उड़ गये। अकबरके घोड़ेकी रक़ाब चूमकर वह हक्काबक्का बना, हाथ बाँधकर खड़ा हो गया।

हाँफते हुए, तीव्र स्वरसे अकबरने आज्ञा दी : "फ़ौरन शाही डेरेमें हाज़िर हो जाओ।"

आदमख़ाँ अपने अपराधोंके प्रति सचेत था। यदि उसकी पीठपर माहम अनगका हाथ न होता, तो उसके लिए यह समझना और भी सरल हो जाता कि अकबर धीरे-धीरे बच्चेसे बड़ा होता जा रहा था और वे हाथी इतने मूल्यवान खिलौने नहीं थे जो उसे बहला देते।

किंतु आकस्मिक विपत्तिके साथ आकस्मिक बल भी मिला। आदमख़ाँ एक ऐसा कवच पहनकर अकबरके सामने गया, जिसपर उसे वार करनेका साहस ही नहीं था।

विस्मयके साथ अकबरने देखा कि आदमख़ाँके साथ माहम अनग भी थी, जो विपत्तिका आभास मिलते ही अकबरके पीछे-पीछे आगरेसे अपने पुत्रको बचानेके लिए चल पड़ी थी।

"दा अम्मी, आप कैसे आईं ?" आश्चर्यसे अकबरने पूछा।

माहमने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया। समयसे पहुँच जानेपर उसके फूले हुए नथुनोंसे एक गहरी निःश्वास निकली। उसने शहंशाहको शाही रीतिरिवाजके अनुसार अभिवादन किया : "अल्लाहो अकबर !" अर्थात् ईश्वर महान् है।

अकबरके चौड़े नथुनोंसे भी एक निःश्वास निकली। यह निःश्वास उस मजबूरीकी थी, जो एक शहंशाहको न्यायके प्रयोगसे बाध्य करके वंचित कर रही थी। उसकी स्वच्छंद प्रवृत्ति अपनी सत्ता और महत्ताके सम्मुख बाधा

देखकर भीतर-ही-भीतर छटपटा रही थी। माहम अब उसके लिए समस्या हो उठी थी। विमूढ़तासे नेत्र स्थिर करके उसने माहमके अभिवादनका उत्तर दिया : "जल्ला जलालहू !"—उसकी महत्ता महानतर हो।

आदमखाँने आगे बढ़कर निवेदन किया, "मैं अपने गुनाहोंकी माफ़ी चाहता हूँ।"

"हूँ !" कहते हुए अकबरने आगेका कार्यक्रम शांत वाणीमें बताया : "कल सुबह हम मालवासे कूच कर देंगे। दा अम्मी भी और तुम भी, आदमखाँ। सुलतानकी बंदी बेगमें हमारे साथ जायेंगी।"

× × ×

अकबरके हृदयका उत्ताप इस प्रकार दबा, जैसे दावानल भीतर-ही-भीतर घुट गया हो। अगले दिन राजधानीके लिए कूच बोल दिया गया। उसे अब भारी थकान अनुभव हो रही थी। अपने दो विश्वासी अंगरक्षकोंके साथ वह थकानसे चूर, घोड़ेकी पीठपर बैठा, सब सेनाओंके पीछे चल रहा था।

सुबहकी मंद वायु चल रही थी। कहीं हरियाली, कहीं बिलकुल ऊसर, किसी योद्धाके फैले हुए घावोंकी तरह चारों ओर दृष्टिगोचर होते थे। यही भूमि थी जो इतने दुःखांत ढंगसे विजय की गई थी ! हरियालीके हिलने-जुलने और मालवाके पठारपर घोड़ोंकी टापोंकी टपटपसे उत्पन्न ध्वनिके अतिरिक्त कहीं कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ रही थी।

दूर किसीके कंठसे मालवाका मीठा लोकगीत उठा। अन्यमनस्क अकबरने सिर उठाकर इधर-उधर देखा। किंतु आवाज़ सेनाओंकी ओरसे नहीं आ रही थी। उसने फिर सिर नीचा कर लिया।

कुछ क्षण पश्चात् गीतमें भरा दर्द और स्पष्ट हो उठा।

"कौन गा रहा है ?" अकबरने साथ चलते हुए अंग-रक्षकोंमेंसे एक से पूछा।

"शायद मालवाका कोई किसान जनगीत अलाप रहा है, जहाँपनाह," उत्तर मिला।

अकबरने रस लेना शुरू किया। "गीतका क्या अर्थ है ?"

अंगरक्षकने टालनेकी चेष्टा की। "कुछ समझमें नहीं आ रहा है।"

"हमारा ख्याल था तुम कहीं इसी तरफ़के रहनेवाले हो !" अकबर की स्मरणशक्ति अद्भुत थी।

सैनिककी समझ जाग्रत हो गई। "वह जहाँपनाहके सुनने योग्य नहीं है।"

"इसका निर्णय हम करेंगे," अकबरने कहा। "इसका मतलब बयान करो।"

अंगरक्षक मजबूर हो गया। "इसका अर्थ है : देखो तो रूपकी शक्ति ! पक्षियोंका शिकार और मांसका आहार छोड़कर बाज़ भी अब रूपके चारों ओर मँडराने लगा है। अब बाज़ केवल रूपकी उपासना करने लगा है। अरे, रूपके आकर्षणसे कौन बच सकता है ! परंतु देखो तो विधनाका विधान। गिद्धोंके राजाने ईर्ष्या और द्वेषसे पागल होकर रूपका मांस नोच-नोचकर खा लिया। अरे, गिद्धोंका राजा रूपकी महिमाको क्या जाने ! वह तो घृणित मांसका पेटू है। बाज़ तो मोहके पाशमें बँधा हुआ निःशक्त और अचेत पड़ा था। नहीं तो गिद्धोंके राजाकी क्या मजाल थी कि उसकी ओर ताक भी लेता। हाय ! देखो तो बेचारा बाज़ किस प्रकार प्रेमका परिणाम भुगत रहा है। न जाने वह कहाँ मारा-मारा फिरता होगा !"

अकबर सुनते-सुनते बेचैन हो गया। तेज़ीसे उसका घोड़ा उछला और सेनाओंकी पंक्तियोंके बराबर सरपट दौड़ता हुआ सबसे आगे पहुँचा। अंगरक्षक पीछे-पीछे घोड़े दौड़ाते हुए गये। अकबरने आदमखाँको आज्ञा दी।

"सेनाओंको तीव्र वेगसे चलनेका हुक्म दिया जाये। मावदौलत कल शामसे पहले राजधानी पहुँचना चाहते हैं।"

तुरही ज़ोरसे बज उठी। वेगने वेगको दबा लिया।

× × ×

शाही सुरक्षामें आई पराजित सुलतानकी शेष बेगमें अकबरके हरमको सौंप दी गई। किंतु यहाँ भी आदमखाँ अजेय रहा। खानसामाने शाहंशाह-की सेवामें समाचार पहुँचाया : "सूचीके अनुसार उनमेंसे दो महिलाएँ कम हैं।"

आज्ञा हुई : "आदमखाँको हाज़िर किया जाये।"

आज्ञापालनमें थोड़ा-सा सकारण विलंब हुआ। अकबर क्रोधी स्वभाव-का नहीं था, किंतु कई दिनोंसे एक ही पात्रको लेकर ऐसे ही कारण उपस्थित हो रहे थे। इतनी देरमें उसका कभी-कभी भीषण रूपसे भड़क उठनेवाला क्रोध तीव्र हो चुका था।

आदमखाँ उपस्थित हुआ। शाही सम्मानमें फ़रश चूमनेके लिए उसके लंबे-चौड़े शरीरके झुकनेसे उसके पीछे आकर खड़ी हुई माहम अनगका आकार दृष्टिगोचर हुआ।

"आप!" अकबर चिहुँका। साथ ही उसने तीव्र स्वरमें आदमखाँको संबोधित किया, "आदमखाँ, मालवासे आई महिलाओंमें दो बेगमें कम हैं। वे कहाँ हैं?"

"उम्मीद है जहाँपनाह इसमें भी इस दासका कोई बुरा इरादा नहीं समझेंगे," उसका उत्तर था।

"हम तुम्हारी ओरसे बुरे इरादे समझनेके लिए उधार खाये नहीं बैठे हैं।" अकबरका स्वर और भी कड़ा हुआ। जैसे वह अपने पास माहम तथा खानसामाकी उपस्थितिको भूल गया हो। "शाही सुरक्षामें आये बंदियोंकी ज़िम्मेदारी तुम्हारे सिर पर थी। यदि सूर्यास्तसे पहले दोनों खोई हुई रमणियाँ प्रकाशमें न आईं तो, आदमखाँ, तुमने कभी आकाशमें, बाँसके ऊपर वजन तौलते हुए नटको धरती पर गिरते देखा है?"

तभी खानसामाको लक्ष्य करके माहमका प्रताड़ित स्वर सुन पड़ा : "आप खड़े-खड़े क्या देख रहे हैं? यहाँसे चले जाइये!"

स्पष्ट था कि शाही परिवारके सबसे उच्च व्यक्तिका अपमान एक निम्नतर पदाधिकारीके सम्मुख होना सर्वोच्च अधिकारसुख भोगती आई माहमके लिए नितांत अवांच्छनीय था।

खानसामा चले गये। पीछे अकबरने आदमखाँको भी आज्ञा दी, "तुम भी जाओ!" और वह भी वहाँसे प्रस्थान कर गया।

अब अकबरकी दृष्टि माहमकी ओर गई। वह अपनी श्वेत ओढ़नीके पल्लेसे नेत्रोंमें आये आँसुओंकी दो बूंदें पोंछ रही थी। उसने तनिक भीगे हुए स्वरमें कहा :

"दासी शहंशाहकी सेवामें इसलिए उपस्थित हुई है कि उसे मक्का शरीफ़ भेजनेकी कृपा की जाये।"

माहमके हस्तक्षेपकी उपरोक्त छोटी-सी घटनाने अकबरके क्रोधमें पानी-का काम किया था। वैसे भी वह अब जिस स्त्रीके सम्मुख था वह उसके हृदयमें प्रज्वलित स्नेह और सम्मानकी जीवित प्रतिमा थी। मक्का शरीफ़ जानेका आग्रह माहमकी ओरसे अकबरके लिए सबसे बड़ी धमकी थी। इसके पीछे विगत, विशाल व्यक्तित्व, बैरमखाँको लिखे गये कृतघ्नताभरे पत्रके वे शब्द छिपे थे : 'मक्का शरीफ़ चले जाइये, जिसके लिए आप इतने दिनोंसे लालायित थे!'

अकबर विचलित हो उठा। "क्यों, दा अम्मी, क्या हमारी वजहसे? हमसे भूलें भी हो जाती हैं, और जब भी वे होती हैं, हम उन्हें स्वीकार करनेमें अपना गौरव समझते हैं।"

"जब प्रजासे भूल हो जाती है, उसे बादशाहसे दंड मिलता है, और भूलका परिमार्जन हो जाता है," माहमने दुखित मुद्रामें उत्तर दिया। "लेकिन जब बादशाहोंसे भूलें हो जाती हैं, उनका परिमार्जन नहीं होता; कुछ व्यक्तित्व लोप हो जाते हैं और लिखे जानेवाले इतिहासके लेख बदल जाते हैं। जो सदा जन्नतनशीन हज़रत हुमायूंकी स्नेहभाजन रही है, अपनी गोदीमें खिलाये उन्हींके उत्तराधिकारीकी ओरसे इस प्रकारकी भूलें उसे

इतिहासके पृष्ठोंपर काला बनाकर खड़ा कर देंगी। पैगंबरके स्थानपर बैठकर हम सदा उन सेवकों और ग़ुलामोंकी नज़रोंसे दूर रहेंगे, जिनके सामने हमेशा अपमानित होनेका भय बना रहता है। माहमको मक्का शरीफ़की यात्रा करनेकी अनुमति दी जाये।"

माहम बारीक किंतु दृढ़ सोनेके तारकी तरह अकबरके चारों ओर कसती जा रही थी। उसने केवल इतना कहा, "दा अम्मी, हमें सोचनेका अवसर दें।"

माहमने निम्नतर दासीकी तरह झुककर दूसरी ओर निहारते हुए अकबरको अभिवादन किया और धीमे पगोंसे वहाँसे चली गई।

× × ×

खोई हुई बेगमें शाम तक मिल गईं, किंतु उस अवस्थामें जिसमें वे अपराधीको इंगित करके बोल नहीं सकती थीं। विष-द्वारा उनके शरीरोंसे प्राण खींच लिये गये थे।

अकबरके पास जब यह समाचार पहुँचा वह अपने हृदयके द्वंद्वसे पीड़ित हुआ, जमनाकिनारे शाही मनोरंजनके लिए विशेषरूपसे आयोजित हाथियों-का युद्ध देख रहा था। माहम मानो उसके मानसमें बैठी उसे कोंच रही थी।

क्षुब्ध अकबर उसी समय शाही हरमसरामें वापस लौट गया।

वज़ीर कुछ ज़रूरी कागज़ोंपर शाही हस्ताक्षर करानेके लिए शहंशाहके वापस लौटनेकी राह देख रहा था। अकबरसे बालाखानेमें भेंट होते ही उसने प   आगे बढ़ा दिये। देखकर अकबरने पूछा :

"क्या है?"

स्वरका चढ़ाव लक्ष्य करके वज़ीर चौंका। "नित्यका साधारण क्रम है," उसने विनयसे कहा। "शाही दस्तख़तोंके लिए कुछ दस्तावेज़ हैं।"

"दस्तख़त आदमखाँसे कराओ!" अकबर झल्लाते हुए बोला। "वही असली बादशाह है। शतरंज वही खेलता है। हम तो बिसातके

शाह हैं !" अपनी नैतिक विवशताके प्रति उसकी संचित भावना भड़क उठी थी ।

वज़ीरने तुरंत काग़ज़ समेट लिये । "शायद जहाँपनाहके दुश्मनोंकी तबीअत ठीक नहीं है ।"

"नहीं !" अकबर चिल्लाया । "हमारी तबीअत ज़रा भी ख़राब नहीं है । हम आजसे ताज नहीं पहनेंगे । टकसालको शाही फ़रमान पहुँचाओ : आजसे सिक्का आदमख़ाँके नामसे लना शुरू होगा । प्रजामें शाही मनादी कराई जाये : अकबरने सल्तनतकी बागडोर सही मानोंमें हाथमें आनेसे पहले ही उससे हाथ खींच लिया है । आदमख़ाँ इस राज्यका सर्वेसर्वा है ।"

वज़ीर एक क्षण स्तम्भित खड़ा रह गया । विपुल सत्ता और असीम शक्तिके अधिकारी शहंशाह अकबरसे इस प्रकारकी बातें सुनना असाधारण था । वज़ीर केवल तना जानता था कि शहंशाहको जब गुस्सा आता है वह किसीके सिर पर गाज बनकर गिर पड़ता है । आज अकबरको गुस्सा आया था । रोषका पात्र भी पहुँचके भीतर था । किंतु उसके मस्तिष्ककी आँच स्वयं उसे ही फूँक रही थी ।

जिस प्रकारकी आज्ञाएँ अकबरके विशृंखलित मस्तिष्कसे निकली थीं उनका पालन करना संकटको स्वयं बुलावा देना था; न करनेसे भी अनिष्टकी संभावना कम न थी । इस अवसर पर वज़ीरकी तुरतबुद्धिने समस्या की एक बहुत उपयुक्त पूर्त्ति ढूँढ़ निकाली । आदरसहित पीछे हटता हुआ वज़ीर शहंशाहके सामनेसे चला गया ।

उसने सारा उत्तरदायित्व राजमाता हमीदाबानो बेगमके ऊपर डाल दिया । खानसामाके द्वारा समाचार विस्तृत रूपसे हरमसरामें पहुँचाया गया ।

बेगमकी सवारी क़िलेके अंदर-ही-अंदर अकबरकी तत्कालीन उपस्थिति के स्थान तक पहुँची । साथमें माहम अनग भी थी । उसके मुखपर दुबधाके

भाव स्पष्ट रूपसे परिलक्षित हो रहे थे। उसे देखते ही अकबरने होंठोंको प्रसन्नताकी मुद्रामें फैलाते हुए कहा, "दा अम्मी, आपको खुश होना चाहिए। हमने स्वेच्छा और हर्षके साथ आदमखाँको तख्त सौंप दिया है। अब आपकी मक्का शरीफ़ जानेकी ज़रूरत बिलकुल नहीं रह गई है। आपकी ओर जो भी आँखें उठाकर देखेगा, आदमखाँ उसकी आँखें निकाल देंगे।"

अकबरने व्यंग्य नहीं किया था, किंतु माहम करुणासे विजड़ित हो गई। इन अदृश्य तीरोंको रोकनेके लिए उसकी ज़बानसे केवल इतना निकला "जहाँपनाह!"

उसकी ओर देखता हुआ अकबर निश्चल खड़ा हो गया। "कौन कहता है कि हम जहाँपनाह हैं? हम अपनी जिस प्रजाको पनाह देना चाहते हैं, वह बच नहीं सकती। उसकी हत्या कर दी जाती है। इसके लिए जो अपराधी है, हम उसे जानते हुए भी सजा नहीं दे सकते, क्योंकि उससे हमारी दा अम्मी-का अपमान होता है! हम किसीका अनादर नहीं करना चाहते, किसीको तकलीफ़ देना नहीं चाहते। हम तो खुद उस बेइज्ज़ती और तकलीफ़से बचना चाहते हैं, जो हमें शिकारीके पीछे दौड़नेसे मिल रही है। हमें किसीसे ईर्ष्या या द्वेष नहीं है, दा अम्मी। जब आपका बेटा तख्त पर बैठेगा, हम खुशी और ईमानदारीसे तालियाँ बजायँगे।"

साहसी और सबल अकबरका चेहरा आत्मगौरवसे खिल उठा।

स्त्री होनेके नाते बेगम हमीदाबानो ही माहमकी स्थितिको समझ सकीं। माहमके आगे आकर उन्होंने कहा, "तलवारोंसे जीता हुआ खेल भावनाओंसे नहीं हारा जाता, जलाल। पालेपर खेलनेवाले खिलाड़ीको बीचमें और बीचमें खेलने वाले खिलाड़ीको पालेपर खड़ाकर देनेसे घोड़े बहक जाते ह। आदमखाँका व्यक्तित्व महत्त्वपूर्ण है, इससे आँखें नहीं मींची जा सकतीं। लकिन वह पालेपर नहीं खेल सकता। सारे अमीरउमरा व ओहदेदार बिगड़ खड़े होंगे।"

"हम भी पाले पर खड़े-खड़े उकता गये हैं, अम्मीजान," अकबर चहल-

क़दमी करते हुए बोला। एक गहरी साँस खींचते हुए उसने कहा, "हम तक गेंद ही नहीं आती !"

विचलित माहमने फिर कुछ कहना चाहा, "लेकिन शहंशाह जलालुद्दीन. ."

अकबर झरोखेके पास जाकर खड़ा हो गया था। ऊपरसे क़िलके बाहर एक ओर फैली हुई आगरेकी विस्तृत बस्ती तथा दूसरी ओर हरेभरे मैदानोंमें साँपकी तरह बल खाती हुई जमनाकी काली रेखा दृष्टिगोचर हो रही थी। महलके बाहर अकबरके प्रिय कबूतरोंकी अटारी थी और ऊपर आकाशमें एक स्वच्छंद विहग पंख फैलाये उड़ा चला जा रहा था। उस ओर ध्यानसे देखते हुए अकबरने माहमकी बात बीचमें ही काट दी :

"हमारा निश्चय अटल है। उसको केवल खुदा ही बदल सकता है। उसके अतिरिक्त हम किसीपर विश्वास नहीं करते। हम शांति और एकांत चाहते हैं।"

माहम अनग और हमीदाबानो एक साथ कक्षसे बाहर हो गईं।

× × ×

उत्सुक वज़ीर नीचेकी बारहदरीमें अपने हृदयकी गतिके अनुकूल, दोनों सम्मानित महिलाओंकी प्रतीक्षामें, जल्दी-जल्दी चहलक़दमी कर रहा था। इतनी जल्दी उन्हें नीचे आते देखकर उसने विस्मयसे पूछा, "क्या हुआ ?"

बेगम े निराशासे सिर हिलाया।

"आज्ञा हो तो कुछ निवेदन करूँ ?" पीछे-पीछे चलते हुए वज़ीरने कहा। आज्ञा मिल गई।

वज़ीरने एक नवीन प्रस्ताव रखा : "शहशाहको हाथियोंका युद्ध देखना ब त प्रिय है। शाही हाथी हवाई और रणबाधके युद्धकी व्यवस्था करनेपर संभव है शहंशाहका ध्यान बँटाया जा सके।"

हवाई पराजित व हत सेनापति हेमूकी सवारीमें था। संभव है उसके रणकौशलसे अकबरको उस गौरवपूर्ण और खूँख्वार युद्धका स्मरण हो आये, जिसे जीतकर ही उसने अपने पूर्वजोंका स्वप्न पूर्ण किया था। आज वही साम्राज्य वह अपनी भावनाओंसे लुटाने जा रहा था। प्रस्तावका सहर्ष स्वागत हुआ।

इससे पहले कि अकबर अपनी दी गई आज्ञाओंके बारेमें सचेत हो, महावतोंको युद्धका प्रबंध तुरंत करनेकी आज्ञा दी गई। हाथी किसी भी प्रकार युद्धसे मुँह न मोड़ें, स्थितिकी जटिलताके अनुसार यह चेतावनी भी उन्हें दे दी गई।

कुछ समय बाद अकबरको सूचना दी गई : "हवाई मतवाला होकर अपने आप रणबावसे लड़नेके लिए युद्धके घेरेमें पहुँच गया है।"

दोनों हाथी प्रसिद्ध व प्रकाण्ड योद्धा थे। उन्होंने अपनी इच्छासे ही यद्ध ठान लिया है, यह सु-समाचार कम उत्साहप्रद नहीं था। वह तेज़ीसे जीना उतरा और मंचकी दिशामें दौड़ा। राहमें ही उसे रोककर वज़ीरने अपना घोड़ा पेश किया।

लेकिन जोशसे भरा अकबर जिस समय मंच तक पहुँचा वहाँ और ही गुल खिला हुआ था। मंच खाली था, भयानक शोर मचा हुआ था और कोई हाथीका बच्चा भी दिखाई नहीं पड़ रहा था।

चारों ओर देखकर अकबर चिल्लाया, "यहाँ क्या हो रहा है?"

घबराया हुआ शाही महावत बादशाहके निकट आया। "जहाँपनाह, गज़ब हो गया! हवाई भीषण रूपसे रणबाघका पीछा करता हुआ बस्तीमें घुस गया है।"

यह खबर सच थी। जो चीज़ छिपा ली गई थी वह यह कि महावतोंने, असफल हो जानेके भयसे, हाथियोंको मात्रासे बहुत अधिक मद्यपान करा दिया था।

सबके देखते-देखते अकबरका घोड़ा आगरा शहरकी ओर ओझल हो गया। सेवक और सैनिक, घुड़सवार व दर्शक, बेतहाशा नगरकी ओर दौड़ पड़े।

वहाँकी दशा देखते ही लोगोंके प्राण कंठमें अटक गये। एक सैनिक हरमसराकी ओर समाचार लेकर दौड़ा। अकबर भयानक रूपसे नशेमें पागल रणबावपर चढ़ गया था, और जो सामने आता उसे तोड़ता-फोड़ता हवाई हवाकी तेज़ीसे रणबाघका पीछा करता हुआ, बस्तीसे निकलकर जमना की ओर भागा जा रहा था।

जमनाके नावोंके बने कच्चे पुलपर दोनों मस्त हाथी आगे-पीछे दौड़ रहे थे। पुल टूटनेके लिए बुरी तरह झोंके खा रहा था। इधर-उधर सैकड़ों सैनिक आवश्यकता पड़नेपर सहायताके लिए तेज़ीसे तैरकर धारा पार कर रहे थे। बहुत पीछेकी ओर भागती हुई, भीड़के व्यक्तियोंकी ओटसे, शाही हरमसराकी चमकदार पीनसें झिलमला रही थीं।

फिर भारी शोर मचा। कोई चिल्लाया : "हा! शाहंशाह रणबाघकी पीठपर से हवाईके माथेपर कूद गये हैं!"

स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि अकबर अपने प्राणोंपर खेल रहा था। वज़ीरका चेहरा फक पड़ा हुआ था। जिस उद्देश्यको लेकर इस अपूर्व रंजन-का आयोजन हुआ था, वह उसे कभीका भूल चुका था। अब क्या होगा—केवल यही एक बात उसके मस्तिष्कमें कौंध रही थी। तभी उसने आश्चर्य और प्रसन्नतासे उत्पन्न चीख बड़े ज़ोरोंसे गलेसे बाहर निकालते हुए देखा कि संकट टल गया था।

हवाई क़ाबूमें आ गया था और रणबाघको नशेमें भागनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझ रहा था।

शांत होकर स्थिर खड़े हाथीके पास जाकर वज़ीरने शहंशाहसे प्रार्थना की कि अब वह नीचे उतर आएँ। प्रसन्न मनसे अकबर मस्त होता हुआ बोला :

"ख़ुदाने हमें बचा लिया !"

"जहाँपनाहने तो हम सबको बरबाद करनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी थी !" वज़ीरने नम्रतासे उलाहना दिया ।

"ओह !" अकबरने कहा, "हमने यह साहसिक चेष्टा इसलिए की थी कि ख़ुदा अगर नहीं चाहता कि हम जीवित रहें, तो वह हमारे जीवनका अंत कर दे । लेकिन ख़ुदा वह नहीं चाहता, जो हम चाहते थे ।"

वार्त्तालापसे अकबर फिर अपनी पूर्व मानसिक स्थितिकी ओर लौटता प्रतीत हो रहा था कि बुद्धिमान व्यक्तिने अवसर पकड़ा, "इसीलिए कि ख़ुदा ज़िंदगीसे भागनेवालेको पनाह नहीं देता । समस्याओंको दृढ़तासे हल करना ही व्यक्तिका कर्त्तव्य है । ख़ुदा इसलिए जहाँपनाहकी जान लेना नहीं चाहता कि उसकी इच्छा कम-से-कम आधी सदी तक शहंशाह सलामतकी हुकूमत हिंदुस्तानपर बरक़रार रखनेकी है ।"

"शाबाश ! तुम ठीक कहते हो ।" अकबर जैसे समस्त द्वंद्वसे छुटकारा पाते हुए उठा । वह लौटा, किंतु दीनताकी ओर नहीं, दृढ़ताकी ओर । "लेकिन दा अम्मी ? आदमख़ाँ ?" केवल ये ही प्रश्न शेष थे जो उसके मुँहसे अनायास ही निकल पड़े ।

वज़ीरने शाबाशी ग्रहण करनेके लिए गरदन झुकाई । "राजनीति वैयक्तिक भावनाओंका खेल नहीं है, जहाँपनाह । व्यक्तियोंका आकर चले जाना ही राजनीतिके लिए शुभ है ।"

"अल्लाहो अकबर !" शाहंशाहने प्रसन्नतासे नाद किया । "आदमखाँ-के लिए दी गई सभी शाही आज्ञाएँ वापस ले ली जाएँ । वह और दा माहम वैभव और विलासके साथ रहें । सल्तनतके उच्छृंखल घोड़ेकी लगाम मावदौलत अपने हाथोंमें लेंगे और तुम. . .ऐ अक्लमंद आदमी !" अकबर उस व्यक्तिकी ओर देखकर मुसकराया । "उस घोड़ेका सईस तुम्हें मुकर्रर किया जाता है ।"

वज़ीरका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा । उसने झुककर विनय की, "जहाँ-पनाहकी जैसी इच्छा ।"

आदमख़ाँसे संबधित आज्ञाएँ अभी आगे बढ़ाई ही नहीं गई थीं । आज्ञाकारी सेवककी भाँति वह यह समाचार सुनानेके लिए पीछे निकटतर होती हुई पीनसोंकी ओर घोड़ा मोड़कर दौड़ गया ।

इतिहासमें काबुलसे नये-नये आये इस व्यक्तिका परिचय शम्सुद्दीन ख़ान अतगके नामसे दिया जाता है, जिसने अकबरके उपरोक्त निश्चयके बाद राजनीति, राजस्व तथा सेनाके विभाग, सर्वोच्च अधिकारी सदर-ए-सदरके पदसे, अपने हाथोंमें लिये ।

× × ×

इसके बाद आदमख़ाँके पतनकी कहानी बहुत संक्षिप्त है ।

अकबर द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री शम्सुद्दीन अतग अपने पदारोहणके पश्चात् लगभग सात महीने जीवित रहा । अपने अपमान और पतनसे क्षुब्ध आदमख़ाँ एक दिन अपने सैनिक लिये उसके विशाल कार्यालयमें घुस पड़ा और उसके आदरपूर्वक शुभागमन करते हुये शब्दोंकी परवा न करके उसने दो अनुचरोंको निश्चित इशारा किया । वह बचनेके लिए भागा और हत्या पर उतारू आदमख़ाँके सैनिक उसके ीछे दौड़े । बाहर दालानमें उन्होंने उस निरीह और शांत व्यक्तिके टुकड़े-टुकड़े कर दिये ।

अभी ससे भी बड़ी हत्या पर उतारू आदमख़ाँ साथ ही सटे हुए उस कक्षकी ओर बढ़ा, जहाँ अकबर सो रहा था ।

अंगरक्षक प्रहरीने संकटका पूर्वाभास पाकर, अंदर घुसकर द्वारका मूसला ठोंक लिया । शहंशाहको सोते से जगाकर दुर्घटनाकी विस्तृत सूचना दे दी गई ।

दूसरे द्वारसे अकबर हाथमें तलवार लिये बाहर निकला । आदमख़ाँ नंगा खड्ग लिये हुए खड़ा था ।

"यह क्या बदमाशी है !" अकबर चिल्लाया। "दा अम्मी क्या कहेंगी, आदमखाँ ! छिः छिः ! इतना नीच कर्म ! हाथसे हथियार छोड़ दो।"

इस बार आदमखाँ अपने अब तक किये समस्त दुष्कृत्योंकी सीमा पार कर गया। उसने आगे बढ़कर अकबरका दायाँ हाथ थाम लिया।

मनमें छाई अगाध भूलभुलैयोंसे निकलनेके लिए किसी भारी विस्फोट की ज़रूरत होती है। अकबरने आगबबूला होकर अपने बायें हाथका घूँसा आदमखाँके मुँह पर मारा। वह अचेत होकर भूमि पर लोट गया।

"इस आदमीको अभी बाँधकर अटारीसे नीचे गिरा दो !" उसने चिल्लाकर पास खड़े सैनिकोंको आज्ञा दी।

सैनिक आदमखाँके साथ आये थे। उन्होंने ठिठकते हुए आदमखाँको उठाया कि फिर शहंशाहकी गरज सुनाई पड़ी: "जल्दी करो !"

आदमखाँको बाँधकर अटारीसे नीचे फेंक दिया गया। निश्चिन्त होनेके लिए अकबरने उसे उठवाकर मँगवाया। सेवकोंकी हिचकिचाहटके कारण वह अभी तक सिसक रहा था।

"दोबारा गिराओ !" अकबरने आज्ञा दी। "इस बार सिर नीचेकी ओर करके—जल्दी करो !"

और इस बार आदमखाँका भेजा टुकड़े-टुकड़े होकर छितरा गया।

अपनी आँखोंसे आदमखाँका संपूर्ण अंत देखकर अकबर अपने मानसमें बच रही शेष हलचलकी पात्रीके सम्मुख उपस्थित होनेके लिए हरमसराकी ओर चला। धीमे पगोंसे जाकर वह त्रस्त व रोगिणी माहमके छपरखटके निकट अपराधीकी मुद्रामें खड़ा हो गया।

माहम तक पहले ही कुछ भनक पहुँच चुकी थी। उसने अकबरकी आँखोंमें अपनी बुझीसी आँखें डालते हुए पूछा, "क्या बात हुई ? आदमखाँ-ने कुछ किया है ?"

अस्पष्ट भावसे अकबरने बताया, "कुछ नहीं, दा अम्मी—आदमखाँने हमारे एक मंत्रीको मार डाला है। हमने उसे सजा दे दी।"

"आपने ठीक किया," माहम कष्टसे कराहती हुई बोली।

बादमें माहमके सिरपर उस समय हज़ारों घूँसोंकी चोट लगी, जब उसे दुर्घटनाका पूर्ण वृत्तान्त ज्ञात हुआ। "कैसे?" वह चिल्लाई। "अरे, आदमखाँ कैसे मर गया?" उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसका लंबातड़ंगा युवा पुत्र, हिंदुस्तानके शहंशाह अकबरका धाय-भाई, अकाल मृत्युका भागी बन सकता था।

"हमें पता नहीं, बेगम साहबा," सूचना देने वालोंने कहा। "किंतु उसका मुँह किसी मुग्दरकी चोटसे सूजा हुआ था।" यह निशान अकबरके घूँसेका था, जिसका पता माहमको कभी नहीं चल सका। जाँच पड़ताल करनेकी शक्ति उसमें शेष नहीं थी।

वह ऊपरसे शांत हो गई, किंतु उसके हृदयकी अग्निने उसे फिर केवल [illegible]। इसके बाद अकबर इस अतीव दृढ़ मानुषिक उलझनसे सदैवके लिए स्वतंत्र हो गया।

क़ुतुबमीनारके सामने एक भव्य भवन बनवाकर माहम अनगको उसके पुत्रके पास दफ़ना दिया गया। इस इमारतका अस्तित्व आज भी अकबरके मनकी उस महती उलझनकी कहानी बड़े मार्मिक ढंगसे सुना रहा है।

पानका ग़ुलाम

व्यक्ति कभी-कभी अपनी छायासे भी डरने लगता है। इसे केवल कायरता कहनेसे काम नहीं चल सकता। अवसर आते हैं जब वह मजबूर हो जाता है, भागता है; किन्तु छाया कहीं पीछा छोड़ती है !

आगरेके क़िलेके शाही बुर्जपर एक सुन्दर स्तंभके सहारे खड़ा अकबर यमुनाका सुन्दर दृश्य देख रहा था। अकेला अविश्रांत अकबर; उसके गत जीवनकी उथल-पुथल मानो यमुनाके जलमें प्रतिबिंबित हो रही थी। दूर-दूरतक शाही महलोंकी मीनारें दिखाई दे रही थीं। शाही मस्जिदका ऊँचा गुम्बद, स्थिर और चुपचाप, अपना सिर विजेताकी भाँति उठाये ख़ड़ा था और उसका सौंदर्य उसकी गोल चिकनाई पर चाँदनीकी आभा के साथ रह-रहकर फिसला पड़ता था। अकबरसे दूर, पीछेकी ओर, ग़ुलाम भाला कंधेपर रखे आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहा था।

अकबरने पुकारा, "पान !"

ग़ुलामने एक और ग़ुलामको मूँहपर अँगुलियाँ ले जाकर इशारा किया।

थोड़ी देरमें सोनेकी तश्तरी दोनों हाथोंपर रखकर ग़ुलामने प्रस्तुत कीं। ढक्कन उलटकर अकबरने एकबार बीड़ेकी ओर देखा, फिर ग़ुलामके मुँहकी ओर।

सहमकर ग़ुलामने विनय की, "जहाँपनाह, पानके ग़ुलामका देहांत हो जानेके कारण प्रधान बेगमने यह बीड़ा स्वयं अपने हाथों बनाया है।"

अकबरने बीड़ा ले लिया। आज्ञा हुई, "पानका ग़ुलाम जल्दी नियुक्त किया जाय !"

ग़ुलामने सिर झुका लिया और आदरसे पीछे हट गया।

× × ×

ख़ानसामाने चाल चलनेके लिए पत्ता ऊपर उठाया। ग़ुलाम सादिक़ने चेतावनी दी, "ख़बरदार, ख़ानसामा, बादशाहको कष्ट न दीजिए, मैं इक्का मारूँगा!"

घड़ियाँ गुज़र गई थीं। दस्तरख़ानका भारी काम ख़तम हो चुका था और दास-दासियाँ निश्चिंत होकर आमोद-प्रमोदमें लीन थे। अकबरके शयनकक्षसे एक आवाज़के फ़ासलेपर, तिदरीमें बैठे, खाने-पीने और घरेलू कामकाजके प्रधान दारोग़ा, खानसामा, अपने नीचे काम करनेवाले ग़ुलाम सादिक़के साथ गंजीफ़ा खेल रहे थे।

ग़ुलाम सादिक़ने अपनी चेतावनीके प्रमाणस्वरूप पानका इक्का उलट-कर ख़ानसामाको दिखा दिया। ख़ानसामाने कहा, "अबे, तेरे बापदादोंने भी कभी गंजीफ़ा खेला है? दुश्मनको पहले ही ख़बरदार करता है!"

ग़ुलाम सादिक़ हँसा। "ख़ानसामा, मेरा बाप पनवाड़ी था। लोग पान खाने आते थे, तो उसे गंजीफ़ेकी अजीब चाल चलते देख वहींपर ठहर जाते थे। 'गंजीफ़ेका राजा' उसका नाम मशहूर हो चुका था। चाहता तो बिना पान ढोये भी वह ऐश करता और लोग शागिर्द बन-बनकर उसके दरवाज़ेपर अपनी क़ब्रें खुदवा लेते...आपने क्या चला?"

"और बेटा ऐसा कि पहले ही ख़बर दे रहा है—'बादशाह न चलिए, मेरे पास इक्का है!" ख़ानसामाने पत्ता चला।

"उस्ताद, बादशाह ख़ुदाका प्रतिनिधि होता है। उसकी पदवी पवित्र है। यह बात दिमाग़में रखते हुए भी मेरा बाप गंजीफ़ेमें उस्तादोंके छक्के छुड़ा देता था...अरे, आपने आख़िर बादशाह ही चला!" सादिक़ने इक्का दे मारा।

ख़ानसामा एक बार चौंके। "अबे, तेरा बाप तो पनवाड़ी था!"

"और मैं आपसे इतनी देरसे कह क्या रहा था?" सादिक़ने कहा।

"तो तू पान बनाना जानता होगा?" ख़ानसामाने पूछा।

"अमीरोंके बीड़े अब्बा मुझसे ही लगवाते थे...और यह रहा पानका ग़ुलाम। तुरपें सब निकल चुकी हैं, बेगम मेरे पास है। ग़ुलाम बेश है।" सादिक़ने पानका ग़ुलाम सामने रख दिया।

"जियो!" ख़ानसामाने कहा, "हम तुम्हें बादशाह सलामतके ख़ास-उल-ख़ास पानके गुलामकी जगह नियत करते हैं।"

अकबरके शयनकक्षके बाहरसे प्रहरीकी पुकार हुई, "पान!"

ख़ानसामाने कहा, "फ़ौरन बीड़ा ले जाओ, सादिक़। इस वक़्त जहाँपनाह एकांतमें हैं। कुछ ले मरोगे।"

पानका बीड़ा बनाकर, सादिक़ सोनेकी तश्तरी लेकर चला गया। लौटकर आया, तो उसके हाथमें चमचमाते सोनेकी एक अशरफ़ी थी। उसने ख़ानसामाको आह्लादसे वह अशरफ़ी दिखाई।

ख़ानसामाने कहा, "मुबारक हो! बैठो, मैं चाल चलता हूँ।" पानके गुलामके ऊपर ख़ानसामाने तुरपका इक्का चल दिया।

सादिक़ आँखें फाड़े उसे देखता रह गया। घटना बहुत साधारण थी। लेकिन उसका बाप इन्हीं चालोंसे सट्टेके हिंदसे बता दिया करता था। पानके गुलामके ऊपर ख़ानसामाका तुरपका इक्का! कहीं यह साधारण घटना सत्यमें परिवर्तित न हो जाए!

उसने बने हुए हाथोंकी गड्डीकी ओर देखा। वह ठीक मालूम हो रही थी। ख़ानसामाके ऊपर संदेहात्मक दृष्टि डाली। उनकी आँखें चमक रही थीं। सादिक़ बहुत देरतक इसे केवल वहम समझकर टालनेका प्रयत्न करता रहा। उसके मनमें भय बैठता जा रहा था। उसकी नई नियुक्तिका यह प्रारंभ किसी प्रकार भी शुभ नहीं था।

× × ×

"दीनेइलाही—हूँ!" आगरेके माने हुए बड़े मौलवी, जिनके नामका भी बहुतोंको पता नहीं था, मस्जिदकी बारहदरीमें चहकते हुए घूम रहे थे। उनके सामने एक तरफ़ ख़ानसामा मृत-प्रायःसे बैठे थे। मौलवी साहबने फिर कहा, "शहंशाहका दिमाग़ ख़राब हो गया है। इतने बड़े पापीको नरकमें भी जगह मिल सकेगी मुझे इसमें संदेह है। इस पापको ख़तम करना ही ख़ुदाके हुजूरमें सबसे बड़ा पुण्य है।"

"मुझे जो आज्ञा हो?" ख़ानसामाने मन-ही-मन अल्लाहको याद किया।

मौलवी साहबने अभी और शह दी, "जानते हो क्या होगा ? मस्जिदों-को आनेवाली भारी शाही ख़ैरात बंद हो जायगी । मौलवी और विद्वान् ख़ुदाकी पूजासे विरक्त होकर सड़कोंकी धूल चाटा करेंगे । ज़रा कल्पनासे काम लो । स्वार्थी होकर यह पवित्र व्यक्ति पूजाके लिए नियत ख़ुदाके पवित्र नामका वास्ता देकर भीख माँगा करेंगे । ओह, मैं तो इसका विचार तक नहीं कर सकता ।"

खानसामाके रोंगटे खड़े हो गये । वह फिर विनयसे बोले, "मुझे जो आज्ञा हो. . ."

बीचमें ही बात काटकर मौलवी साहबने नुस्खा छाँट दिया, "सिर्फ़ एक इलाज है—किसी भी सूरतसे पापीको ज़हर. . ."

खानसामा सिहर गये । "लेकिन यह मैं कैसे कर सकता हूँ ! ड्योढ़ी-वान एक-एक चीज़ चीखकर बावरचीखानेमें जाने देता है । घुसनेसे पहले हर छोटे-बड़ेकी तलाशी होती है । शाही दस्तरखान तैयार होनेपर मेरी ज़िम्मेदारी है कि मैं उसकी एक-एक चीज़ पहले अपनी ज़बानपर रखूँ और तबतक उसका पहरा देता रहूँ जबतक कि जहाँपनाह सैकड़ों दरबारियोंके साथ तशरीफ़ लाकर उसे हज़म तक नहीं कर लेते ? कुछ भी होनेसे पहले स्वयं मेरी जानको खतरा है । जब मैं ही मर जाऊँगा, तो आप ही बताएँ, ख़ुदावंद, मैं पुण्य किसके लिए कमाऊँ ?"

"पानके बीड़ोंपर जो ग़ुलाम नियत किया हुआ था, सुना है उसका देहांत हो गया ?" मौलवी साहबने अर्थपूर्ण दृष्टिसे ख़ानसामाको ताकते हुए पूछा ।

"जी, हाँ," ख़ानसामाने उत्तर दिया । "उसकी जगह जो दूसरा नियत हुआ है, वह कमबख्त गंजीफ़े तकके बादशाहको ख़ुदाका प्रतिनिधि समझता है !"

"क्या बकते हो !" मौलवी साहबने चहल-क़दमी छोड़कर गरजते हुए कहा । "ख़ुदाके प्रतिनिधि हम हैं कि वह नाशवान् दुनियाका नाचीज़ बादशाह ? ऐ दो दुनियाके मालिक, मुझे पापको सुननेकी शक्ति दे !"

ख़ानसामाने फिर हाथ जोड़कर झुकते हुए कहा, "हज़रत, मुझे आपकी पदवीसे आपत्ति नहीं है। मैं उस पापीका भीतरी हुलिया बयान कर रहा हूँ।"

मौलवी साहब कुछ देरतक चहल-क़दमी करते रहे। फिर उन्होंने धीमेसे कहा, "सुनो, हकीम साहबने हमें यह चूर्ण प्रदान किया है। तुम इसे चखकर देखो।"

ख़ानसामा उनके पैरोंपर गिर पड़े। मौलवी साहब हँसे। "नहीं, नहीं, इस समय यह बिलकुल निर्दोष है। यह हमारे पवित्र हाथोंसे छुआ गया है।"

ख़ानसामाने डरते हुए उसकी एक चुटकी चखी। फिर बोले, "चूना है, लेकिन मुँह नहीं काटता।"

"हूँ! यह हलाहल विष है," मौलवी साहबने कहा। "इतनी-सी देरमें तो यह दस आदमियोंको शैतानके घर भेज देता, अगर इसमें मोतियोंका चूरा भी मिला होता। तुम इसे महलमें ले जा सकते हो। ड्योढ़ीवान इसे पहचानेगा भी नहीं। पकड़ा जानेपर भी यह ज़हर साबित नहीं होगा। अवसर मिलनेपर चुपकेसे वहाँ तुम इसमें मोतियोंका चूरा मिला देना।"

इस चमत्कारके आगे ख़ानसामाने घुटने टेक दिये।

× × ×

दीनेइलाहीके प्रवर्त्तकके पानोंके लिए मोती पीसे जा रहे थे। सादिक़ने पीसते-पीसते इस ओर ध्यानसे देखते हुए ख़ानसामासे कहा, "ख़ानसामा, क्या अजीब चीज़ है! पहले-पहल जब अब्बाने कहा था कि शाही पानोंमें चूनेकी जगह मोती इस्तेमाल होते हैं, तो यक़ीन तक न हुआ था। लेकिन बादमें नवाबोंके लिए मैंने ऐसे कितने ही बीड़े बनाये थे। एक बार किसीने मोतियोंमें ज़हर मिला दिया। लेकिन, उस्ताद, क़समसे कहता हूँ कि मोती सब जहर ख़ुद पी गये और खानेवालेको आँच तक न आई। ए लो, बादशाह सलामतकी पुकार हुई! ख़ानसामा, ज़रा देखते रहिए। मैं अभी आया।"

खानसामा हँसे । सादिक़ चला गया । खानसामाने उसके छोड़े हुए कामको ज़रा देखा ही नहीं, कुछ किया भी ।

दोपहरको दस्तरख़ानपर कुछ रत्नोंके साथ बैठे बादशाह अकबरने निवाला चबाते-चबाते अब्बुलफ़ज़लकी ओर मुँह करके अपनी आदतके अनुसार बात छेड़ी, "हमारा विचार है, फ़ज़ल साहब, धर्मसे उकताये हुए लोग बहुत ज़ल्दी इस नई विचार-धारा दीनेइलाहीका स्वागत करेंगे ।"

अब्बुलफ़ज़लने हाथ रोककर विनय की, "धृष्टता क्षमा करें, जहाँप-नाह । वास्तवमें बात यह है कि कभी-कभी दूसरोंके विचारोंमें हम अपने विचारोंकी छाया देखने लगते हैं । विचार केवल एक दर्पण है, जहाँ अपनी इच्छाके अनुसार अच्छाई या बुराई दिखाई देती है । संभव है, आलीजाहकी इच्छाएँ दूसरोंके विचारोंमें अपने ही विचारोंकी छाया देख रही हों ।"

अकबर उछल पड़ा । "अभी बिलकुल ठीक-ठीक नहीं समझ सके हम । मगर फ़ज़ल साहब, आपने कोई गहरी बात कही है । माबदौलत इसपर ग़ौर करेंगे । बीरबल साहब क्या कहते हैं ?"

बीरबल साहब आज बेमौक़े पकड़े गये थे । शाही दस्तरख़ानके गोश्त और हड्डियोंमें ब्राह्मणके पूतके लिए कोई रस नहीं था और उन्हें बेमतलब दूसरोंका खानापीना देखकर अंदर-ही-अंदर दाँत पीसने पड़ रहे थे । जले-भुने तो थे ही और कबाब हो गये । बोले, "जी हाँ, यह अकिंचन भी देख रहा है कि इस समय जहाँपनाहके विचारोंमें फ़ज़ल साहब अपने विचारोंका रूप नहीं देख रहे हैं और मुझ नाचीज़का विचार तो आलीजाहके विचारके एकदम प्रतिरूप है ।"

बीरबलने यह प्रकट नहीं किया कि उसका विचार अकबरके पहले विचारके प्रतिरूप है या फ़ज़ल साहबको दाद देनेके विचारके । बीरबलको तो दुरंगी बात कहनेकी आदत थी । अब्बुलफ़ज़ल इसे समझकर कुढ़ गये और बादशाह खिल उठे । "बहुत खूब ! वाह ! क्या 'रूप' का प्रयोग किया है! क्या शिष्ट और दोहरी चोट दी है ! बीरबल साहब पुरस्कारके पात्र हैं !"

इंगित पाते ही मीरखज़ानाने हज़ार अशरफ़ी बीरबलको भेंट की। वास्तविक पात्र अब्बुलफ़ज़ल थे। इसलिए वह खिसिया कर हँस दिये। उनके हास्यका तात्पर्य समझकर बादशाहने फिर मीरखज़ानाको संकेत किया।

इसी बीच एक कांड हो गया। पानका ग़ुलाम देरसे पानोंकी तश्तरी लिये मानो एक पैरसे खड़ा था। दस्तरख़ान क़रीब-क़रीब उठ चुका था कि एक लौंडी दौड़ती हुई आई और ख़ानसामाके कानमें धीरेसे बोली, "प्रधान बगमने फ़रमाया है कि मोतियोंके चूरेको दो चीटियाँ सूँघकर मर गईं। उन्हें चूनेपर शक है।"

ख़ानसामा चिहुँके। एकबार उन्होंने कड़ी दृष्टिसे लौंडीकी ओर देखा, लेकिन तुरन्त ही खानेख़ानमका ध्यान आते ही उन्होंने स्थितिकी गंभीरताको समझ लिया। विपत्ति उनके ऊपर घहराया ही चाहती थी। ग़ुलाम सादिक़ अपने बचावके लिए बहुत कुछ कहेगा और प्रकट था कि वह अपनी बुद्धिपर भी ज़ोर देगा।

पानके ग़ुलामको जिस तुरपके इक्केसे आशंका हुई थी, वह गंजीफ़ेमें बंद हो गया था। लेकिन अब जो तुरपका इक्का ख़ानसामाने फेंका, वह उसे न देख सका।

ख़ानसामाने चिल्लाकर कहा, "ऐ पानके ग़ुलाम, मैं तुझे हुक्म देता हूँ कि जो बीड़ा तू बादशाह सलामतके लिए अपने हाथों बनाकर लाया है, उसे ख़ुद खाकर दिखा!"

ग़ुलामने इसका मतलब न समझकर, एकदम चौंकते हुए, पहले क्रोधसे लाल हुए ख़ानसामाकी ओर देखा, फिर भौंचक्केसे खड़े हुए बादशाह, अब्बुलफ़ज़ल और बीरबलकी ओर। एकाएक किसीके बोलनेसे पहले फिर ख़ानसामाकी आवाज़ गूंजी, "फ़ौरन हुक्म पूरा कर!"

बीरबल चिल्लाये, "मुझे इसमें आपत्ति है!" लेकिन इससे पहले ही ग़ुलाम बीड़ा चबा चुका था। उसने इस आज्ञाका मर्म कुछ-कुछ समझते हुए एक बार बादशाह की ओर करुण और जिज्ञासाभरी दृष्टिसे ताका।

तत्क्षण ही उसका बदन ऐंठने लगा। उसकी शून्य दृष्टि फिर खानसामाकी दृष्टिसे मिली और उसके मुँहसे सहसा निकला, "तुरपका इक्का!"

"यह क्या बदतमीज़ी है!" बादशाहने ख़ानसामाकी तरफ़ देखकर पूछा और ग़ुलामके नज़दीक आ गये। ग़ुलाम सादिक़की वही दृष्टि बादशाहकी दृष्टिसे मिली और उसने करुणाकी सजीव मूर्ति बने अंतिम बार केवल इतना कहा, "अपराधीको एक बार सफ़ाईका मौक़ा भी न दिया!"

पानका ग़ुलाम तुरपके इक्केसे सदाके लिए मिट चुका था।

× × ×

हल्दी घाटीकी विभीषिकाको गुज़रे बहुत दिन नहीं हुए थे और अकबरके सामने क़लम और तूलिकासे चित्रित उसके सैकड़ों चित्र अबतक पेश हो चुके थे। वह बादशाह, जिसके आदेशपर लाखों जानें सदा टंगी रहती थीं, आज एक अदना ग़ुलामके इन अंतिम शब्दोंसे मर्माहत हो उठा था : 'अपराधीको एक बार सफ़ाईका मौक़ा भी न दिया!'

दूसरी ओर, मरते हुए ग़ुलामके मुँहसे निकले पहले शब्दों 'तुरपका इक्का' को लेकर बीरबलने उसके सामने एक काफ़ी लंबा-चौड़ा ख्याली महल खड़ा कर दिया था। उसका कहना था कि ज़रूर इस तुरपके इक्केमें कुछ रहस्य है—खानसामाको क्या हक़ था कि उन्होंने अपने-आप ग़ुलामका क़सूर मानकर, बादशाहके सामने ही, उसकी मौतका परवाना दे दिया? न्याय करना काज़ी और बादशाहका काम है, न कि एक खानगी ओहदेदार का।

बीरबलकी उक्तिपर अकबरने कहा, "माबदौलत यह कैसे स्वीकार कर लें कि जो इतने दिनोंसे माबदौलतको इतने लज़ीज़ खाने चखा रहा है, ऐसा करनेमें उसका कोई बुरा इरादा था? बिना बात साफ़ हुए इस तरह ग़ुलामके मर जानेका हमें बेहद अफ़सोस है! ख़ासकर उसके अंतिम शब्दोंने तो जैसे हमारे दिलपर घूँसा मारा हो। ख़ुदा जानता है कि माबदौलत इस दुर्घटनाको बहुत दिनोंतक नहीं भूल सकेंगे। लेकिन

ख़ानसामाने जो कुछ किया, हमारी वफ़ादारीके पक्षमें । इतने लज़ीज़ खाने बनानेवाला विश्वासपात्र व्यक्ति जल्दी नहीं मिलता ।"

अकबरके ऊपर बीरबलने आखिरी नुक़ता कसा, "मालूम होता है, फ़ज़ल साहबने ठीक ही कहा था ।"

बादशाह हँसे । "बीरबल साहब, हम तुम्हारे इस नुक़तेकी क़द्र करते हैं । लेकिन इस बात पर क्योंकि हमारा ग़ौर-औ-खोज चल रहा है, इसलिए निर्णय तक तुम्हारा यह नुक़ता माबदौलतकी नज़रमें रहेगा । संदेहका लाभ हमारे ख़ानसामाको पहुँचेगा ।"

× × ×

अकबरका गुण था कि वह जब एक बातके पीछे पड़ जाता था, उसको इधर या उधर किये बिना न छोड़ता था । अब्बुलफ़ज़लकी बात उसके मनमें गहरी बैठ गई थी : "कभी-कभी दूसरोंके विचारोंमें हम अपने विचारोंकी छाया देखने लगते हैं । विचार केवल एक दर्पण है, जहाँ अपनी इच्छाके अनुसार अच्छाई या बुराई दिखाई देती है ।" ऐसा न हो कि अकबर लोगोंके विचारोंमें अपने विचारोंका प्रतिबिंब देख रहा हो, और जो उसकी इच्छा है उसे ही लोगोंकी इच्छा समझकर वह दीनेइलाहीको उनके ऊपर थोप दे । ऐसा दर्शन मुरदा होगा या अपने चलानेवालेसे पहले ही मर जायगा ।

अकबर वेश बदलकर, रात-बिरात बाहर निकलकर रिआयामें उठता-बैठता, नौकरों-चाकरोंमें घूमता और उनसे उसे अजीब-अजीब बातें सुननेको मिलतीं ।

ख़ानसामा अलग चक्करमें थे । वह जानते थे कि अकबर बड़ा रहस्य-मय व्यक्ति है । भला, कमबख़्तको बीरबलके इस नुक़तेको आगे सोचनेके लिए उठा रखनेकी क्या आवश्यकता थी ? दूसरे शब्दोंमें बीरबलने साफ़ कह दिया था कि आप क्योंकि खानसामाके बनाये खानोंकी सुगंधिके प्रभावमें हैं और आपकी इच्छा यह है कि ख़ानसामाको निरपराध होना ही चाहिए, इसलिए—अब्बुलफ़ज़लके विचारके अनुसार—आपकी इच्छा उसके अपराधी

होनेके विचार पर छाई रहती है। बादशाह इस बातको ज्यों-की-त्यों समझ चुके हैं और आजकल जो इतनी महत्त्वपूर्ण घटना पर कोई भेदिया काम नहीं कर रहा है, इसका अवश्य कोई कारण है। हो न हो, इस तरह वह बीरबलके नुक़्ते को ही सोचते रहते हैं। बुरा हो इन दार्शनिकोंका, जो केवल एक बातसे वातावरणको एकदम बदल देते हैं।

इसके बाद ख़ानसामा प्रायः कुछ सोचतेसे बैठे रह जाते। उन्हें बार-बार अकबरके पास रहनेवाली उस मशहूर और मनहूस संदूकचीका ध्यान आ जाता, जिसमें एक तरफ़ हलाहल ज़हरभरी, बादाम और शहदकी बनी मीठी गोलियाँ और दूसरी ओर सादी सुगंधिसे तर मिठाई रखी रहती है। जिसपर वह बहुत प्रसन्न होता है उसके सामने सादी ओरसे मिठाई प्रस्तुत करता है; और वह अकबरकी असीम कृपाका पात्र हो जाता है। जल्दी ही ऐसे व्यक्तिका रुतबा पंचहज़ारीतक बढ़ जानेकी उम्मीद होती है। जिसपर वह नाराज़ होता है उसे वह दूसरी तरफ़से वही संदूकची पेश करता है, और क्योंकि वह अकबरकी पेश की हुई मिठाईको ग्रहण करनेसे इनकार नहीं कर सकता, इसलिए, तत्क्षण ही उसका मुँह ख़ुशबू और झागोंसे भर जाता है। ख़ानसामाने ऐसे कितने ही व्यक्तियोंको घर जाकर, शाही लिबास उतारते-न-उतारते, बुरी तरह तड़प-तड़पकर मरते देखा था। जब-जब उन्हें अकबरके सामने जानेका इत्तफ़ाक़ होता, उनकी निगाह अदबदाकर उस संदूकचीकी ओर उठ जाती, जिसमें मौत और जिन्दगी एक साथ बैठी हँसती रहती हैं।

ओफ़! अकबर उसकी तरफ़ कैसे देखता है! दस्तरख़ानकी आधी चीज़ें आजकल उसकी लापरवाहीसे बिना चखे पहुँच जाती हैं। खाना चखते-चखते बादशाह सलामत कई बार असाधारण रूपसे उसकी तरफ़ नज़रें फेंककर नापसंद चीज़ें एक तरफ़ सरका चुके हैं। उनकी नज़रोंमें क्या होता है? मानो कह रही हों, 'हम सब समझते हैं! हम अब्बुलफ़ज़लके विचारके महत्त्वको भी जान चुके हैं। हमने बीरबलके नुक़्तेकी गहराईको भी नाप लिया है। हम जल्दी ही उस संदूकचीसे तुम्हें मिठाई पेश क[illegible]गे!

इसके बाद बादशाह निवाला हाथमें लिये, किसी मुसाहबकी बातोंपर हँस पड़ते और खानसामाको अनुभव होता मानो वह उनके सामने वही संदूकची खोलते हुए यह सोच कर हँस रहे हैं कि शायद खानसामाको यह खुशफ़हमी हो कि जल्दी ही उन्हें पंचहज़ारीका बड़ा रुतबा मिलनेवाला है ! शायद इन्हें यह पता नहीं कि इस संदूकचीमें से मौतका शैतान उठकर इनका गला दबोच लेगा और अपने गुनाहके कारण उस वक़्त इनमें इतनी ताक़त भी न होगी कि यह उसकी कसती हुई उँगलियोंको हटानेके लिए अपने गुनहगार हाथोंको ज़रा जुम्बिश भी दे सकें !

वह सिहरकर चौंक उठते और कभी-कभी ऐसा तब भी होता, जबकि बादशाह कुछ हुक्म दे चुके होते और वह उसे पूरा करना तो दूर, सुन तक न पाते । अकबर पूछता, "क्या पानके ग़ुलामके मरनेका तुम्हें भी इतना ही रंज है ? क्या तुम्हारे दिलपर भी उसके अंतिम शब्दोंने कुछ असर किया है ? कोई बात नहीं, यह कुदरती भी है ।"

ओह ! अकबरकी ये बातें दुरंगी हैं । आजतक क्या कोई अकबरके दिलको समझ सका है ? वह मीठी छुरी मारता है । अभी पिछले दिनों मेहरुन्निसाके मामलेमें सलीमको कैसा छकाया ! फिर खानसामा किस गिनतीमें है !

बावरचीखानेका मुलाहज़ा करते वक़्त बादशाह कभी-कभी पूछ बैठते, "पानके ग़ुलामकी जगहके लिए कोई विश्वसनीय आदमी मिला ?" कभी घूमते-घूमते वहाँ रुक जाते, जहाँ ग़ुलाम मरकर गिरा था और खानसामाकी आँखोंमें आँखें डालकर पूछते, "क्यों, खानसामा, कैसी बेगुनाही उस ग़रीबकी आँखोंसे झलक रही थी ! लेकिन सवाल उठता है कि आखिर किसने यह काम किया और कैसे ?" कभी चलते-चलते पूछ बैठते, "क्यों, खानसामा, नौकरों और ग़ुलामोंको तंग करना तो बेमाने होगा ?"

खानसामा इस उत्तर देनेकी इल्लतसे तंग आ गये थे । आखिर यह

मक्कार बादशाह साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देता कि 'पानके गुलामके हत्यारे तुम और सिर्फ़ तुम हो ! तुमने माबदौलतको ज़हरसे हलाक करनेकी कोशिश की थी ।' फिर अपनी संदूकची खोलते हुए कह दे कि 'माबदौलत नहीं चाहते कि खानसामाका यह शरमनाक गुनाह दुनियाके सामने खुले, इसलिए तुम इसमेंसे एक मिठाई उठाकर उसका लुत्फ़ लो !'

खाना चखते समय वह कितनी ही बार लौंडियों द्वारा झकझोर कर चेतन किये जा चुके हैं : "ख़ानसामा, दस्तरख़ानको देर हो रही है ।"

कुछ दिनोंमें ही ख़ानसामा झटक गये । अकबरने उन्हें देखकर कहा, "ख़ानसामा, तुम्हारा चेहरा पीला पड़ गया है । कुछ बीमार मालूम पड़ते हो । तुम्हें फ़ुरसतकी ज़रूरत है । " और ख़ानसामाने सुना, "कुछ तैयार मालूम पड़ते हो । तुम्हें इस दुनियासे रुखसतकी ज़रूरत है !"

वह बेवक़ूफ छोकरा मरते-मरते भी तुरपका इक्का न भूला । अकबर आजकल असाधारण तौरसे बावरचीख़ानेमें कभी भी टपक पड़ता है । मन बहलानेके लिए गंजीफ़ा खेलते हुए ख़ानसामा यह जान भी न पाते कि कब दास-दासियाँ आदरसे दम-ब-खुद हो जाती हैं और ख़ानसामाके पीछेसे अकबर कह उठता है, "ख़ानसामा, बुरे फँसे ! तुम्हारा तुरपका इक्का कहाँ गया ?"

ख़ानसामा ऐसे मौक़े पर बुरी तरह डर जाते । उनसे ठीक तरह आदर भी नहीं हो पाता । ये हरकतें बादशाहकी निगाहोंसे छिपानेमें उन्हें बहुत मुश्किल उठानी पड़ती । अब अकबरकी यह बच्चों जैसी हरकतें बरदाश्तसे बाहर हो चुकी थीं । आखिर इतनी बड़ी हकूमतके बादशाहको गुलामों और नौकरोंके मुँह लगनेकी क्या ज़रूरत है ? जहन्नुममें जाएँ मौलवी साहब और दीनेइलाही !

× × ×

"बड़ी अजीब-अजीब बातें देखनेमें आईं," अकबरने दीवानख़ासमें बैठे हुए अब्बुलफ़ज़लसे कहा । "लोग जहाँ एक तरफ़ दीनेइलाहीसे नफ़रत

ज़ाहिर करते हैं, वहाँ प्रतिनिधि चुन-चुनकर मावदौलतके हुज़ूरमें भेजनेकी कोशिश भी करते हैं, ताकि वे इस नये मज़हबमें अपने-अपने मज़हवकी ज्यादा-से-ज्यादा बातें दाख़िल करा सकें। हम मानते हैं कि हमें आपकी बातका पूरा सबूत नहीं मिला, फ़ज़ल साहब, हालाँकि हमें इसका यक़ीन है।"

लौंडीने दौड़कर आते ही विनय की, "जहाँपनाह, ख़ानसामा ज़हरसे हलाक हो गये हैं!"

बादशाह और दूसरे अमीरउमरा उधर लपके। तिदरीमें ख़ानसामा एक कोनेमें उठँगे पड़े थे। आँखें भयसे खुली हुई थीं। उनके पास एक चूर्ण की पुड़िया थी, जो खुली हुई थी। पान बनानेके लिए शायद उन्होंने मरते-मरते सोनेका शाही पानदान भी खोला था, लेकिन पान उसपर नहीं था। मोतियोंके चूरेकी कुल्हियाँ खुली हुई थीं। पासमें पानीसे आधा भरा हुआ चाँदीका गिलास रखा हुआ था। सबसे आश्चर्यकी बात थी कि गंजीफ़ा चारों ओर इस तरह छितरा हुआ पड़ा था मानो ख़ानसामाने अंतिम समयमें उससे भयंकर द्वंद्व किया हो!

उस पुड़ियाके चूर्णको दूधमें घोलकर एक कुत्तेको पिलाया गया, ताकि यह निश्चय हो सके कि ख़ानसामाने ख़ुदकशी तो नहीं की थी। कुत्ता सब दूध पीकर भी पूँछ हिलाता रहा।

बादशाहने तड़पकर कहा, "आख़िर कौन है वह, जिसने मावदौलतके दो ख़ानगी ओहदेदारोंकी जान ली?"

"मावदौलत नाचीज़की उस बात पर फिर एक बार ग़ौर करें," दो पत्तोंके ऊपरसे मृत ख़ानसामाकी खुली हथेलीको हटाते हुए अब्बुलफ़ज़लने अर्ज़ की।

तुरपके इक्केपर पानका ग़ुलाम, मानो प्रतिशोधकी मुद्रामें, विजयकी प्रसन्नतासे मुसकरा रहा था।